Vol.-13 Issue-50 Jan.-Mar., 2025

CHHAVI

National Journal of Higher Education

ISSN :- 2319-9679 PEER REVIEWED

July 2025

SERIC
BIKANER

Prof. (Dr.) Rajendra Kumar Shrimali

Editor in Chief
09414742973, 09413471252

Published by :-
Shubham Education, Research & Information Centre
B/H KARNI MATA TEMPLE, O/S JASSUSAR GATE, BIKANER-334004, RAJ
E-mail : shrimalidrrajendra@gmail.com Website : www.chhavinjhe.in

CHHAVI National Journal of Higher Education (ISSN : 2319-9679) PEER REVIEWED

OUR REVIEWER BOARD

DR. RANJEET KHINCHI
Educationist, Hindoli, District-Bundi

Sh. P.D. YADAV
Educationist, Neem Ka Thana, Sikar

DR. SANJAY KUMAR VERMA
Educationist, Haryana

DR. ASHOK K. GODARA
Educationist, Jhunjhunu

DR. YOGESHWAR S. YADAV
Educationist, Kotputli-Behror

DR. SUMAN SHARMA
Educationist, Malsisar, Jhunjhunu

AD. ARUN KUMAR
Educationist, Behror

DR. MITHILESH K. SHRIVASTAV
Educationist, Ajmer

राजस्थान सरकार के पूर्व उच्च शिक्षा मंत्री श्रीमान भंवरसिंह भाटी छवि पत्रिका के वेबसाईट का लोकार्पण व त्रैमासिक अंक का विमोचन करते हुए

शुभम एज्युकेशन, रिसर्च एवं इन्फोरमेशन सेन्टर के तत्वावधान में आयोजित विभिन्न कार्यक्रमों की झलकियां

महाराजा गंगासिंह विश्वविद्यालय परिसर, बीकानेर

एन.सी.ई.आर.टी., दिल्ली

शि.सं.उ. न्यास, नई दिल्ली से डॉ. अतुल कोठारी

केन्द्रीय कानून मंत्री श्री अर्जुनरामजी मेघवाल

पूर्व शिक्षा मंत्री डॉ. बी.डी. कल्ला

DISCLAIMER

The accountability of the research matter articulated in this journal is entirely of the author(s) concerned. The view expressed in the research papers/articles in this journal does not essentially correspond to the views of the publisher/editor, The publisher/editor of the journal is not liable for errors or any consequence arising from the exercise of information contained in it.

-Chief Editor

हमारे सदस्यगण

CHHAVI National Journal of Higher Education

ISSN :- 2319-9679

Published by

International Education & Research Centre, Bikaner

1. डॉ. आशु सिंह, आई.एफ.एस., बीकानेर
2. श्री पी.डी. यादव, नीम का थाना, सीकर
2. डॉ. कमलाकान्त यादव, वाराणसी
3. डॉ. रूपा यादव, हरियाणा
4. डॉ. नमामीशंकर आचार्य, बीकानेर
5. डॉ. उषा गोदारा, हनुमानगढ़
7. डॉ. मोहन सिंह शेखावत, झुन्झुनूं
8. डॉ. नरेन्द्र सिंह शेखावत, सीकर
9. श्री रवि बिजारणिया, सीकर
10. श्री जगवीर सिंह खंगारोत, पाली
11. डॉ. श्रीराम, हनुमानगढ़
12. डॉ. अनुराधा बिस्सु, हनुमानगढ़
13. डॉ. (श्रीमती) सुखपाल कौर, बीकानेर
14. डॉ. गुरमीत सिंह, हनुमानगढ़
15. डॉ. प्रहलाद सोनी, राजसमंद
16. डॉ. श्रवण कुमार शर्मा, चूरू
17. डॉ. संजय शर्मा, बिसाऊ, झुन्झुनूं
18. डॉ. निहालचन्द, घड़साना
19. डॉ. रेणु शर्मा, बीकानेर
20. डॉ. जयश्री शर्मा, बीकानेर
21. डॉ. सुनील कुमार शर्मा, जयपुर
22. डॉ. गणेश शर्मा, अनूपगढ़, श्रीगंगानगर
23. डॉ. (श्रीमती) विद्यावती, चूरू
24. डॉ. बी.एल. सैनी, श्रीमाधोपुर, सीकर
25. श्री औंकार सिंह राठौड़, नागौर
26. डॉ. मोहम्मद उस्मानी, जोधपुर
27. डॉ. सुनीता डूडी, श्रीगंगानगर
28. डॉ. प्रवीण कुमार जैन, प्रतापगढ़
29. डॉ. संजू श्रीमाली, बीकानेर
30. डॉ. कृष्णा आचार्य, बीकानेर
31. डॉ. ओम प्रकाश मेहराडा, अनूपगढ़
32. डॉ. नवनीत सिंह भदौरिया, बीकानेर
33. डॉ. प्रेम कंवर चारण, रतनगढ़
34. डॉ. प्रकाश चान्दावत, अजमेर
35. डॉ. ललित श्रीमाली, उदयपुर
36. डॉ. अरूण शर्मा, बाँसवाड़ा
37. डॉ. गिरीराज भोजक, लाडनूं
38. डॉ. विभा पारीक, जयपुर–बीकानेर
39. डॉ. अंजली पारीक, जयपुर
40. डॉ. मनोज झाझड़िया, झुझुंनू
41. डॉ. प्रभुसिंह सारण, सरदारशहर
42. डॉ. पूजा बागड़ी, अजमेर
43. डॉ. राजेश बाबू, जोधपुर
44. डॉ. विजय कुमार, संगरिया, हनुमानगढ़
45. डॉ. सुमन जोशी, बीकानेर
46. डॉ. सरोज अरोड़ा खत्री, बीकानेर
47. डॉ. बृजरतन जोशी, बीकानेर
48. डॉ. आर.पी. सैनी, जयपुर
49. डॉ. सरोज चौधरी, सरदारशहर
50. डॉ. नरेन्द्र श्रीमाली, बीकानेर

CONTENTS

S. No.	AUTHOR(S) NAME AND TITLE	PAGE NO.
1.	हन्ना ए. ए. वैन हाउटन और भारतीय महिला शिक्षा– डॉ. पुनम मिश्रा	1–4
2.	**Comparision of learning styles of Self-Regulated Learners of RBSE and CBSE Students- Dr. (Prof.) Shashi Chittora Dr. Anushka GKL Jain**	5–8
3.	वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शिक्षण में भूगोल विषय के अध्ययन की उपयोगिता – **Seema Tripathi, Dr. Jay Prakash Singh**	9–12
4.	साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में नारी चेतना – सरिता	13–17
5.	डॉक्टर मारिया मांटेसरी का शैक्षिक निहितार्थ – डॉ. शाईस्ता भुट्टो	18–19
6.	बी.एड. पाठ्यक्रम में आई.सी.टी. विषय के क्रियान्वयन की वस्तु–स्थिति का अध्ययन – संतोष यादव, डॉ. विभा देवपुरा	20–21
7.	वर्तमान परिदृश्य में शिक्षा, शिक्षक एवं शिक्षार्थी का समग्र विश्लेषण – डॉ. गोपाल प्रसाद पाठक	22–25
8.	शिक्षा में ललित कलाओं का स्थान – अम्बालाल जेदिया	26–27
9.	उच्च माध्यमिक स्तर पर ग्रामीण विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का अध्ययन – सुधा कुमारी जाट, ले. (डॉ.) हिम्मत सिंह चुण्डावत	28–35
10.	**A Comparison of Evaluation System of Teacher Education Programme of Higher Education institutions - Lata, Dr. Reena Agarwal**	36–43
11.	मूर्तिकार अंकेत पटेल के मूर्तिशिल्पों की प्रविधि – शिव कुमार शर्मा, डॉ. मनोज कुमार टेलर	44–46
12.	आर्टिफिशयल इंटेलिजेंस एक नए युग की शुरुआत– विजय तिवाड़ी	47–48
13.	राणी केलमदे एवं राष्ट्रकूटों का तथ्यात्मक अध्ययन – डॉ. मातु सिंह राठौड़	49–56
14.	समयसाधारितं सप्तद्रव्यस्वाधीनता – पराधीनता विवेचनम् – निलेश जैनः, डॉ. कुसुमलता टेलर	57–61
15.	कर्म योग और निर्विचार शांति : आधुनिक संदर्भ में प्रासंगिकता – विकास कुमार कसानिया, डॉ. रामदेवा राम आलडिया	62–65
16.	आधुनिक हिन्दी कविता में राष्ट्रीय संदर्भों क विकासात्मक परिदृश्य – डॉ. यदुवीर सिह खिरवार	66–70

CONTENTS

S. No.	AUTHOR(S) NAME AND TITLE	PAGE NO.
17.	बी.एड. पाठ्यक्रम में राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रभाव – डॉ. चंचल लता	71–72
18.	जिद्दू कृष्णमूर्ति के चिंतन में निहित शिक्षा के व्यावहारिक पक्षों की वर्तमान में प्रासंगिकता – ललित कुमार सैन, डॉ. प्रदीप पनेरी	73–77
19.	**"Island of Escape : Sita's Quest for Solace and Sanity" "Where Shall We Go This Summer?" - Rajendar Prashad**	78–84
20.	नंद चतुर्वेदी के संस्मरणों एवं साक्षात्कारों का विश्लेषण तथा औचित्य – मोनिका पालीवाल, डॉ. ममता पानेरी	85–91
21	**A complex Tapestry : The Relationship Between Raju and Rosie in R.K. Narayan's "The Guide" - Ms. Shakshi, Pawan Kumar**	92–93
22	**Legal Barriers and Ethical Dilemas : A Study on Intellectual Property Challenges in E-Content Development- Yudhisthar, Dr. Navdeep Dadhich**	94–97
23	हिन्दी व गणित विषय में कक्षा पाँच तक न्यूनतम अधिगम स्तर के अन्तर्गत निर्धारित दक्षताओं का जोधपुर शहर के सरकारी व निजी विद्यालयों के कक्षा–6 के विद्यार्थियों के संदर्भ में तुलनात्मक अध्ययन – सुनीता व्यास, डॉ. माधुरी दत्ता	98–101
24	**Price Fluctuations and Consumer Behavior : A Microeconomic Study of India's Domestic Trad - Arnika Bishnoi, Dr. Reena**	102–106

हन्ना ए. ए. बी. वैन हाउटन और भारतीय महिला शिक्षा

डॉ. पुनम मिश्रा
प्रोफेसर, शिक्षा संकाय
अपैक्स विश्वविद्यालय, जयपुर
मो. 8829014945
Email : poonam.mishra@apexmil.in

सारांश :

दुर्भाग्य से, भारत में हन्ना ए. ए. बी. वैन हाउटन (1817–1890) के बारे में बहुत कम जानकारी है और न ही इस पर ध्यान दिया जाता है। वह एक डच शिक्षिका, प्रोफेसर थीं और आणविक आनुवंशिकी के क्षेत्र में अपने काम के लिए प्रसिद्ध थीं। उन्हें महिलाओं की शिक्षा की वकालत के लिए जाना जाता है, खासकर नीदरलैंड में 19वीं सदी के महिला अधिकार आंदोलन के संदर्भ में। हन्ना वैन हाउटन लड़कियों की शिक्षा की वकालत करने वाली एक प्रमुख हस्ती रहीं और उन्होंने शैक्षिक सुधारों का भी नेतृत्व किया, जिससे महिलाओं को पारंपरिक लिंग भूमिकाओं से परे क्षेत्रों में करियर बनाने में मदद मिली।

प्रस्तावना :

हन्ना ए. ए. बी. वैन हाउटन का जन्म 1817 में नीदरलैंड में हुआ था। उस समय महिलाओं के लिए सीमित शैक्षिक अवसरों के कारण, ऐसा लगता है कि उन्होंने खुद को पढ़ने में व्यस्त रखा। उन्हें अपेक्षाकृत विशेषाधिकार प्राप्त परवरिश प्रदान की गई थी, जिसने उन्हें सामाजिक सुधार और शिक्षा में अपनी रुचियों को आगे बढ़ाने की स्वतंत्रता दी होगी। दरअसल, हना वैन हाउटन ने अपना अधिकांश जीवन महिला शिक्षा और सामाजिक सुधारों के लिए काम करते हुए बिताया। 1890 में उनकी मृत्यु हो गई, और वे नीदरलैंड में शिक्षा और महिला अधिकारों के क्षेत्र में बहुत महत्वपूर्ण विरासत छोड़ गईं। 19वीं शताब्दी की शुरुआत में, नीदरलैंड में लड़कियों को लड़कों की तुलना में न्यूनतम शिक्षा प्राप्त हुई। लड़कियों की शिक्षा केवल घरेलू कौशल पर केंद्रित थी, और महिलाओं को शायद ही कोई उच्च शिक्षा प्राप्त हुई हो। हना वैन हाउटन इस तरह की असमानता से बहुत परेशान थीं, और उनका मानना था कि महिलाओं को पुरुषों की तरह शिक्षा के समान अवसर मिलना चाहिए। डच महिला आंदोलनों और उनके लिए शैक्षिक अवसरों के लिए उनके काम ने नीदरलैंड में 19वीं और 20वीं शताब्दी के लैंगिक समानता सुधारों के लिए एक मजबूत नींव रखी। समाज में सक्रिय, शिक्षित प्रतिभागियों के रूप में महिलाओं की उनकी दृष्टि डच नारीवादियों और शिक्षकों की बाद की पीढ़ियों के साथ प्रतिध्वनित हुई और नीदरलैंड के क्रमिक परिवर्तन में अधिक लैंगिक–समान समाज में योगदान दिया। वैन हाउटन महिला अधिकारों और महिलाओं के लिए शिक्षा की आवश्यकता पर एक सक्रिय लेखिका और वक्ता थीं। इन कारणों को बढ़ावा देने के उनके प्रयासों को अक्सर उन लोगों के प्रतिरोध का सामना करना पड़ा, जो लिंग भूमिकाओं के अधिक पारंपरिक विचारों का पालन करते थे। वैन हाउटन की तरह, उस दौर की महिलाएँ भी ऐसी मिसाल हैं जिन्होंने प्रचलित शिक्षा प्रणाली से बाहर निकलकर खुद को आगे बढ़ाया, जो महिला शिक्षा का समर्थन नहीं करती थी। शिक्षा और महिला अधिकारों के प्रति उनका जुनून बताता है कि उन्हें लैंगिक समानता और शिक्षा से जुड़े मुद्दों की गहरी समझ थी, जो दर्शाता है कि वह एक पढ़ी–लिखी और जानकार व्यक्ति थीं।

उन्हें नीदरलैंड और यूरोप के शुरुआती नारीवादी और समाज सुधारकों, जैसे मैरी वोलस्टोनक्राफ्ट से प्रेरणा मिली होगी, जिनके महिला अधिकारों और शिक्षा पर कामों ने उनके विचारों को प्रभावित किया होगा। लड़कियों के लिए उच्च शिक्षा को बढ़ावा देने के उनके प्रयासों से पता चलता है कि वह महिलाओं के बौद्धिक सशक्तिकरण के पक्ष में तर्कों से अवगत थीं, जो उस समय एक क्रांतिकारी रुख

था।

शिक्षा, वकालत का काम और मुख्य योगदानः

हैना ए. ए. बी. वैन हाउटन की शिक्षा के बारे में बहुत कम जानकारी उपलब्ध है, लेकिन उन्होंने अपने ज्ञान का इस्तेमाल लिंग की पारंपरिक भूमिका को चुनौती देने के लिए किया। हैना नीदरलैंड में लड़कियों की शिक्षा की वकालत करने के लिए लोकप्रिय हैं। यह वह समय भी था जब लड़कियों को लड़कों के समान शिक्षा से वंचित रखा जाता था, खासकर माध्यमिक और तृतीयक स्तर पर। हालाँकि, उनके विश्वास के अनुसार, शिक्षा ही वह चीज़ है जो महिलाओं को समाज में सार्थक अस्तित्व के लिए सशक्त बनाती है। उन्होंने लड़कियों के स्कूलों के निर्माण और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जो पारंपरिक रूप से लड़कों के विषयों के रूप में माने जाने वाले विषयों की तुलना में बेहतर मानक शिक्षा प्रदान करते थे। यह महिलाओं को पुरुषों के समान शैक्षिक अवसर प्रदान करने की दिशा में एक आवश्यक कदम था। वैन हाउटन ने महिलाओं के लिए शिक्षा तक अधिक पहुँच के लिए तर्क देने के लिए अपने पद का इस्तेमाल किया, जिसे उन्होंने एक मौलिक अधिकार के रूप में देखा।

शिक्षा के मार्ग में आने वाली सभी बाधाओं को पार करते हुए, उन्होंने खुद को साबित किया और साथ ही हम सभी के लिए एक आदर्श के रूप में खड़ी हैं, जब हम उनके करियर को देखते हैं। अपने करियर के दौरान, उन्होंने आणविक जीव विज्ञान, जैव रसायन विज्ञान और आनुवंशिकी में कई स्नातक और स्नातकोत्तर छात्रों को सलाह दी है। डीएनए मरम्मत, कैंसर जीव विज्ञान और माइटोकॉन्ड्रियल फ़ंक्शन में नवोदित वैज्ञानिकों के करियर का मार्गदर्शन करते हुए, उनके समर्थन ने कई नवोदित वैज्ञानिकों के करियर को आकार देने में मदद की है। एक शिक्षिका के रूप में, उन्होंने विशेष रूप से प्रयोगात्मक डिजाइन, आलोचनात्मक सोच और वैज्ञानिक डेटा की व्याख्या के महत्व पर जोर दिया है। सलाह के माध्यम से, उन्होंने वैज्ञानिकों की एक पीढ़ी को संभव बनाया है जो बाद में अपने आप में महत्वपूर्ण योगदान देने के लिए आगे आएंगे। उन्होंने आणविक आनुवंशिकी, जैव रसायन विज्ञान और डीएनए मरम्मत में स्नातक स्तर के पाठ्यक्रम पढ़ाए। स्नातक शिक्षा में पाठ्यक्रम विकास और पाठ्यक्रम सामग्री में उनका योगदान ऐसा है कि इसने सुनिश्चित किया है कि छात्र अत्याधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधान के ज्ञान से लैस हैं। उन्होंने अपने स्वयं के शोध और उस क्षेत्र की उन्नति का उपयोग किया है जिसका वे अध्ययन कर रही थीं और अपने छात्रों को सैद्धांतिक ज्ञान और वास्तविक वैज्ञानिक खोज के बीच सीधा संबंध सुनिश्चित करने के लिए पढ़ा रही थीं। अपने शोध की अंतःविषय प्रकृति को देखते हुए, जो आणविक जीव विज्ञान, जैव रसायन विज्ञान, आनुवंशिकी और कैंसर जीव विज्ञान जैसे क्षेत्रों में फैली हुई है, वैन हाउटन शिक्षा में एकीकृत शिक्षण अनुभवों के बारे में बहुत मुखर रही हैं। उन्होंने इस धारणा को स्पष्ट किया है कि आधुनिक वैज्ञानिक प्रश्न, जैसे कि स्वास्थ्य और बीमारी में डीएनए की मरम्मत तंत्र को समझना, एक ऐसे दृष्टिकोण की आवश्यकता है जो अनिवार्य रूप से अंतःविषय हो। उनके प्रयासों ने छात्रों को जैविक प्रणालियों के बारे में व्यापक दृष्टिकोण अपनाने और अध्ययन के एक ही क्षेत्र तक सीमित न रहने के लिए प्रेरित किया है, जिससे उन्हें आणविक और कोशिकीय जीव विज्ञान के विविध क्षेत्रों में कौशल विकसित करने में मदद मिली है। ऐतिहासिक रूप से पुरुषों के वर्चस्व वाले क्षेत्र में एक महिला वैज्ञानिक होने के नाते, वैन हाउटन विज्ञान में महिलाओं की हिमायती रही हैं। उन्होंने महिला छात्रों और शोधकर्ताओं को सलाह दी है और उनका समर्थन किया है, उन्हें आणविक जीव विज्ञान और आनुवंशिकी में करियर बनाने के लिए प्रोत्साहित किया है। एक रोल मॉडल बनकर, उन्होंने कई महिलाओं को वैज्ञानिक विषयों में प्रवेश करने और सफल होने के लिए प्रेरित किया है, जिससे महिला वैज्ञानिकों की भावी पीढ़ियों के लिए बाधाएं टूट गई हैं। वैन हाउटन ने डीएनए की मरम्मत, माइटोकॉन्ड्रियल फ़ंक्शन और कैंसर जीव विज्ञान पर शैक्षिक कार्यक्रम, सेमिनार और सम्मेलन स्थापित करने के लिए अन्य शोधकर्ताओं और संस्थानों के साथ सहयोग किया है। इन आयोजनों ने छात्रों, शोधकर्ताओं और शिक्षकों को विचारों का आदान–प्रदान करने, उभरते शोध पर चर्चा करने और सहयोगात्मक शिक्षण को बढ़ावा देने के लिए एक मंच प्रदान किया है। उनके शोध पत्रों, समीक्षाओं और पुस्तक अध्यायों ने न केवल वैज्ञानिक समुदाय में योगदान दिया है, बल्कि छात्रों और शिक्षकों के लिए शैक्षिक संसाधनों के रूप में भी

काम किया है। डीएनए मरम्मत तंत्र पर उनके काम का उपयोग शैक्षणिक पाठ्यपुस्तकों और व्याख्यानों में छात्रों को सेलुलर अखंडता बनाए रखने वाली आणविक प्रक्रियाओं के बारे में सिखाने के लिए किया गया है। वैन हाउटन ने साहित्य, इतिहास और विज्ञान सहित अधिक व्यापक पाठ्यक्रम प्रदान करने वाले की स्थापना और विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जो आम तौर पर लड़कों तक ही सीमित थे। उनके शैक्षिक योगदानों में से एक सीखने के लिए अंतःविषय दृष्टिकोण रहा है। डीएनए मरम्मत, माइटोकॉन्ड्रियल फ़ंक्शन और कैंसर जीवविज्ञान सभी के लिए एक व्यापक ज्ञान आधार की आवश्यकता होती है जिसमें आणविक जीव विज्ञान, जैव रसायन, आनुवंशिकी और सेलुलर जीव विज्ञान शामिल होते हैं। वैन हाउटन ने छात्रों से कई वैज्ञानिक दृष्टिकोणों से जटिल जैविक प्रश्नों पर पहुंचने का आग्रह किया है, एक अंतःविषय दृष्टिकोण को प्रोत्साहित किया है जो आधुनिक जैविक चुनौतियों को हल करने के लिए कई क्षेत्रों को एकीकृत करता है। अग्रणी महिला वैज्ञानिकों में से एक होने के नाते, वैन हाउटन ने महिला वैज्ञानिकों का समर्थन करने में भी भूमिका निभाई है। उन्होंने वास्तव में युवा महिला छात्रों के साथ–साथ युवा वैज्ञानिकों के बीच एक सहायक वातावरण विकसित करने और बनाए रखने के लिए बहुत प्रयास किया है, मुख्य रूप से जीवन विज्ञान के स्तर पर और साथ ही आणविक जीव विज्ञान में STEM नौकरियों को आगे बढ़ाने के लिए अधिक महत्वपूर्ण रुचि को प्रोत्साहित और उत्तेजित करके। कई लोगों के लिए, वह काम अन्य युवा महिलाओं के लिए बस अमूल्य है जिनके करियर ने भी अंततः सफलता हासिल की। शिक्षण के अलावा, उन्होंने शोध शिक्षा को परिभाषित करने में भी नेतृत्व किया। इन आयोजनों में उनके नेतृत्व ने विभिन्न पृष्ठभूमि के शोधकर्ताओं, शिक्षकों और छात्रों के बीच समुदाय और सहयोग की भावना की स्थापना में योगदान दिया। सामाजिक और आर्थिक सुधार– एक नारीवादी के रूप में, वह विभिन्न सुधार आंदोलनों में भी शामिल थीं, जिनका उद्देश्य नीदरलैंड में महिलाओं की सामाजिक और आर्थिक स्थितियों को बढ़ाना था।

शिक्षा के लिए वैन हाउटन का आह्वान महिलाओं की सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार लाने की दिशा में बड़ी प्रतिबद्धता का हिस्सा था। शिक्षा को एक ऐसे उपकरण के रूप में देखा गया जो लैंगिक समानता और सामाजिक सुधार हासिल करने में मदद करेगा। उनका काम महिलाओं के मताधिकार और नारीवाद के बड़े आंदोलनों का हिस्सा था जिसने 19वीं सदी में नीदरलैंड में महिलाओं के अधिकारों को बेहतर बनाने की कोशिश की। शिक्षा में अपने काम के अलावा, वह डच नारीवादी आंदोलन में एक सक्रिय भागीदार थीं। उन्होंने उन सुधारों की वकालत में अन्य महान हस्तियों के साथ काम किया जो महिलाओं के अधिकारों में सुधार करेंगे, जिसमें रोज़गार, संपत्ति के अधिकार और राजनीतिक भागीदारी तक पहुँच शामिल है। उनके काम का महिलाओं के शैक्षिक अधिकारों और पहुँच के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण पर व्यापक प्रभाव पड़ा, खासकर वैज्ञानिक समुदाय में।

उनके कैरियर और वकालत ने शिक्षा और शोध में महिलाओं की भूमिका के बारे में धारणाओं को बदलने और पारंपरिक लिंग मानदंडों को चुनौती देने में बहुत मदद की है जो वैज्ञानिक करियर और शिक्षा में महिलाओं के व्यवसायों को बहुत कम आवाज़ देते हैं। आणविक जीव विज्ञान और जैव रसायन के पुरुष प्रधान क्षेत्रों में एक महिला वैज्ञानिक के रूप में उनकी सफलता इस बात का एक बेहतरीन उदाहरण है कि जटिल वैज्ञानिक खोजों के मामले में महिलाएँ पुरुषों के बराबर कैसे हैं। वास्तव में, डीएनए मरम्मत अनुसंधान में कुछ महत्वपूर्ण योगदानों के साथ मिलने वाली मान्यता के साथ, वह पुराने मिथकों को तोड़ने में मदद करती हैं, जो यह दर्शाते थे कि महिलाएँ किसी तरह उन्नत वैज्ञानिक शिक्षा के अधिक जटिल रूपों या विज्ञान और अन्य प्रकार के उन्नत अनुसंधान की खोज के लिए उपयुक्त नहीं थीं। वास्तव में, उनके करियर ने उन महिलाओं के लिए एक आदर्श स्थापित किया है जो इस क्षेत्र में प्रवेश करना चाहती हैं और ऐसा करने के बाद, इसे अच्छी तरह से करना चाहती हैं। इसलिए, उन्होंने उन दृष्टिकोणों को आगे बढ़ाया है जो अन्यथा महिलाओं के लिए उच्च शिक्षा और वैज्ञानिक करियर तक पहुँच को सीमित करते हैं, शिक्षा और अनुसंधान वातावरण में लैंगिक समानता का समर्थन करने वाली पहलों और नीतियों का समर्थन करके। इसने इस विचार को और पुष्ट किया कि महिलाओं को वैज्ञानिक विषयों में आगे बढ़ने या

आगे बढ़ने के लिए पुरुषों के बराबर अवसर मिलना चाहिए। उन्होंने एक संरक्षक के रूप में युवा महिलाओं को वैज्ञानिक शिक्षा और कैरियर को आगे बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित किया। उन्होंने विभिन्न परामर्श संबंधों के माध्यम से उन सभी बाधाओं को तोड़ने में मदद की है जो महिलाओं को उनके जुनून और रुचि के क्षेत्रों में शिक्षा प्राप्त करने से रोकती हैं, जबकि कई बार प्रतिनिधित्व की कमी, विश्वास करने या आत्मविश्वास महसूस करने में असमर्थता को महत्वपूर्ण बाधाओं के रूप में देखा जाता है। हालांकि, उन्होंने महिलाओं को बिना किसी इनकार या सीमा के उन्नत शैक्षिक और शोध कार्यों की आकांक्षा करने में मदद की। अपनी प्रयोगशाला और शैक्षणिक स्थानों में मैत्रीपूर्ण, सहायक वातावरण बनाए रखने के उनके प्रयासों ने महिलाओं की शिक्षा तक पहुंच के संबंध में एक दृष्टिकोण बदलाव में योगदान दिया है। उन्होंने विभिन्न तरीकों से महिला छात्रों को सलाह देने का एक बिंदु बनाया है, जबकि परिवार के अनुकूल नीतियों की वकालत की है जो यह सुनिश्चित करती हैं कि महिलाएं अपनी वैज्ञानिक शिक्षा को आगे बढ़ाने और पूरा करने के लिए आवश्यक सभी संसाधनों से लैस हों। इसने एक अधिक समावेशी शैक्षणिक संस्कृति विकसित करने में मदद की है उनके काम ने इस बात को उजागर करने का रास्ता खोला है कि कैसे इन पूर्वाग्रहों को छिपाया नहीं जाना चाहिए, बल्कि दृष्टिकोण की एक बदली हुई दिशा में संबोधित किया जाना चाहिए, लिंग के बावजूद महिलाओं द्वारा शिक्षा और शोध संसाधनों तक पहुँच के पक्ष में शैक्षणिक और वैज्ञानिक संस्थानों में कम प्रतिनिधित्व और पूर्वाग्रह के मुद्दों के बारे में अपनी पीड़ा की आवाज़ के माध्यम से, वह शैक्षिक पहुँच में समानता की आवश्यकता की व्यापक सामाजिक मान्यता में योगदान देना जारी रखती है। उन्होंने विज्ञान में महिलाओं के काम की मान्यता और दृश्यता की भी वकालत की है। उन्होंने सुनिश्चित किया कि महिलाओं के शोध योगदान को अच्छी तरह से पहचाना और महत्व दिया जाए, इस प्रकार शिक्षा जगत में उन दृष्टिकोणों को बदलने में मदद मिली जो कभी–कभी महिलाओं की शैक्षिक और व्यावसायिक उपलब्धियों को कम करके आंकते हैं या उनका अवमूल्यन करते हैं। उनके प्रयासों ने इस धारणा को मजबूत किया है कि महिलाओं का वैज्ञानिक कार्य उनके पुरुष समकक्षों की तरह ही महत्वपूर्ण और मान्यता के योग्य है। नेतृत्व, मार्गदर्शन और वकालत के माध्यम से, हैना ए. बी. वैन हाउटन ने महिलाओं के शिक्षा और पहुँच के अधिकारों के बारे में सामाजिक दृष्टिकोण को बदलने में योगदान दिया है, विशेष रूप से विज्ञान और शैक्षणिक दुनिया के भीतर। रूढ़िवादिता का मुकाबला करके, महिलाओं की शिक्षा का समर्थन करने वाली नीतियों के लिए लड़कर, और महिला वैज्ञानिकों की अगली पीढ़ियों को सलाह देकर, उन्होंने महिलाओं के लिए विज्ञान में शिक्षा और कैरियर के अवसरों को और अधिक समान बना दिया है। उनका जीवन और कार्य हमें महिला शिक्षा की स्थिति में सुधार की संभावना और मार्ग प्रशस्त करते हैं।

उपसंहार :

भारत में, NEP 2020 बहु–विषयक शिक्षा, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग, STEM की खोज की वकालत करता है, जबकि इसके बीज कई साल पहले ही महिलाओं द्वारा बोए जा चुके थे। उनकी शैक्षिक यात्रा उन सभी के लिए एक संदेश की तरह है जो शिक्षा के समान मानकों को प्राप्त करने की दिशा में आगे बढ़ रहे हैं। हालाँकि वह डच नारीवादी या शैक्षिक सुधार आंदोलनों में कुछ अन्य समकालीन हस्तियों की तुलना में बहुत कम प्रसिद्ध हैं, लेकिन हन्ना ए. ए.बी. वैन हाउटन उन महत्वपूर्ण शुरुआती महिलाओं में से एक थीं जिन्होंने तर्क दिया कि नीदरलैंड में सामाजिक विकास के लिए किसी भी प्रगतिशील योजना में शैक्षिक समानता होनी चाहिए। अतीत में महिलाओं द्वारा की गई पहल और उठाए गए साहसी कदम उन सभी महिलाओं के लिए सबक की तरह हैं जो शिक्षा के इस विशेषाधिकार प्राप्त अधिकार से जूझ रही हैं या वंचित हैं। वैन हाउटन का जीवन न केवल समाधान प्रदान करता है बल्कि प्रकृति में प्रेरणादायक और प्रेरक भी है। उनके मुख्य योगदानों में पूछताछ करने वाला दृष्टिकोण, शोध करने वाला दिमाग, शिक्षा को वास्तविक दुनिया से जोड़ना, आलोचनात्मक सोच और समस्या समाधान विकसित करने के मामले में बहु–विषयक शिक्षण और सीखना शामिल था। स्वामित्व एक ऐसा महत्व ले रहा है जिसमें व्यक्ति स्वयं और इच्छुक शिक्षार्थी बन सकता है और जीवन और करियर में आसमान की ऊंचाइयों को छू सकता है। उनका जीवन इस बात का प्रतीक रहा है कि शिक्षा किस तरह से एक व्यक्ति के भीतर साहस और नेतृत्व के गुणों की भावना विकसित करती है।

Comparision of learning styles of Self-Regulated Learners of RBSE AND CBSE Students

Dr. (Prof.) ShashiChittora
Ph.D. Supervisor
JanardanRai Nagar Rajasthan Vidyapeeth
(Deemed-to-be University), Udaipur (Raj.)

(Dr.) Anushka GKL Jain
Assistant Professor
B.N. University, Udaipur (Raj.)

KEYWORDS: Learning Styles, Self-Regulated Learners, rajasthan board and central board,selfmadechecklist

Abstract : In the present research the researcher studied the learning styles of self-regulated learners, whose main objective was to make a comparative study of the learning styles of self-regulated learners of RBSE and CBSE schools. In the present research, ten secondary schools (five RBSE and five CBSE) in Udaipur district were selected by random sampling method. A total of 400 students of class X were included in the sample of these ten schools, 200 students of RBSE school and 200 students of CBSE school were taken and self-regulated students were selected on the basis of 70 percent marks from self-made checklist. Survey method. was used by the researcher for measurement of learning styles of self-regulated learners. Standardized equipment manufactured by SK Mishra was used. In the present study, statistics were used by mean, standard deviation (SD), t-test and z-score.

Introduction

Learning styles are simply different approaches or ways of learning. Learning styles are different ways of taking in and understanding information. These ways are affected by age, experience, physiology, culture, and many other factors. There are several different inventories to assess learning styles. Each child / individual has a specific style of learningthat is dominant, and a secondary style that he/she also learns. It is quite difficult to find an individual who learns in all three styles equally.

Those individuals who have two or more dominant learning approaches are called multi modal learners. Students have different learning styles, characteristics strengths and preferences in the ways they take in and process information. Some students tend to focus on facts, data and algorithms; others are more comfortable with theories and mathematical models. Some respond strongly to the visual forms of information, like pictures, diagrams and schematically; other get more from verbal forms i.e. Written and spoken explanations. Some prefer to learn actively and interactively; others function more introspectively and individually. Learning styles suggest the ways or methods by which students acquire learning. There are inherent variations of learning styles that every individual reflects.

There is no single learning style theory that is universally accepted, nor is there a 'right' way to study or 'best' way to teach. Teachers should also avoid the temptation to try to categorize or confine individual pupils to one learning style. Age, educational level, and motivation influence each pupil's learning so that what was once preferred may no longer be that pupil's current preferred learning style.

Objectives

- To find out the Learning Styles of Self-Regulated Learners of R.B.S.E. and C.B.S.E. Schools.
- A comparative study of Learning Styles of Self-Regulated Learners of R.B.S.E. and C.B.S.E.

School.

Hypothesis

- There is no significance difference of Learning Styles of Self-Regulated Learners of R.B.S.E. and C.B.S.E. School.

Research Methodology

In the present research, ten secondary schools (Five RBSE and Five CBSE) of Udaipur district were selected by random sampling method. The sample of these ten schools includes 400 students of class X. There are 200 students of RBSE school and 200 students of CBSE school. Self-regulated students were selected on the basis of 70 per cent marks from a self-generated checklist. The researcher used the survey method. For measurement of learning styles of self-regulated learners. Standardized equipment manufactured by S.K.Mishra was used. In the present study, statistics were used by mean, standard deviation (SD), t-test and z-score.

Results and Discussions

Table No.1

The Learning Styles of Self-Regulated Learners of R.B.S.E. and C.B.S.E. Schools based on Z-Score

S. No.	Area of Learning Style	Z-Score Value	Level of Learning Styles	Grade
1.	Enactive Reproducing Style	-0.88	Below average	G
2.	Enactive Constructive Style	-1.67	Low	H
3.	Figural Reproducing Style	+1.02	Above Average	C
4.	Figural Constructive Style	+0.55	Slightly above average	D
5.	Verbal Reproducing Style	+0.11	Average	E
6.	Verbal Constructive Style	-0.38	Slightly below average	F

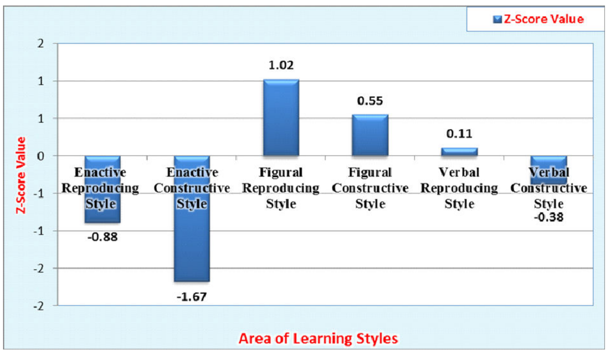

Area wise analysis :-

1. On the basis of the opinion expressed on all the statements of Enactive Reproducing Style in the area of learning style scale of the self-regulated learners of the R.B.S.E. and C.B.S.E schools, the Z-score of the scores was obtained -0.88 which comes under the below average level, whose category was found to be 'G'.

2. On the basis of the opinion expressed on all the statements of Enactive Constructive Style in the area of learning style scale of the self-regulated learners of the R.B.S.E. and C.B.S.E schools, the Z-score of the scores was obtained -1.67 which comes under the Low level, whose category was found to be 'H'.

3. On the basis of the opinion expressed on all the statements of Figural Reproducing Style in the area of learning style scale of the self-regulated learners of the R.B.S.E. and C.B.S.E schools, the Z-score of the scores was obtained +1.02 which comes under the Above average level, whose category was found to be 'C'.

4. On the basis of the opinion expressed on all the statements of Figural Constructive Style in the area of learning style scale of the self-regulated learners of the R.B.S.E. and C.B.S.E schools, the Z-score of the scores was obtained +0.55 which comes under the Slightly above average level, whose category was found to be 'D'.

5. On the basis of the opinion expressed on all the statements of Verbal Reproducing Style in the area of learning style scale of the self-regulated learners of the R.B.S.E. and C.B.S.E schools, the Z-score of the scores was obtained +0.11 which comes under the Average level, whose category was found to be 'E'.

6. On the basis of the opinion expressed on all the statements of Verbal Constructive Style in the area of learning style scale of the self-regulated learners of the R.B.S.E. and C.B.S.E schools, the Z-score of the scores was obtained -0.38 which comes under the Slightly below average level, whose category was found to be 'F'.

Table - 2
Comparative Analysis of Learning Styles of Self-Regulated Learners of R.B.S.E. and C.B.S.E. School based on Mean

S. No.	Area of Learning Style	Mean		S.D.		t-value	Level of Significance
		RBSE	CBSE	RBSE	CBSE		
1.	Enactive Reproducing Style	23.5	26.3	2.20	3.95	8.76	0.01
2.	Enactive Constructive Style	22.6	25.5	3.21	5.01	7.01	0.01
3.	Figural Reproducing Style	27.7	29.9	3.13	4.15	5.99	0.01
4.	Figural Constructive Style	28.8	31.4	3.45	4.80	6.22	0.01
5.	Verbal Reproducing Style	26.1	28.9	3.40	4.11	7.42	0.01
6.	Verbal Constructive Style	20.5	23.7	2.51	3.38	10.9	0.01

df = 398

Tabular value at 0.05 level = 1.97

Tabular value at 0.01 level = 2.59

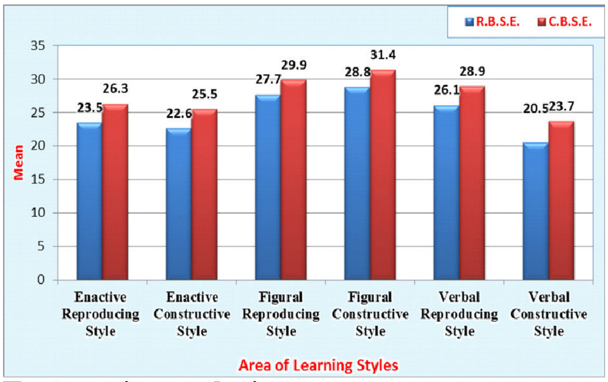

Factor wise analysis :-

1. The mean and standard deviation of scores were 23.5, 26.3 and 2.20, 3.95 respectively, based on the answers obtained on the area of Enactive Reproducing Style of learning style scale of self-regulated learners of R.B.S.E. and C.B.S.E. schools. The t-value for this area was found to be 8.76, which is higher than the tabular value 2.59 for the degree of freedom 398 at the 0.01 level, there was a significant difference between the mean of the two groups. So the Self-Regulated Learners of C.B.S.E. Schools use of Enactive Reproducing Style for learning more than self-regulated learners of R.B.S.E. Schools.

2. The mean and standard deviation of scores were 22.6, 25.5 and 3.21, 5.01 respectively, based on the answers obtained on the area of Enactive Constructive Style of learning style scale of self-regulated learners of R.B.S.E. and C.B.S.E. schools. The t-value for this area was found to be 7.01, which is higher than the tabular value 2.59 for the degree of freedom 398 at the 0.01 level, there was a significant difference between the mean of the two groups. So the Self-Regulated Learners of C.B.S.E. Schools use of Enactive Constructive Style for learning more than self-regulated learners of R.B.S.E. Schools.

3. The mean and standard deviation of scores were 27.7, 29.9 and 3.13, 4.15 respectively, based on the answers obtained on the area of Figural Reproducing Style of learning style scale of self-regulated learners of R.B.S.E. and C.B.S.E. schools. The t-value for this area was found to be 5.99, which is higher than the tabular value 2.59 for the degree of freedom 398 at the 0.01 level, there was a significant difference between the mean of the two groups. So the Self-Regulated Learners of C.B.S.E. Schools use of Figural Reproducing Style for learning more than self-regulated learners of R.B.S.E. Schools.

4. The mean and standard deviation of scores were 28.8, 31.4 and 3.45, 4.80 respectively, based on the answers obtained on the area of Figural Constructive Style of learning style scale of self-regulated learners of R.B.S.E. and C.B.S.E. schools. The t-value for this area was found to be 6.22, which is higher than the tabular value 2.59 for the degree of freedom 398 at the 0.01 level, there was a significant difference between the mean of the two groups. So the Self-Regulated Learners of C.B.S.E. Schools use of Figural Constructive Style for learning more than self-regulated learners of R.B.S.E. Schools.

5. The mean and standard deviation of scores were 26.1, 28.9 and 3.40, 4.11 respectively, based on the answers obtained on the area of Verbal Reproducing Style of learning style scale of self-regulated learners of R.B.S.E. and C.B.S.E. schools. The t-value for this area was found to be 7.42, which is higher than the tabular value 2.59 for the degree of freedom 398 at the 0.01 level, there was a significant difference between the mean of the two

groups. So the Self-Regulated Learners of C.B.S.E. Schools use of Verbal Reproducing Style for learning more than self-regulated learners of R.B.S.E. Schools.

6. The mean and standard deviation of scores were 20.5, 23.7 and 2.51, 3.38 respectively, based on the answers obtained on the area of Verbal Constructive Style of learning style scale of self-regulated learners of R.B.S.E. and C.B.S.E. schools. The t-value for this area was found to be 10.9, which is higher than the tabular value 2.59 for the degree of freedom 398 at the 0.01 level, there was a significant difference between the mean of the two groups. So the Self-Regulated Learners of C.B.S.E. Schools use of Verbal Constructive Style for learning more than self-regulated learners of R.B.S.E. Schools.

Research Findings

- R.B.S.E. and C.B.S.E. of the schools self-regulated learners Levels of learning styles were found to be below average w.r.t. the Enactive Reproducing Style area.
- R.B.S.E. and C.B.S.E. of the schools self-regulated learners Levels of learning styles were found to be Low w.r.t. the Enactive Constructive Style area.
- R.B.S.E. and C.B.S.E. of the schools self-regulated learners Levels of learning styles were found to be Above average w.r.t. the Figural Reproducing Style area.
- R.B.S.E. and C.B.S.E. of the schools self-regulated learners Levels of learning styles were found to be Slightly above average w.r.t. the Figural Constructive Style area.
- R.B.S.E. and C.B.S.E. of the schools self-regulated learners Levels of learning styles were found to be Average w.r.t. the Verbal Reproducing Style area.
- R.B.S.E. and C.B.S.E. of the schools self-regulated learners Levels of learning styles were found to be Slightly below average w.r.t. the Verbal Constructive Style area.
- Self-Regulated Learners of C.B.S.E. Schools use of Enactive Reproducing Style for learning more than self-regulated learners of R.B.S.E. Schools.
- Self-Regulated Learners of C.B.S.E. Schools use of Enactive Constructive Style for learning more than self-regulated learners of R.B.S.E. Schools.
- Self-Regulated Learners of C.B.S.E. Schools use of Figural Reproducing Style for learning more than self-regulated learners of R.B.S.E. Schools.
- Self-Regulated Learners of C.B.S.E. Schools use of Figural Constructive Style for learning more than self-regulated learners of R.B.S.E. Schools.
- Self-Regulated Learners of C.B.S.E. Schools use of Verbal Reproducing Style for learning more than self-regulated learners of R.B.S.E. Schools.
- Self-Regulated Learners of C.B.S.E. Schools use of Verbal Constructive Style for learning more than self-regulated learners of R.B.S.E. Schools.

Educational Implications of the Study

The present study tried to pick up practical problem, the results of which can be implemented easily but thoughtfully in following ways:

- Using the results obtained from this research, students can increase their academic achievement by learning from different learning styles.
- Based on the suggestions received from this research, new research related to learning styles and personality traits can be done on different boards in different districts and on students of HEIs.

References

A. K .Aggrawal. (2011). A study of learning styles in relation to learner's self-concept. ShikshanAnveshika, Vol. 1(1), pp. 66-77.

H. Alireza, (2008). Learning style as a predictor of achievement motivation and academic performance. International Journal of Psychology, Vol. 43(3/4), p. 315

X Alireza,, L.& K.Sabry (2003). Learning styles for interactive learning systems. Innovations in Education and Teaching International, Vol. 40(4), pp. 325-34

H. D. Brown, (2000). Principles of language learning and teaching. (4th Ed.). New York: Longman Inc

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शिक्षण में भूगोल विषय के अध्ययन की उपयोगिता

Dr. Jay Prakash Singh
Assistant Professor Jain Vishva Bharati Institute, Ladnun Nagour (Raj.)

Seema Tripathi
Research Scholar
Jain Vishva Bharati Institute , Ladnun, Nagour (Raj.)
M. 9680214132

प्रस्तावनाः–

भूगोल एक ऐसा विशय है जो प्राचीन काल से ही उपयोगी रहा है तथा वर्तमान में भी यह अत्यन्त उपयोगी विषय है। मध्य युग में अरबों और ईरानी लोगो ने यात्रा विवरणों और वर्णनों से इसे समृद्ध किया। आधुनिक युग के प्रारम्भ के साथ ही भौगोलिक खोजों का युग आया, जिसमें पृथ्वी के ज्ञात भागों और उनके निवासियों के विषय में भौगोलिक ज्ञान की वृद्धि हुई। उन्नीसवीं सद़ी में पर्यावरणीय निश्चयवाद, सम्भववाद और प्रदेशवाद से होते हुए बीसवीं सदी में मात्रात्मक क्रांति आदि के माध्यम से व्यावहारिक भूगोल का स्वरूप सामने आया। वर्तमान समय में भूगोल की चिंतनधारा आलोचनात्मक भूगोल तक पहुंची।. भूगोल शब्द संस्.त के भू और गोल शब्दों से मिल कर बना है, जिसका अर्थ है गोलाकार पृथ्वी। वैदिक काल में भूगोल से सम्बन्धित वर्णन वैदिक रचनाओं में प्राप्त होते हैं। ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत स्थित पृथ्वी, वायु, जल, अग्नि, आकाश, सूर्य नक्षत्र तथा राशियों का विवरण वेदों, पुराणों और अन्यान्य ग्रन्थों में दिया गया है।

ऋग्वेद 1/38/8 में कहा है–चक्राणासः परिणहं पृथिव्या। अर्थात् पृथ्वी चक्र के जैसी गोल है। सूर्योदय हमेशा पूर्व में होता है, क्योंकि पृथ्वी पश्चिम से पूर्व की ओर घूम रही है, इस बात को ऋग्वेद (7/992) में कहा गया है कि पृथ्वी बूढी औरत की तरह झुकी हुई है और पूर्व की ओर जा रही है अर्थात् ऋग्वेद हमें बताता है, कि पृथ्वी अपने अक्ष पर झुकी हुई है। आधुनिक विज्ञान भी यही बताता है, कि यह अपने अक्ष पर झुकी हुई है। पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है, इस विषय में भी ऋग्वेद का एक मंत्र 10/149/1 हमें बताता है, कि सविता अर्थात् सूर्य एक यंत्र की भांति पृथ्वी को अपने चारों ओर घुमा रहा है। पृथ्वी के परिक्रमा पथ को 12 भागों में बाँटा गया है, जिन्हें हम 12 राशियाँ कहते हैं। ऋग्वेद के 1/164/48.वें मंत्र में 12 राशियों की चर्चा पायी जाती है। ऋग्वेद तो ग्रीस के इतिहास से काफी पुराना है। ऐसे में राशियों का सिद्धान्त भारत का अपना सिद्धान्त सिद्व होता है, जिससे आधुनिक मान्यताओं का खोखलापन स्पष्ट हो जाता है। महाभारत में भीष्म पृथ्वी की गोलाई को बारह हजार कोस यानी चौबीस हजार मील बताते हैं, इसको यदि किमी. में बदला जाए तो यह अडतीस हजार छः सौ चौबीस कि.मी. आता है। आज का विज्ञान भी पृथ्वी की परिधि को चालीस हजार कि.मी ही मानता है, जो भीष्म पितामह द्वारा बतायी गयी दूरी के लगभग समान ही है।

हम यह तो जानते ही हैं, कि चन्द्रमा सूर्य के प्रकाश से ही प्रकाशित होता है। यह तथ्य यजुर्वेद 18/40 में ऋषि भी कहते हैं। वहाँ कहा गया है– सूर्य रश्मिः चन्द्रमसं प्रति दीप्यते अर्थात् सूर्य की रश्मि से चन्द्रमा प्रकाशमान है। भारतीय मासों को चन्द्रमा के अनुसार ही माना गया है। चन्द्रमा एवं सूर्य जिस भी नक्षत्र पर आमने सामने होते हैं, उस नक्षत्र के नाम पर ही उस मास का नाम होता है, जैसे चित्रा नक्षत्र पर चन्द्रमा होता है तो चैत्र मास, विशाखा पर चन्द्रमा है तो वैशाख मास आदि इस प्रकार भारतीय कालगणना पूरी तरह विज्ञान पर आधारित है।[1]

भूगोल का अर्थ – भूगोल शब्द का प्रयोग 'इरेटोस्थनीज नाम के एक, ग्रीक विद्वान् ने किया था। भूगोल शब्द ग्रीक भाषा के दो मूल Geo (पृथ्वी) एवं Graphas (वर्णन) से मिलकर बना है। जिसका अर्थ होता है 'पृथ्वी का वर्णन'। अरस्तू ने भी अपनी पुस्तक ऑन द हैवन में बताया था, कि पृथ्वी गोल है। यूनानी व रोमन विद्वानों ने पृथ्वी को चपटा या तश्तरीनुमा माना था, जबकि भारतीय साहित्य में

इसे गोलाकार ही माना गया है। आधुनिक भूगोल के जनक अलेक्जेंडर वॉन हम्बोल्ट को माना जाता है। अध्ययन के लिए एक स्वतन्त्र विषय के रूप में भूगोल को 19वीं शताब्दी में मान्यता मिली। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में भूगोल मनुष्य और पर्यावरण के पारस्परिक सम्बन्धों के अध्ययन के रूप में विकसित हुआ। भारत में आर्यभट्ट ने भूगोल शब्द का प्रयोग किया, इनकी पुस्तक सूर्य सिद्धांतिका है, जिसके अन्तर्गत भूगोल शब्द का प्रयोग किया गया है।

भूगोल की परिभाषाएँ

(1) जेम्स फेयरग्रीव के अनुसार –''भूगोल प्राकृतिक निर्जीव तत्वों तथा सजीव तत्वों के सिद्धान्त एवं क्रियाओं के पारस्परिक सम्बन्धों का विज्ञान है।''[2]

(2) 'हर्बर्टसन के अनुसार – ''भूगोल विश्व के प्राकृतिक प्रदेषों का तुलनात्मक अध्ययन है।''[3]

उक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है, कि भूगोल समस्त पृथ्वी के प्राकृतिक वातावरण का अध्ययन है।

प्राकृतिक विज्ञानों से अभिभूत होकर भूगोल एक विज्ञान के रूप में आगे आया और उसका अध्ययन वैज्ञानिक पद्धति पर होने लगा। तत्पष्चात् प्राकृतिक भूगोल, भू–आकृति रचना, भू–गर्भ–शास्त्र तथा वनस्पति–शास्त्र के अध्ययन पर महत्व दिया जाने लगा। इसी क्रम में पृथ्वी पर होने वाली प्राकृतिक घटनाओं, वर्षा, तूफान, ज्वालामुखी और भूकम्प से सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न किया जाने लगा। भूगोल केवल 'वर्णन–मात्र' विषय न होकर विज्ञान के विभिन्न प्रकार के उपविषयों पर भी आधारित है। भूगोल में धीरे–धीरे मानवीय तत्वों का समावेश हुआ और इसके अध्ययन में भी मानवजीवन को अधिक महत्व दिया जाने लगा। भूगोल एक ऐसा विज्ञान है, जिसके द्वारा भूमि और मानव के मध्य सम्बन्ध का बोध होता है। मानव–क्रियाएं, प्रतिक्रियाएँ आवश्यकताएँ ही भौगोलिक अध्ययन के विषय हैं। भू–मण्डल और उसके निवासियों का जीवन–वर्णन ही भूगोल है। भूगोल को अध्ययन की दृष्टि से सामान्यतः दो प्रमुख भागों में विभाजित करते हैं:–

1 भौतिक भूगोल

2 मानव भूगोल

भूगोल विषय की प्रकृति –भूगोल विषय के अन्तर्गत भूतल पर पायी जाने वाली वास्तविकता का वर्णन और व्याख्या की जाती है। पृथ्वी पर पाये जाने वाले समस्त जैविक तथा अजैविक घटकों का अध्ययन भूगोल के अर्न्तगत ही सम्भव है। भूगोल समस्त प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञानों का सूचनाधार है। पृथ्वी पर भौतिक एवं सांस्कृतिक वातावरण में भिन्नता पायी जाती है। पृथ्वी का भौतिक स्वरूप, जलवायु, उत्पादन, जनसंख्या आदि हमेशा समान नहीं रहते हैं, इनमें समय व स्थान के अनुसार परिवर्तन होता रहता हैं। भूगोल में इन्हीं परिवर्तनों तथा क्षेत्रीय विभिन्नताओं का अध्ययन किया जाता है तथा इन विभिन्नताओं को उत्पन्न करने वाले कारकों का भी अध्ययन भूगोल में किया जाता हैं। भूगोल को एक विज्ञान के रूप में जाना जाता हैं, जो कि पृथ्वी और उस पर निवास करने वाले मनुष्यों व जीव–जन्तुओं की पारस्परिक क्रियाओं का अध्ययन करता हैं। भूगोल में मुख्यतः गणित, प्राणिशास्त्र, भौतिक शास्त्र, वनस्पति शास्त्र के साथ–साथ अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र नागरिक शास्त्र आदि का भी सम्बन्ध होता हैं। वर्तमान में भूगोल में, जैविक–अजैविक क्रियाओं में निहित कार्य–कारण का विश्लेषण तार्किक ढ़ंग से किया जाता हैं। मानव तथा प्रकृति में होने वाली क्रिया–प्रतिक्रियाओं का अध्ययन इसके लक्ष्य का सम्पूरक हैं। अतः भूगोल वैज्ञानिक विषयों तथा मानवीय विषयों के मध्य एक कड़ी का कार्य करता हैं।

भूगोल का क्षेत्र–

भूगोल एक विस्तृत अध्ययन का विषय है, इसके क्षेत्र के सम्बन्ध में श्री बी. सी. वालिस ने कहा है– "प्राकृतिक वातावरण तथा मानवजीवन में पारस्परिक क्या सम्बन्ध है तथा इन दोनों में क्या तथा कैसी क्रियाएँ–प्रतिक्रियाएँ हुई हैं, इनका विस्तृत ज्ञान प्राप्त करने के लिए इस विषय का अध्ययन कई रूपों में होता है।" भूगोल के कई उपक्षेत्र भी हैं जो निम्न है–

1) प्राकृतिक भूगोल– इसके अन्तर्गत सम्पूर्ण पृथ्वी के समस्त प्राकृतिक वातावरण का अध्ययन कई रूपों में होता है, जैसे– तापमान, वायुमण्डल, मिटटी, जलवायु, वनस्पति आदि।

2) मानवीय भूगोल – इसके अन्तर्गत मनुष्य द्वारा की जाने वाली समस्त क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। इसका क्षेत्र बहुत ही व्यापक है।

3) आर्थिक भूगोल–मानव जो भी आर्थिक क्रियाएँ करता है, उनका अध्ययन आर्थिक भूगोल में किया जाता है, जैसे– व्यापार, कृषि, उद्योग, खनिज उत्पादन आदि को भौगोलिक परिस्थितियाँ प्रभावित करती हैं। जिनका अध्ययन आर्थिक भूगोल में किया जाता है।

4) राजनीतिक भूगोल – विभिन्न राजनीतिक प्रदेशों की स्थिति, विस्तार, राजधानी, मुख्य नगर आदि का अध्ययन राजनीतिक भूगोल के अर्न्तगत किया जाता हैं।

5) ऐतिहासिक भूगोल– इतिहास को पढ़नें से ही हमें हमारे पर्यावरण, ग्रहों, उपग्रहों आदि की जानकारी मिलती है और इसी पूर्व जानकारी के आधार पर हम नए कार्य सरलता से कर पाते है। इनका अध्ययन ऐतिहासिक भूगोल के अर्न्तगत किया जाता हैं।

भूगोल शिक्षण का महत्त्व–

भूगोल शिक्षण वास्तविक जीवन, प्रकृति, कृषि, उद्योगों, व्यवसायों, आर्थिक व सामाजिक कार्यो को समझने में हमारी सहायता करता है। इसके अध्ययन के द्वारा ही विष्वबन्धुत्व की भावना का विकास किया जाता है। वर्तमान में पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं को समस्त देशों द्वारा मिल–जुल कर सुलझाने का प्रयास किया जाता है, यह समस्या किसी एक देश की न होकर सम्पूर्ण विश्व की है, सभी समस्या का समाधान खोजने में जुट जाते हैं, जो कि विष्वबन्धुत्व का एक बहुत अच्छा उदाहरण है। वर्तमान में भूगोल का बहुत महत्त्व हैं, भूगोल के बिना हमारी शिक्षा अधूरी है। भूगोल–शिक्षण के महत्त्व को निम्न प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है–

1) जीविकोपार्जन में सहायक
2) प्राकृतिक वातावरण तथा पर्यावरण को समझने में सहायक
3) प्राकृतिक सम्पदा का उचित उपयोग
4) विश्वबन्धुत्व की भावना का विकास
5) दूसरे विषयों की जानकारी में सहायक

भूगोल शिक्षण के उद्देश्य–

प्रो० होल्टज के अनुसार भूगोल शिक्षण के उद्देश्य निम्न प्रकार है–

1) व्यावहारिक उद्देश्य–

(अ) भूगोल द्वारा स्थल सम्बन्धी ज्ञान कराना।

(ब) भूगोल द्वारा व्यवसाय, .षि तथा उद्योग–धन्धों का ज्ञान कराना।

(स) जीवन के लिए विभिन्न प्रदेशों की भौगोलिक परिस्थितियों का ज्ञान कराना।

(द) समाचार–पत्रों एवं पुस्तकों में आने वाले संदर्भो का स्पष्टीकरण करना।

(य) पर्यटन की इच्छा जागृत करना ।

2) सांस्कृतिक उद्देश्य–

(अ) स्वदेश–प्रेम उत्पन्न करना।

(ब) प्राकृतिक सौन्दर्य का सम्यक् ज्ञान प्रदान करना।

(स) वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना, सद्भाव, सहयोग एवं सहानुभूति पैदा करना।

(द) मानवीय दृष्टिकोण से संसार की वस्तुओं का मूल्यांकन करना।

(य) भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार भानवजीवन में अनुकूलन स्थापित करना।

कोठारी कमीशन' ने भूगोल की शिक्षा के निम्न उद्देश्य बताए हैं–

(1) उत्पादन में वृद्धि।
(2) राष्ट्रीय व सामाजिक एकता में योगदान।
(3) आधुनिक वैष्विक प्रगति के साथ प्रगति।
(4) जनतान्त्रिक नागरिकों का निर्माण।
(5) धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा।

वर्तमान समय में भूगोल की उपयोगिताः–

भूगोल एक ऐसा विषय है, जिसकी विषयवस्तु हर व्यक्ति के लिए कहीं न कहीं बहुत उपयोगी है। व्यक्ति जब जन्म लेता हैं, तभी से ही उसका सामना भौगोलिक तथ्यों से होता है, जैसे– पानी, हवा, मिट्टी पेड़ पौधे आदि, इन समस्त तथ्यों को जानने, समझने, उपयोग करने तथा इसकी समस्याओं का समाधान करने के लिए भूगोल अत्यन्त उपयोगी विषय है। समस्त ग्रहों, नक्षत्रों, ब्रह्माण्ड, सौरमण्डल, सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण, ज्वार–भाटा, महाद्वीप, महासागर, पृथ्वी की उत्पत्ति, वायुमण्डल, जलवायु, तापमान, मौसम, इत्यादि की जानकारी हमें भूगोल के अध्ययन से ही प्राप्त होती है। 14 जुलाई 2023 को ईसरो द्वारा चन्द्रयान–3 को अन्तरिक्ष में छोडा गया था। जिसका मुख्य कार्य चन्द्रमा के दक्षिणी भाग का पता लगाना तथा वहाँ पर पानी की खोज करना था। इन समस्त तथ्यों के अध्ययन के लिए भूगोल विषय अत्यन्त उपयोगी रहा हैं। भूगोल एक व्यापक विषय है। इसका सम्बन्ध प्राकृतिक विज्ञान, सामाजिक विज्ञान तथा विज्ञान से हैं। यह एक वैज्ञानिक विषय के रूप में हैं, जो हमें वैज्ञानिक तरीके से सोचने तथा कार्य करने की शक्ति प्रदान करता हैं। भूगोल इसलिए भी उपयोगी हैं, क्योंकि मनुश्य जिस ग्रह पर निवास करता हैं उस ग्रह के समस्त जैवमण्डल का अध्ययन अथवा पृथ्वी, जिस पर हम रहते हैं, उस ग्रह पर ही जीवन क्यों

पाया जाता है, का भी अध्ययन इसके अर्न्तगत ही किया जाता है। भूगोल एकमात्र ऐसा विषय है जो विश्व और उसकी कार्यप्रणाली के विषय में व्यापक दृष्टिकोण प्रदान करता है। भूगोल का अध्ययन हमें अपने पर्यावरण को समझने में मदद करता है, प्राकृतिक आपदाओं की भविष्यवाणी करने से लेकर ग्लोबल वार्मिंग जैसी समस्याओं के निदान हेतु परिवर्तनों को लागू करने तक, मौसम प्रणाली कैसे कार्य करती हैं, से लेकर प्राकृतिक घटनाओं तक वैश्विक जनसंख्या और प्रवास तक भूगोल का व्यापक क्षेत्र हैं। यह हमें भौतिक और मानवीय प्रणालियों की व्यापक समझ प्रदान करता है। यह हमें यह समझनें में भी मदद करता हैं, कि दुनिया के विभिन्न हिस्सों में विभिन्न समाज और संस्कृतियाँ कैसे विकसित हुई हैं। वर्तमान समय में भूगोल विषय के अध्ययन की निम्न उपयोगिताएँ है–

1.विभिन्न संस्कृतियों के प्रति जागरूकता और समझ विकसित होती है।

2.आलोचनात्मक सोच को प्रोत्साहन मिलता है।

3.वैश्विक संकट के मुद्दों का ज्ञान विकसित होता है।

4.विश्वबन्धुत्व की भावना का विकास होता हैं।

5.समस्त ब्रह्माण्ड, अन्तरिक्ष, सौरमण्डल आदि के विषय में विस्तार से जानकारी मिल पा रही है।

6.पृथ्वी के अतिरिक्त अन्य ग्रहों के विषय में भी तकनीकी उपकरणों तथा कृत्रिम उपग्रहों के माध्यम से वर्तमान में जानकारियाँ प्राप्त हो पा रही हैं।

7.नासा और इसरो नई–नई खोज करके हमें नवीन जानकारियाँ देते रहते है, जिनसे हमारी रुचि भूगोल विषय में बढ रही है।

निष्कर्ष :–

निष्कर्ष के रूप में हम यह कह सकते हैं, कि भूगोल शिक्षण वास्तविक जीवन, प्रकृति, कृषि, उद्योगों, व्यवसायों, आर्थिक व सामाजिक कार्यों को समझने में हमारी सहायता करता है। इसके अध्ययन के द्वारा ही विश्वबन्धुत्व की भावना का विकास किया जाता है, भूगोल 21वीं सदी की चुनौतियों का समाधान करने के लिए एक शक्तिशाली विज्ञान है। किन्तु वर्तमान में इस विषय की उपयोगिता को बढाने के लिए हमें कई प्रयास करने होंगे जैसे :–

1.भौगोलिक अवधारणाओं को समझाने के लिए वर्तमान घटनाओं और अन्य जानी–पहचानी गतिविधियों का उपयोग करना एक प्रभावशाली तरीका हो सकता है।

2. समसामयिक घटनाओं का भूगोल–शिक्षण में उपयोग करने के लिए शिक्षक को अपेक्षित शोध करना आवश्यक होता है।

3. प्रायोगिक कार्य के माध्यम से भूगोल को समझना जैसे सर्वेक्षण इत्यादि के द्वारा भूदृश्य का विश्लेषण करना ही हमारा लक्ष्य होना चाहिए।

4. वास्तविक जीवन से जुड़ी केस स्टडीज़ करना, वास्तविक आँकड़े इकट्ठे करना और जीवन की अव्यवस्था को समझना तथा वास्तविक मुद्दों जैसे सामाजिक न्याय, पर्यावरण–संरक्षण, आपदा–प्रबन्धन, सुरक्षा, सेवाओं की उपलब्धता, वाणिज्य, इत्यादि के समाधानों के विशय में सोचने के लिए शोध करना आदि उपक्रम भी वांछनीय है।

5. भौगोलिक आँकड़ों को संसाधित करने के आधुनिक तकनीकी उपकरणों जैसे जीपीएस, जीआईएस, इंटरनेट, तथा अन्य सहायक सामग्रियों जैसे ग्लोब, मानचित्र, चार्ट, मॉडल, आदि का उपयोग सीखने से विद्यार्थियों को महत्वपूर्ण विश्लेषणात्मक जानकारी के साथ समस्या–निवारक योग्यताएँ प्राप्त होती हैं, जिनसे उन्हें 21वीं सदी में विचारों और नौकरियों के बाजार में प्रतिस्पर्धा करने में भी मदद मिल सकेगी।

सन्दर्भ सूची :–

पुस्तकें:–

1 शर्मा अजय कुमार –(2017) ''भूगोल'' राजस्थान राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल,जयपुर पेज नं. 2

2 सक्सेना निर्मल, उपाध्याय सरोजनी,वर्मा कुसुमलता, प्रजापति पद्मा –(2008) ''भूगोल का शिक्षण शास्त्र'' ,पेज नं. 8

3 ''भौतिक और विश्व का भूगोल'' (2013) चाणक्य पब्लिकेशन पेज नं. 20–21

4 ''भौतिक भूगोल के मूल सिद्धांत'' (2022) पेज नं. 2–10

जर्नल्सः–

1 बालचन्द्रन चन्द्रशेखर–(2011) ''21वीं सदी के लिए भूगोल की शिक्षा'' पेज नं. 74–78

WEBSITE REFERENCE

1. www.wikipedia.com.
2. www.desicnn.com
3. www.forbes.com

साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में नारी चेतना

सरिता
सहायक आचार्य – हिन्दी
एम. जी. डी. गर्ल्स कॉलेज, जोधपुर बायपास, बीकानेर
मो. 8619741727
Email : saritasaran251@gmail.com

1. प्रस्तावनाः–

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर अपने कार्यो, इच्छाओं एवं लक्ष्यों को पूरा करता है। समाज को आगे बढ़ाने के लिए स्त्री – पुरुषों दोनों की भागीदारी समान रूप से आवश्यक है। सदियों तक नारी को कमजोर मानकर शोषण का शिकार बनाया गया है। लाचार, असहाय, विवश, दलित अवस्था में रखा गया है।[1]

2.उद्देश्य :–

नारी शब्द का प्रयोग उपन्यास साहित्य में खुलकर किया गया है। नारी का सभ्यता एवं संस्कृति के आरम्भिक काल में गौरवमयी स्थान रहा है।[2] नारी को प्रारम्भ में मातृसत्तात्मक होने के कारण गौरवमयी स्थान मिला है। वैदिक काल में नारी को गौरवपूर्ण सम्मान प्राप्त था, उत्तरवैदिककाल, उपनिषद एवं सूत्तकाल में आते–आते नारी की स्थिति में गिरावट आने लगी है। जैन एवं बौद्ध काल में नारी की स्थिति में सुधार आया। मध्यकाल में नारी मुस्लिम आक्रांताओं के आक्रमण के कारण चारदीवारी में कैद रही। मध्यकाल में नारी के स्वतन्त्र अस्तित्व का नामो–निशान नहीं रहा। वह पुरुष के अधीन थी। रीतिकाल के काव्य में नारी की मांसल सौन्दर्य एवं नख शिख चित्रण का वर्णन किया गया है।

अनेक समाज सुधारकों के प्रयासों के परिणाम, अर्थचेतना, स्त्री–पुरुषों के बदलते संबंध, पाश्चात्य चिन्तकों का प्रभाव, शिक्षा का प्रसार, नवीन मूल्यों की स्थापना आदि अनेक परिस्थितियों ने नर–नारी को प्रभावित किया है। नवीन चेतना एवं शिक्षा के प्रसार ने नारी में परंपरागत रुढ़ियों को समापन कर प्रगति की दिशा में गति बढ़ाने का कार्य किया। भारतेन्दु काल से आधुनिक काल में समाज सुधारक की वजह से स्त्री जागरूक हुई। सामाजिक पारस्परिक संकीर्णताओं से विद्रोह कर घर से बाहर आयी।[3]

हिन्दी उपन्यास साहित्य में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद लेखिकाओं का उभर कर एक एक करके सामने आना नारी विमर्श चेतना–मुक्ति तथा नारी की बौद्धिक क्षमता को उजागर करता है। लेखिकाओं की लेखनी ने नारी के प्रति एक सकारात्मक भूमिका अदा की ।

3. स्वातंत्रयोत्तर उपन्यास साहित्य में नारी –स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात स्त्री की स्थिति में व्यापक बदलाव आये है। सन् साठ के आस–पास हर क्षेत्र में, विघटन की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गई। समस्त प्राचीन मान्यताएं और परम्परागत मूल्य टूटने लगे। साठोतरी हिन्दी उपन्यासों में एक नवीन परिवर्तन परिलक्षित होता है। वह आर्थिक, सामाजिक व नैतिक पक्षपातों से मुक्त हुई और उसने अपने अधिकारों के प्रति सजग होकर संघर्ष किया। सामाजिक दृष्टि से अनुचित होने पर भी घर की चारदीवारी से बाहर निकली। प्रेम, शिक्षा, दहेज, अधिकारी, सेक्स विवाह आदि कई ऐसे निर्णयात्मक बिन्दु है जिसके कारण नारी को भी अपनी चेतना के स्तर पर दोहरा संघर्ष करना पड़ता था। साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में विवाह से पूर्व जीवन में अपनी विविध समस्याओं से संघर्श करने वाली नारी पात्रों की विभिन्न संवेदनाओं का व्यापक विस्तृत धरातल प्राप्त होता है। विवाह पूर्णप्रेम सम्बन्धों में विष्वास रखकर किसी सुरक्षित प्रेम सम्बन्धों में विश्वास रखकर किसी भी प्रेम प्रसंग का अनुभव प्राप्त करके प्रेम में मरमिटने वाली यह नारियां अपने आधुनिक रूप को प्रस्तुत करती है।[4]

साठोत्तरी महिला उपन्यासकारों में श्रीमती शिवानी,

ममता कालिया, मेहरून्निसा, मालती परूलकर अमृताप्रीतम, कामता कमलेश, भगवती प्रसाद वाजपेयी आदि का स्थान श्रेष्ठ रहा उषा प्रियवदा– रजनी पनिकर, मृदुलागर्ग, मंजुल भक्त उनके उपन्यासों में परम्परा एवं रूढ़ियों को तोड़ती हुई, अपने स्वतंत्रता से जूझती कभी सफल तो कभी असफल होती नवीन मूल्यों को ग्रहण करने में सशक्त नारी का जो रूप उभर कर सामने आया, वह वास्तव में अभिनव है। आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक अधिकार, शिक्षा एवं प्रगति आदि कुछ समस्याएं जिनके लिए नारी ने संघर्ष प्रारम्भ किया है। साठोतरी महिला उपन्यासकारों ने नारी के साथ–साथ समाज के ठेकेदारों को उसकी दयनीय दशा के प्रति सजग करने की चेष्ठा की अस्तित्व प्राप्ति के लिए निरन्तर क्रियाशील रहने वाली उनके नारी पात्रों की विभिन्न चेतनाओं को पाठकों के सामने रखा।

'ममता कालिया' साठोत्त्री कालीन सामाजिक यथार्थ को सहज और विश्वसनीय शिल्प में प्रस्तुत करने की कलाकार माना जाता है । ममता कालिया ने अपने उपन्यासों में नारी पात्रों के पारिवारिक तथा दाम्पत्य जीवन के मूल्य विघटन को परिलक्षित किया है। वह एक ऐसी कथाकार है, जो सिर से पैर तक आधुनिक विचारधारा में रंगी हुई दिखाई देती है। नारी–जीवन के आंतरिक तथा बाह्‌य स्वरुपों को उठाया हैं। उन्होंने निम्न मध्यमवर्ग नारियों की समस्याओं तथा पुरुषों की अहं भावना को चित्रित करने का प्रयास किया है । 'नरक–दर–नरक' 'एक पत्नी के नोट्स', 'बेघर', 'दौड तथा दुक्खम सुक्खम' यह उपन्यास ममता जी को हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में साठोत्तरी उपन्यास लेखिका के रुप में बहु चर्चित बनाया हैं । ममता कालिया अपने उपन्यास 'नरक दर नरक' में कविता एवं उशा के दाम्पत्य के पीड़ादायक अनुभूतियां न केवल सन्दीप एवं जगन के अहं का पर्दाफाश करती है, वरन् आम पुरूष के अहं को चुनौती देती है।[5]

'बेघर' ममता जी का यह उपन्यास पुरानी मान्यताओं के आधार पर एक स्त्री के कुंवारेपन के गलत धारणा पर आधारित एक स्त्री की कहानी है । विवाह की पहली रात को संजीवीनी से संभोग के पश्चात् परमजीत अपनी पत्नी को शक की नजर से देखता है । इनके अनुसार स्त्री वही पूरी तरह पवित्र होती है, जो सुहाग रात में संभोग के समय दर्द से पीड़ित हो रक्तस्त्राव हो किन्तु संजीवनी के साथ संभोग के समय ऐसा कुछ भी नहीं हुआ । परमजीत को लगता है कि पत्नी कई पुरुषों के साथ शारीरिक संबंध स्थापित कर चुकी है । इसके बाद 'रमा' उसके जीवन में आती है । वह पुरानी रीति–रिवाजों और संस्कारों में विष्वास रखनेवाली है। इनके बारे में जानते ही अन्त में परमजीत को पष्चाताप होता है और उसका मन अपराध– बोध की भावना से घिर जाता है।[6]

शशि प्रभा शास्त्री साठोत्तरी महिला कथाकारों में पारिवारिक समस्याओं के चित्रण में महत्वपूर्ण स्थान रखती है । इन्होंने नारी–जीवन की समस्याओं को अपने उपन्यासों में उतारा है। 'सीढ़ीयां', 'नावें', 'परछाईयां' आदि उपन्यास में नारी की विविध समस्याओं का चित्रण किया है। 'सीढियां' में मनीशा संस्कारशील, सुन्दर, अंर्तमुखी पात्र है। मनीषा का विवाह धूमधाम से होता है, परन्तु ससुराल देहरी पार करने से पहले ही विधवा हो जाती है। पिता के आग्रह पर डॉक्टर बन जाती है। सुर्पणा अपना पन्द्रह वर्ष का पुत्र मनीषा को सौंप देती है। दोनों में भाई–बहन का लगाव, प्यार बन जाता है। संस्कारों को तोड़ने में असमर्थ है, उसका कई ओर विवाह करा देती है। स्वंय डॉक्टर कश्यप पर आकर्षित होते हुए भी अस्वीकार कर देती है।

'मेहरुन्निसा परवेज' जी ने हिन्दी कथा साहित्य में मुस्लिम मध्यमवर्गीय चेतना की कथा लेखिका के रुप में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है । उन्होंने बड़ी सरलता और ईमानदारी से जीवन की विविध समस्याओं का यथार्थवादी चित्रण किया है। इनके उपन्यासों में नारी–जीवन से सम्बधित अनेक समस्याओं को कई रुपों में चित्रित किया हैं । 'उसका घर', 'ऑखो की दहलीज', 'कोरजा' इनके बहुचर्चित उपन्यास रहे हैं। 'कोरजा' उपन्यास की सबसे सषक्त नारी 'नानी मां' है। वह सह्रदय, सहनशील, संवेदनशील तथा सहज स्वभाव की बुढ़िया है । मजबूरी में वह अपने गिरवी रखे मकान के बदले अपनी विधवा बेटी 'नसीमा' को मुनीम की हवस का शिकार होते देखती है, लेकिन कुछ नहीं कर पाती। नसीमा कहती है कि 'माँ रोज पूजा में ढेरों उलाहनें भगवान को देती है और मैं खड़ी उन उलाहनों को वापस मांग लेती हूं। इस प्रकार मेहरूनिश्शा ने मुस्लिम नारियों के दुखदर्द एवं घबराहट का चित्रण किया है।[7]

पिरूपमा सेवती ने अपने उपन्यास – 'बंटता हुआ

आदमी, 'मेरा नरक अपना है,' 'पतझड़ की आवाजें' में नारी की अकेलेपन की समस्याओं पर प्रकाश डाला गया हैं। इसी प्रकार 'मेरा नरक अपना है' की आशा, शीला, तथा अनिला भी स्वच्छंद जीवन जीने के पक्ष में हैं। भले ही वह स्वच्छंद जीवन के समान क्यों न हो।' बंटता हुआ आदमी' फिल्मी जगत् की उलझनों, संघर्ष और जटिलताओं पर आधारित हैं। सुनंदा, मंजु और अनिता यह तीनों स्त्रियां उलझनों की शिकार हैं। मंजु का फिल्मी पति दूसरी औरत के संपर्क में आता है। अनिता का प्रेमी किशोर गरीबी के कारण ऋण के बोझ से दब जाता है। फलस्वरुप अनिता स्वार्थ के कारण उसे अनैतिक कार्य करने पर मजबूर कर देती है। सुनंदा की पारिवारिक समस्याऐं उसे फिल्मी संसार में आने को मजबूर कर देती हैं।[8]

डॉ. पारुकांत देसाई के अनुसार– ''आधुनिक कथा लेखिकाओं में उषा जी की गणना अग्रिम पंक्ति में होती हैं। उनके साहित्य में आधुनिक जीवन की ऊब, छटपटाहट, संत्रास, अस्तित्व–बोध एवं अकेलेपन की पंचभावना को प्रमुख स्वर मिला है।''[9]

'मन्नू भंडारी ' ने नारी–जीवन से संबंधित तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक स्थितियों का चित्रण अपने उपन्यासों में व्यक्त किया हैं। 'एक महाभोज', 'इंच मुस्कान' में मुख्य रुप से तीन पात्र हैं – अमर, रंजन और अमला। समस्त कथानक में इन तीनों पात्रों की परिस्थितियों, मनः स्थितियों तथा क्रियाकलापों का चित्रण हुआ हैं। 'आपका बंटी' आधुनिक सुशिक्षित पति–पत्नी के अहं के टकराव तथा तनावों से उत्पन्न स्थितियों के बीच संबंध–विच्छेद की भूमिका का प्रामाणिक दस्तावेज हैं । इस उपन्यास में लेखिका ने बंटी को तलाकषुदा माँ–बाप की उपेक्षित संतान बताया है। उसकी मम्मी 'शकुन' कॉलेज की प्रिंसिपल है। पिता 'अजय बन्न' डिवीजन मैनेजर है। दोनों का पारिवारिक जीवन तनावपूर्ण हैं। शकुन के मन की कसक इसका प्रमाण है – ''सच पूछा जाय तो अजय के साथ न रह पाने का दंश नहीं है यह, वरन् अजय को हरा पाने की चुभन है यह, जो उसे उठते–बैठते सालती रही है।'' 'एक इंच मुस्कान' इस उपन्यास को मन्नू भंडारी ने अपने पति राजेंद्र यादव के साथ मिलकर लिखा है। रंजना, अमर और अमला यह उपन्यास के तीन प्रमुख पात्र हैं। इनमें अमर के मनोविज्ञान को राजेंद्र यादव ने और रंजना तथा अमला की मानसिकता को मन्नू भंडारी ने अपनी कलम से चित्रण किया हैं । अमर एक लेखक हैं, उसके एक ओर रंजना का प्यार और समर्पित पत्नीत्व है, तो दूसरी ओर अमला की मुस्कान है, जो उसमें मुक्ति की छटपटाहट भरकर सृजन–प्रेरणा देती है। इसी कारण से रंजना निराश होकर उसे छोड़कर चली जाती है। उधर रहस्मयी 'आला' भी एक दिन जीवन से उभरकर आत्महत्या कर लेती है।[10]

मंजुल भक्त – ''अनारों'' की अनारों बहिर्मुखी, सहज, स्नेहिल, पतीप्रायण, कर्मठ, स्वाभिमानी पात्र है। पति जब वेश्या छबिली को, गर्भवती होने पर घर लाता है, तो वह खूब चिल्लाती है किन्तु औदार्य से भरकर स्वीकार कर लेती है किन्तु यह स्पष्ट कर देती है 'ठीक है उसे रखना है, तो रख लो, किन्तु चूल्हा चौका मैं करूंगी और बर्तन झाडू वह करेगी।'[11] टूटा हुआ इन्द्रधनुष में शोभना को प्रगतिशील एवं स्वतंत्र विचारों वाली शिक्षित महिला के रूप में दिखाया गया है। वह मनीष से प्रेम करती है परन्तु विवाह प्रभात से कर लेती है। पति की अनुपस्थिति में आवेश में मनीष के सम्मुख समर्पण कर देती है फिर उससे पश्चाताप होता है।

'उषा प्रियवदा' ने अपने उपन्यास में भारतीय और पाश्चात्य परिवेश के नारी–जीवन को उजागर किया है। सामाजिक संबंध तथा पारिवारिक विघटन को उषा जी ने अपने उपन्यासों में दर्शाया हैं। 'पचपन खम्भे लाल दीवारें', 'रुकेगी नहीं राधिका', आदि उपन्यासों में प्रमुख रुप से आधुनिक स्त्री की समस्याओं को स्पश्ट रुप से देखने को मिलता हैं। विशेषकर उच्च तथा मध्यमवर्ग से संबंधित नारी अपने व्यक्तित्व को निखारने तथा बनाने के प्रति सतर्क हैं । 'रुकेगी नहीं राधिका' में ' राधिका' के सुसंस्कारित जीवन तथा पारिवारिक विसंगतियों को चित्रित किया गया हैं। राधिका को अत्यधिक संस्कारित ह्रदय की अस्थिर पात्र दिखाया है।

''पचपन खम्भे, लालदीवारें'' की नायिका सुशमा घर की सबसे बड़ी सन्तान है, वह अंधी मां, अपाहिज पिता के साथ छोटे भाई बहनों के लालन–पालन में अपनी सारी जवानी बिता देती है। वह घर की सारी जिम्मेदारियों को वहन कर, उससे विवाह को तत्पर नील को भी ठुकरा देती है। पचपन खम्भे लाल दीवारों वाली अपनी ही हॉस्टल को

ही वह अपनी ''डेस्टिनी'' मान लेती है। वह इस तरह आत्म–पीड़ा भोगती हुई अपना जीवन व्यतीत करती है।[12]

'कृष्णा सोबती' जी साठोत्तरी महिला–लेखिकाओं में अपना विशिष्ट स्थान रखती है। उन्होंने नारी–जीवन से संबंधित चार बहुचर्चित उपन्यासों की रचना की हैं । 'सुरजमुखी अंधेरे के 'तिन पहाड़', 'डार से बिछुडी', 'मित्रो मरजानी' इन उपन्यासों में नारी–जीवन की विभिन्न समस्याओं को चित्रित किया हैं। 'सूरजमुखी अंधेरे के' नायिका 'रितिका' एक आधुनिक नारी होते हुए भी अपनी कुंठा के कारण आत्महनन की शिकार है। यौवनावस्था में वह बलात्कार की शिकार होती है। जवानी में अनेक पुरुषों से संबंध स्थापित करने के पश्चात भी किसी में अपना सच्चा समर्पण न कर सकी।[13] 'तिन पहाड' उपन्यास की 'जया' अंतःमुखी, आत्मपीड़न से ग्रसित भावुक मनोवैज्ञानिक स्त्री पात्र है। इन के जीवन में अनेक समस्याएँ घर कर लेती हैं। जब 'जया' यौवनकाल में ही 'श्रीदा' पर मोहित हो जाती है, श्रीदा विदेश जाने से पूर्व जया से सगाई कर उसे कभी न भूलने वाला वादा करता है, परन्तु वह विदेश से एडना के पुत्र का बाप बनकर लौटता है तो दुःख न सहने के कारण वह दार्जीलिंग पलायन कर जाती है और वह तपन से प्यार करने लग जाती है। माँ के आग्रह पर श्रीदा उसे वापस लाने जाता है। तपन से उसकी मित्रता देखकर वह तिलमिला जाता है और जया को कटुवाक्य कहता है। जया यह सहन नहीं करती और वह नदी में गिरकर मर जाती है।[14]

'शिवानी ' जी ने लगभग तेरह उपन्यासों की रचना की हैं । 'कृष्णकली', 'विषकन्या', ' मायापुरी', 'चौदह फेरे', 'कांजा', 'रतिविलाप', आदि उपन्यासों में नारी–जीवन की प्रमुख समस्याओं को प्रस्तुत करने के लिए महत्वपूर्ण कार्य किया है। उपन्यासकार शिवानी परिवार की अखण्डता में विश्वास रखने वाली है। परिवार को टूटता हुए बचाने में स्त्री का अहम रोल होता है। चोदह फेरें अहल्या नामक दृढ़ एवं प्रगतिशील पात्र की कहानी कहता है। अहल्या अपने प्रति होने वाले अन्याय के प्रति मार्गदर्शन पाने में सफल रहती है। वह राजू से प्यार करती है और ताई के प्रोत्साहन से घर से भाग जाती हैं। जहा अम्मा (दादी) की नजरों के सामने चौदह फेरों का विवाह होता है। ''चल खुसरो घर अपने'' में नायिका कुमुद, पिताजी की मृत्यु के बाद ट्यूशन करने, नौकरी करके घर की आर्थिक स्थिति को सम्पन्न कर देती है, मगर कुमुद की शादी के बारे में सोचा ही नहीं कि कुमुद चली जाए, तो घर में कमाने वाला नहीं रहेगा। इस प्रकार कुमुद को अपने आप को भूल जाना पड़ता है। आर्थिक असमानता की वजह से व्यक्ति में लघुता हीनता का भाव पैदा हो जाता है।[15]

रजनी पनिकर – साठोत्तरी महिला–लेखिकाओं में अपना विशिष्ट स्थान रखती है। 'दूरियां' की चारू एक व्यावहारिक एवं प्रगतिशील तथा समाज में विद्रोह करने वाली पात्र है। जब यश चारू के प्रेम को ठुकरा देता है। वह प्रतिक्रया स्वरूप अत्यन्त प्रगतिशील तथा फ्री सेक्स में विष्वास करने वाली महिला बन जाती थी। 'दो लड़कियां' इस उपन्यास में मनोवैज्ञानिक आधार पर मध्यमवर्गीय उन नारियों का चित्रण किया है जो नये तथा पुराने के बीच छटपटाती है। रंजना का व्यक्तित्व प्रगतिशील एवं परम्परागत विचारों से चिपका रहना चाहता है।

मालती जोशी ने 'चांद अमावस का', 'समर्पण सुख', 'गोपनीय' आदि उपन्यासों में नारी की हीनता बोध, स्वाभिमानता, दयालुता तथा सहनशीलता को चित्रित किया है। हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में मालती जोशी प्रतिष्ठित कथाकार के साथ रेडियों नाटककार, संगीतज्ञ तथा अनुवादिक है। पाषाण युग, विश्वासगाथा, पराजय, रागविराग, शोभायात्रा, ज्वालामुखी के गर्भ में आदि उपन्यास ही पाषाणयुग में एक त्यागमय विधवा नारी का जीवन है। 'राग विराग' में अधिकतर बिखरे हुए टूटे हुए दाम्पत्य जीवन का चित्रण है।

राजीसेठ ने नारी जीवन के अकेलेपन को प्रस्तुत किया है। उपन्यास 'तत्सम' में विधवा नारी की कोमल भावनाओं का चित्रण किया है। दो पुरूषों के बीच उलझी वसुधा का जीवन घुटन से भर जाता है।

मैत्रेयी पुष्पा अल्प समय में अपनी अलग पहचान बनाने वाली नयी पीढ़ी की चर्चित उपन्यास लेखिका है। उनके उपन्यासों में 'चाक', 'अल्मा कबूतरी', 'इदन्नमम' आदि प्रमुख है। उनमें 'चाक' में ग्रामीण स्त्री के विद्रोह को प्रस्तुत किया है। अंचल विशेष की बोली एवं परिवेश की प्रधानता होने के कारण उन्होंने आंचलिक ग्रामीण नारी के जीवन का हृदयस्पर्शी चित्रांकन किया हैं और स्वंय को आंचलिक कथाकार स्थापित करने का प्रयास किया है। लेखिका ने

एक नारी मन की अन्तः पीडा का मनोवैज्ञानिक धरातल पर चित्रण किया है।[16]

रजिया सज्जाद का उपन्यास 'यह शरीफ लोग' में आत्मपीड़क एवं परपीड़क मनोवैज्ञानिक उपन्यास है। उपन्यास की सुरैया आत्मपीड़न से ग्रस्त लड़की है।[17]

निष्कर्ष : साठोत्तरी महिलाओं का उपन्यास साहित्य का परिचय यह सिद्ध करता है कि महिला लेखन पर्याप्त संपन्न हैं। आज की सामाजिक विसंगतियों ने समाज में स्त्री के प्रति होने वाले अत्याचार और उत्पीड़न का गहरी संवेदनशीलता के साथ अंकन किया है। उन्होंने प्रेम के अलग–अलग रुपों का भी चित्रण किया है। सामाजिक कथा आर्थिक समस्याओं की लहरों के बीच झुझती नारी का चित्रण पर लेखिकाओं की दृष्टि विशेष रही है। अपने अँस्तित्व एवं अस्मिता की तलाश में संलग्न नारी को इन्होंने खोजा है और अपने रचनाओं में डाला हैं। अनेक कथाओं में विचार–पक्ष की एक अच्छी झलक दिखाई देती हैं। उनकी मर्मस्पर्शी कथाओं ने नारी को समाज में सम्मान और संरक्षण के साथ ही समता और स्वतंत्र का अधिकार दिया है। निश्चित ही समकालीन हिन्दी महिला कथा–साहित्य लेखन अत्यंत व्यापक, गहन एवं प्रभावशाली है।

ग्रंथसूची :

1. भारतीय महिलाओं का समाजशास्त्र – डॉ. एम. एम. लावनिया
2. साठोत्तरी हिन्दी लेखिकाओं की कहानियों में नारी – मंगल कप्पी केरे, पृ. 14
3. हिन्दी उपन्यास, समाज और व्यक्ति का द्वंद्व, डॉ. मंजुला गुप्ता, पृ. 225
4. भारतीय समाज में नारी – डॉ. नीरा देसाई
5. बेघर – ममता कालिया – पृ. 91
6. बेघर – ममता कालिया – पृ. 165
7. मेहरूनिस्सा परवेज – कोरजा – पृ. 221
8. पिरूपमा सेवती – पतझड़ की आवाजें – पृ. 20
9. डॉ. पारूकान्त देसाई – हिन्दी साहित्य का उपन्यास पृ. 243
10. मन्नू भंडारी – आपका बंटी – पृ. 39
11. अनारों – मंजुल भक्त – पृ. 15
12. पचपन खम्भे लाल दीवारें – उषा प्रियवदा
13. कृष्णा सोबती – सूरजमुखी अंधेरे के – पृ. सं. 89
14. कृष्णा सोबती – तीन पहाड़ – पृ. सं. 126
15. शिवानी – एक थी रामरती – पृ. 10–11
16. मैत्रेयी पुष्पा – चाक – पृ. 22
17. यह शरीफ लोग – रजिया सज्जाद – पृ. 26

डॉक्टर मारिया मांटेसरी का शैक्षिक निहितार्थ

डॉ शाईस्ता भुट्टो
सहायक आचार्य
माँ वैष्णवी शि. प्र. महाविद्यालय, उदयपुर
मो. 7742861219
Email : shaishtahasan3698@gmail.com

सारांश : मारिया मोंटेसरी एक इतालवी चिकित्सक और शिक्षिका थी जो मुख्य रूप से अपने शैक्षिक दर्शन की वजह से जानी जाती है 6 जनवरी 1907 में रोम में इन्होंने एक विद्यालय की स्थापना की जिसको बाल घर कहा गया या बच्चों को बिना किताबों के खेल विधि द्वारा पढ़ती थी इंद्रियों के प्रशिक्षण के द्वारा इन्होंने बच्चों को पढ़ने में एक अनोखा तरीका विकसित किया उनके शिक्षण विधि ने सारी दुनिया का ध्यान अपनी तरफ खींचा और अपने इस विधि का प्रदर्शन करने के लिए विभिन्न देशों की तरफ से उनका बुलावा आने लगा 1939 में वह भारत आई और उन्होंने शिक्षकों के लिए कई प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन भी किया दुनिया भर में 110 देश में 22000 से अधिक मोंटेसरी स्कूल है उनकी शिक्षा पद्धति का प्रयोग आज दुनिया भर में कहीं विद्यालय में किया जा रहा है

मुख्य शब्दावली मारिया मोंटसरी, बालघर विद्यालय, खेल विधि, ज्ञानेंद

शिक्षा में योगदान मांटेसरी पद्धति की जन्मदातरी डॉ मरिया मोंटसरी थी उनका जन्म सन 1870 में इटली में हुआ था वह एक साधन संबंध पिता की पुत्री थी मोंटेसरी विलक्षण प्रतिभा की धनी थी 1894 में केवल 24 वर्ष की अवस्था में पीएचडी की उपाधि प्राप्त की उनकी विशेष रुचि मंदबुद्धि बालकों को पढ़ने में थी उन्होंने पिछले छात्रों से संबंधित अनेक अध्ययन किया इन अध्यायों में इनको शिक्षा की परंपरागत प्रणाली में अनेक दोष दिखाई दिए मोंटेसरी ने इन्हीं दोषों को दूर करने के लिए शिक्षा की एक नई प्रणाली को जन्म दिया यह पद्धति मोंटेसरी प्रणाली के नाम से जानी जाती है उन्होंने मंद बुद्धि छात्रों पर कहीं अनुसंधान तथा प्रयोग किया और लेख लिखें मोंटेसरी धीरे–धीरे अत्यंत लोकप्रिय हो गई विश्व के कई देशों ने उनकी पद्धति को शिक्षा में अपना लिया सन 1939 में उन्होंने भारत की यात्रा की उन्होंने मद्रास में मोंटेसरी संघ की स्थापना की तब से अब तक मांटेसरी पद्धति भारत में फल फूल रही है।

मांटेसरी का कथन एक ही छात्र का स्वाभाविक विकास इस दिशा में हो सकता है जब उसे अपने मूल प्रवृत्तियों के अनुसार कार्य करने की आवश्यकता हो यदि छात्रों को स्वतंत्रता प्रदान नहीं की जाती तो उनकी मूल प्रवृत्तियां का दमन हो जाता है यह दमन छात्रों के लिए हानिकारक होता है रूसो पेस्ट्रोलॉजी तथा फ्रोबेल की भांति मॉन्टेसरी ने भी आत्म विकास का सिद्धांत को स्वीकार करती है उनके अनुसार छात्रा का सर्वांगीण विकास बाहरी शक्तियों नहीं रह सकती छात्र का विकास उनके आंतरिक शक्तियों द्वारा होता है शिक्षक का कर्तव्य की वह छात्रों को जाने और उसका सर्वांगीण विकास करें शिक्षा का कार्य छात्र के व्यक्तित्व को अधिकतम विकास करना है यदि छात्रों को यह अवसर मिलता है कि वह शिक्षक के निर्देशन में कार्य कर सके तो छात्र अपने व्यक्तित्व का विकास करने में समर्थ होता है छात्र को स्वतंत्र वातावरण अवश्य मिलना चाहिए मांटेसरी का विश्वास था कि छात्र की बौद्धिक विकास के लिए आवश्यक है कि इस ज्ञानेंद्र को प्रशिक्षित किया जाए मोंटेसरी ज्ञानेंद्रिय को ज्ञान का द्वार मानती है यही कारण है कि अपनी पद्धति में ज्ञानेंद्र के प्रशिक्षण में विशेष बल देती है मोंटेसरी के अनुसार प्रारंभिक कक्षाओं में शिक्षा का आधार ज्ञानेंद्रिय का प्रशिक्षण होता है मांटेसरी का उद्देश्य छात्रों को क्रियाशील बनाना है इस प्रकार उनके मांसपेशियों के प्रशिक्षण से छात्र लिखना पढ़ना सीखना है उसमें आत्मविश्वास की भावना प्रस्तुत होती है साथ ही छात्रों में सामाजिकता की

भावना का उदय होना आवश्यक है इसी कारण मोंटेसरी सामने प्रशिक्षण के सिद्धांत पर बल देती है मोंटेसरी अनुसार छात्र की स्वयं शिक्षा ही वास्तविक शिक्षा है छात्रों को अपने प्रयास से ज्ञान अर्जित करना चाहिए उसे ज्ञान अर्जित करने की पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए सो शिक्षा तभी संभव हो सकती है वह छात्र पर शिक्षक किसी प्रकार का प्रबंध न लगे मानसीक विकास का कार्य स्वयं बालक का कार्य होना चाहिए फ्रोबेल की शिक्षा का आधार खेल था मोंटेसरी ने भी अपनी पद्धति में शिक्षण कार्य का आधार खेल ही रखा इस पद्धति में छात्र सीखने के लिए अनेक उपकरण काम में लाते हैं छात्रों की ज्ञानेंद्रिय का प्रशिक्षण खेल द्वारा होता है किंतु जिन खेलों को मोंटेसरी ने अपने शिक्षण पद्धति में प्रयोग किया वे केवल साधारण खेलों से भिन्न है।

मोंटेसरी विद्यालय में 3 से 7 वर्ष तक के छात्र पढ़ते हैं उनको सबसे पहले कर्मेंद्रिय की शिक्षा दी जाती है इसलिए गतिशीलता का ध्यान रखा जाता है विद्यालय के छात्र स्वावलंबी होते हैं वह अपना कार्य स्वयं करते हैं अपने शरीर को साफ रखना कपड़े साफ रखना भोजन पकाना आदि व्यावहारिक कार्य स्वयं बालक करते हैं मांटेसरी का विश्वास था कि एक समय में केवल एक ज्ञानेंद्र का प्रयोग किया जाए इसी कारण अपनी पद्धति में मोंटेसरी ने जो उपकरण बनाए हुए एक समय में केवल एक ज्ञानेंद्र को प्रभावित करते हैं शिक्षण विधि में इंद्रियों को शिक्षा का अधिक महत्व होना चाहिए।

मोंटेसरी ने शिक्षा को नवीन आयाम प्रदान किया उन्होंने स्वतंत्रता के सिद्धांत को मूल सिद्धांत बताया और कहां की बालकों के लिए स्वतंत्र होना अनिवार्य है जिससे उनके नैसर्गिक विचार बाहर आ सके उन्होंने साथ ही व्यक्तित्व बालक के व्यक्तित्व पर भी पूरा ध्यान दिया और कहां की उनकी प्रशिक्षण इस प्रकार से होना चाहिए कि उनका व्यक्तित्व अच्छे प्रकार से परिष्कृत होकर बाहर आ सके आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में मांटेसरी का योगदान अभूतपूर्व है।

संदर्भ :

उदियमान भारतीय समाज में शिक्षक श्रीमती राजकुमारी शर्मा

उदीयमान भारतीय समाज और शिक्षा गणपति राय शर्मा

बी.एड. पाठ्यक्रम में आई.सी.टी. विषय के क्रियान्वयन की वस्तु–स्थिति का अध्ययन

डॉ. विभा देवपुरा
सहायक आचार्य
विद्या भवन,
गोविन्द सेकसरिया शिक्षक प्रशिक्षण

संतोष यादव
शोधार्थी
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय
उदयपुर (राजस्थान)
मो. 9351321830

सारांश :

वर्तमान समय में शिक्षण क्षेत्र में सूचना संचार प्रौद्योगिकी शिक्षण कार्य का मुख्य विशेष आधार बन गया है आई.सी.टी. विषय को महत्व दिया जा रहा है, शिक्षण में सुचना संचार तकनीकी नवाचार का कार्य कर रही है। इस शोध कार्य में शोधार्थी बी.एड. पाठ्यक्रम में शामिल आई.सी.टी. विषय के क्रियान्वयन की वस्तु–स्थिति को जानने का प्रयास किया है, जिसमें उदयपुर जिले के बी.एड. के 20 महाविद्यालयों को चुना गया, साक्षात्कार विधि के द्वारा प्रश्नावली का उपयोग करते हुये प्राध्यापक/प्राध्यापिका एवं प्रशिक्षाणर्थियों से आई.सी.टी. विषय में रूचि जानने का प्रयास किया गया है। प्रश्नावली के माध्यम आई.सी.टी. विषय के क्रियान्वयन की वस्तु–स्थिति को जाना गया जिसके अन्तर्गत निष्कर्ष स्वरूप परिणाम सकारात्मक पाये गये परिकल्पनायें सार्थक सिद्ध हुई। प्राध्यापक एवं प्रशिक्षक के अध्ययन व अध्यापन में कोई सार्थक अन्तर प्राप्त नहीं हुये आई.सी.टी. विषय को भी अन्य विषय के समान ही समानता दी जाती है। अतः आई.सी.टी. विषय को शिक्षक व प्रशिक्षाणर्थी दोनों रूचि लेते है।

मुख्य शब्दावली :

– सूचना संचार प्रौद्योगिकी का आशय आई.सी.टी. विषय से है।

– क्रियान्वयन – बी.एड. पाठ्यक्रम में आई.सी.टी. विषय के प्रशिक्षण को वस्तु स्थिति के क्रियान्वयन से है।

– वस्तुस्थिति – बी.एड. पाठ्यक्रम मे आई.सी.टी. विषय के क्रियान्वयन की वास्तविकता को जानना है।

– पाठ्यक्रम – बी.एड. महाविद्यालय में निर्धारित पाठ्यक्रम से है।

– तकनीकी – शिक्षण कार्य में नवाचार के उपयोग से है।

प्रस्तावना :

शिक्षा के क्षेत्र में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आई.सी.टी.) का महत्वपूर्ण स्थान है, शिक्षण और सीखने की प्रक्रिया बेहतर होती है, इससे छात्रों को प्रौद्योगिकी – संचालित दुनिया के लिए तैयारी किया जा सकता है, आई.सी.टी. के जरिये शिक्षण को रोचक और आकर्षक बनाया जा सकता है।

आई.सी.टी. से व्यक्तिगत शिक्षा को बढ़ावा मिलता है। आई.सी.टी. वह बुनियादी ढ़ांचा और घटक है जो आधुनिक कम्प्यूटिंग सिस्टम को सक्षम बनाने में मदद करता है। आई.सी.टी. में इन्टरनेट के साथ–साथ मोबाइल भी शामिल है जो वायरलेस नेटवर्क से जुड़े होते है। इसमें लेंडलाइन टेलीफोन, टेलीविजन और रेडिया जैसी सभी पुरानी तकनीकें भी शामिल है। छात्रों के प्रभावी शिक्षण में आई.सी.टी. की अहम भूमिका है, इससे छात्रों की भागीदारी बढ़ती है और सीखने का अनुभव बेहतर होता है, आई.सी.टी. से छात्रों को सूचना का भंडार मिलता है और व अपनी गति से सीख सकते है। और अवधारणाओं को मजबूत ऑनलाइन डेटाबेस, ई–बुक्स और शैक्षिक बेबसाइट से छात्रों को ज्ञान का खजाना मिलता है एवं शिक्षा के प्रति जिज्ञासा बढ़ती है। छात्रों को सीखने की सामग्री को लचीलापन और उपलब्धता मिलती है।

शोध के उद्देश्य :

1. बी.एड. प्रथम वर्ष के पाठ्यक्रम में आई.सी.टी. विषय की क्रियान्वयन की वस्तुस्थिति का पता लगाना।
2. बी.एड. प्रथम वर्ष के पाठ्यक्रम में आई.सी.टी. विषय के शिक्षण के प्रति प्राध्यापकों की रूचि का पता लगाना।

3. बी.एड. प्रथम वर्ष के पाठ्यक्रम में आई.सी.टी. विषय के अध्ययन में प्रशिक्षणार्थियों की रूचि का पता लगाना।

शोध की परिकल्पनाएँ

अनुमान के आधार पर शोध अध्ययन की निम्नलिखित परिकल्पनाएँ हैः–

1. बी.एड. प्रथम वर्ष के पाठ्यक्रम में आई.सी.टी. विषय का अध्ययन करवाया जाता है।
2. बी.एड. प्रथम वर्ष के पाठ्यक्रम में आई.सी.टी. विषय के प्रति प्राध्यापक शिक्षण कार्य में रूचि लेते है।
3. बी.एड. प्रथम वर्ष के पाठ्यक्रम में आई.सी.टी. विषय के अध्ययन में प्रशिक्षाणार्थी रूचि लेते है।

शोध अध्ययन का परिसीमन

शोधार्थी द्वारा अपने अनुसंधान की समस्या एवं समय की महत्ता को ध्यान में रखते हुए शोधकार्य के बी.एड. महाविद्यालय तक सीमित रख गया हैं।

न्यादर्श :

वर्तमान शोध में न्यादर्श के यादृच्छिक विधि का प्रयोग किया गया है।

महाविद्यालय संख्या	शिक्षक संख्या	प्रशिक्षक संख्या
20	03	05

कुल शिक्षक = 20 x 3 = 60

कुल प्रशिक्षक = 20 x 5 = 100

कुल शिक्षक व प्रशिक्षक = 160

शोध की विधि :

प्रस्ताविक शोध हेतु ''सर्वेक्षण'' विधि का चयन किया गया है।

प्रस्तुत शोध में सांख्यिकी प्रविधि–प्रतिशत, टी–मान, मध्यमान, प्रविधि का उपयोग किया गया है।

उपकरण :

शोध कार्य के प्रश्नावली का उपयोग किया गया है, जो निम्नलिखित है :–

1. प्राध्यापकों/प्राध्यापिकाओं) हेतु स्वनिर्मित प्रश्नावली व साक्षात्कार
2. प्रशिक्षणार्थियों हेतु स्वनिर्मित प्रश्नावली

शोध निष्कर्ष :

प्रस्तुत शोध कार्य में शोधार्थी द्वारा निर्धारित परिकल्पना सार्थक सिद्ध होती है। बी.एड. महाविद्यालय स्तर पर किया गया शोध कार्य जिसका विषय आई.सी.टी. विषय के क्रियान्वयन की वस्तुस्थिति जानने का प्रयास किया गया है, वर्तमान समय में आई.सी.टी. विषय नवाचार शिक्षण का महत्वपूर्ण अंग है जो कोरोना काल में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी शिक्षण कार्य का मुख्य आधार बन चुका था जिसके अभाव में शिक्षण कार्य असंभव सा प्रतीत होता था। शोधार्थी द्वारा निर्धारित परिकल्पनाओं के आधार पर शिक्षक व प्रशिक्षक का बी.एड. महाविद्यालय स्तर पर अध्ययन व अध्यापन में रूचि जानने का प्रयास किया गया है, परिणामस्वरूप पाया गया, शिक्षक व प्रशिक्षक आई.सी.टी. विषय के अध्ययन व अध्यापन में रूचि लेते है। आई.सी.टी. विषय की पूर्ण जानकारी रखते है।

सुझाव :

– यह शोध कार्य उदयपुर जिले को लेकर किया गया है, यह राजस्थान के अन्य जिलों को, लेकर भी किया जा सकता है।

– यह शोध कार्य आई.सी.टी. विषय के क्रियान्वयन की वस्तु–स्थिति को जानने के लिये किया अन्य परिस्थितियों को जानने का प्रयास किया जा सकता है।

– विद्यालय स्तर पर भी शोध कार्य कर सकते है।

– प्रस्तुत शोध अध्ययन को बी.एस.टी.सी. के शिक्षण प्रशिक्षण स्तर पर भी किया जा सकता है।

सन्दर्भ सूची :

– अग्रवाल, जे.सी. (1973), ''एजुकेशन रिसर्च'', जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।

– भट्नागर सी.एल. पी. राय (2005) ''अनुसंधान परिचय'', आगरा इन्टनेशनल पब्लिशिंग।

– श्रीवास्तव, करूण (1979) ''उदयपुर नगर में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की स्थिति का अध्ययन'', विषय पर लघु शोध कार्य किया।

– मोनिका सिंह (2016–18) ''बी.एड. इन्टरनशिप कार्यक्रम की वस्तुस्थिति क्रियान्वयन एवं समस्याऐं'' पर मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर से लघु शोध कार्य किया गया।

- https://www.inprimaryeducation.com
- https://www.educationparallindia.com

ष्वर्तमान परिदृश्य में शिक्षा, शिक्षक एवं शिक्षार्थी का समग्र विश्लेषण

डॉ० गोपाल प्रसाद पाठक
विभागाध्यक्ष (बी. एड.)
आचार्य श्री महाप्रज्ञ इंस्टीट्यूट ऑफ एक्सीलेन्स,
महाप्रज्ञ नगर, आसीन्द, भीलवाड़ा (राज.)
मोबाइल : 07217466043
ई–मेल : gopalpathak473@gmail.com

सारांश : शिक्षा का तात्पर्य बालक का चहुँमुखी विकास करना है। अतः अध्यापक को जीवन मूल्यों, नैतिक, आदर्श एवं सांस्कृतिक मूल्यों के विकास का समग्र ज्ञान होना चाहिए, जिससे विद्यार्थी श्रेष्ठ एवं संस्कारवान बन सकें। इन श्रेष्ठ संस्कारों एवं नैतिक मूल्यों के कारण स्वयं शिक्षार्थी का तथा उसके माध्यम से उत्तम विश्व का निर्माण हो सकता है। प्राचीन काल से हमारे यहाँ मूल्यपरक शिक्षा पर अग्रसर रूप से ध्यान दिया जाता है। शिक्षा प्रणाली में तो मूल्य परक शिक्षा का स्थान सबसे उच्च था। आज के आधुनिक परिवेश में हालात बदल गए हैं। आज शिक्षा प्रणाली में भी परिवर्तन आ गया है। यही वजह है कि आज शिक्षा अर्थोपार्जन एवं जीविकोपार्जन का माध्यम बन गयी है। आज प्रत्येक माता–पिता यह सोचता है कि मेरा बालक सी.ए., डॉक्टर, इंजीनियर आदि बने और ज्यादा से ज्यादा पैसा कमाए।शिक्षा तो जीवन के निर्माण की एक प्रयोगशाला है जहाँ सत्य, नैतिक, सच्चे चरित्रवान एवं संस्कारवान नागरिकों को तैयार किया जाता है। शिक्षा के बिना कोई भी देश आदर्शो का निर्माण नहीं कर सकता है। प्राचीन समय में मूल्यपरक शिक्षा के अनेक साधन हुआ करते थे जिनमें नानी एवं दादी की कहानियां, चौपालों पर बड़े – बुजुर्गों की कहानी एवं किस्से परन्तु आज भौतिकता की चकाचौंध में सब उड़ गये हैं। मूल्यपरक शिक्षा के सशक्त माध्यम विद्यालय माने जाते हैं, विद्यालय वह जगह है जहाँ सभ्य एवं संस्कारवान नागरिकों को तैयार किया जाता है और नागरिकों के माध्यम से ही देश और समाज का निर्माण होता है। आज हम शिक्षा के क्षेत्र में जितने उतार –चढ़ाव देख रहे हैं, उतने अन्य दूसरे क्षेत्रों में नहीं। कभी परचा लीक होना, कभी छात्रों की अध्यापको द्वारा बेरहमी से पिटाई, कभी छात्रों द्वारा अनैतिक व अनुचित क्रियाकलाप तो कभी छात्रों द्वारा डिप्रेशन की खबर हम अधिकतर सुनते रहते हैं। इन सबके अतिरिक्त त्रुटिपूर्ण मार्कशीट, परीक्षा नतीजों में अत्यंत विलम्ब, शिक्षकों का गिरता नैतिक स्तर और शिक्षा के क्षेत्र में शामिल भ्रष्टाचार शिक्षा जैसे पवित्र जगत को धूमिल कर रहा है। आज शिक्षा जगत में जिस प्रकार सरकारी नौकरियों के अवसर बढ़े हैं वहीं उसी तर्ज पर इस क्षेत्र में अनेक प्रकार की समस्याओं ने भी घर कर लिया है। प्राथमिक स्कूलों में बच्चे मिड–डे–मील व छात्रवृत्ति की वजह से आते हैं, यहां पढ़ने आने वाले छात्रों की संख्या शून्य सी रहती है। वहीं माध्यमिक विद्यालयों में बच्चे शिक्षकों का अनादर करते हैं। उन्हें भाँति–भाँति के उपनामों से पुकारते हैं और कॉलेजों में तो छात्र– छात्राएँ स्वतंत्रता का भरपूर प्रयोग करके स्वच्छन्दता पूर्ण व्यवहार करने लगते हैं। शैक्षिक परिवेश में कहीं से कोई त्रुटि हो जाने पर यही छात्र हिंसा भौर अराजकता का माहौल पैदा कर देते हैं। क्या शिक्षा हमें यही सिखाती है? यदि शिक्षा जगत का यही हाल रहा तो क्या राष्ट्र के उत्तरदायी नागरिक बन सकेंगे ? आज के समय में शिक्षा की बहुत ही बुरी दशा हो गई है प्राचीन समय में जहां विद्या की पूजा होती थी, वहीं आज विद्या को गर्त में छिपाकर रखा जा रहा है। विद्यार्थी यह नहीं जानते हैं कि वे कल के भविष्य निर्माता है। वे अपने भविष्य को गर्त में दबाते जा रहे हैं। पढ़ाई–लिखाई की ओर उनका बिलकुल भी ध्यान नहीं है। वे शिक्षा को टाइमपास के रूप में देखते हैं। वे अपने माता–पिता से विश्वासघात करते हैं। प्राचीन समय में गुरु गुरुकुलों में बैठकर बेहतर से बेहतर शिक्षा प्रदान करते थे लेकिन आज आधुनिक परिवेश में गुरु–शिष्य पैसे के भूखे हो गए हैं। विद्यार्थी आज पैसा देकर गुरु को खरीद लेता है। अतः उसे

परिश्चम करने की क्या आवश्यकता? आखिर कहाँ खोजा जाए उस गुरु द्रोणाचार्य और एकलव्य को जिन्होंने गुरु और शिष्य के पवित्र रिश्ते की नींव रखी थी। अतः मेरे विचार से राष्ट्र निर्माण में शिक्षा की बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका मानी जाती है। परन्तु आज के वर्तमान परिप्रेक्ष्य मे शिक्षा का स्वरुप ही परिवर्तित हो गया है। यह लेख वर्तमान परिदृश्य में शिक्षा, शिक्षक एवं शिक्षार्थी का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करता है ।

मुख्य शब्दावली : परिदृश्य, शिक्षा, शिक्षक एवं शिक्षार्थी ।

प्रस्तावना : शिक्षा मानव जीवन की आधारशिला मानी जाती है। शिक्षा मनुष्य के विकास के लिए बहुत ही आवश्यक है। शिक्षा चरित्र को बनाने में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। शिक्षा ही इंसान को सफलता और असफलता से अवगत कराकर आगे का सफर तय करती है। लेकिन आधुनिक शिक्षा का स्वरुप पूरी तरह से बदल चुका है। वर्तमान शिक्षा केवल पेट की भूख को शान्त करने का प्रयास कर रही है। शिक्षा का वास्तविक लक्ष्य इंसान में उन शक्तियों का विकास करना है जिनके द्वारा वह अपने जीवन को सफल बनाता है। पहले जब मूल्य, संस्कार और प्रेम भावना की शिक्षा दी जाती थी, तब भी बेरोजगारी की इतनी समस्या नहीं थी। लेकिन आज अधिकांश व्यावसायिक कोर्स और रोजगार परक डिग्रियां होने के बाद भी बेरोजगारी की समस्या बिना लगाम के घोड़े की तरह बढ़ती जा रही है। किसी भी राष्ट्र की वास्तविक पहचान उसमें रह रहे शिक्षित व्यक्तियों से की जाती है। पहले जब छात्रों को कर्तव्य तथा सेवाभाव की शिक्षा प्रदान की जाती थी तब भी कोई छात्र अवसाद का शिकार नहीं होता था, लेकिन आज हो रहा है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह शिक्षा के वास्तविक स्वरूप एवं महत्व को पहच्चाने क्या हम शिक्षा के वास्तविक स्वरुप से दूर नहीं होते जा रहे हैं? आज के विद्यार्थियों के बहकते कदमों को देखकर एक स्वर्णिम राष्ट्र की आशा करना केवल एक सपने के बराबर है। आज समाज को कर्तव्यनिष्ठ, शिक्षित, लगनशील, ईमानदार, परिश्रमी एवं संस्कारवान विद्यार्थियों की जरूरत है। आज के छात्र – छात्राएं शिक्षा से सम्बन्धित डिग्री तो हांसिल कर लेते हैं, परन्तु उसे अपने जीवन में ढाल नहीं पाते हैं। जिससे वे शिक्षित तो समझे जाते है। परन्तु वे अपनी संस्कृति और संस्कारों से अनभिज्ञ रहते हैं। इस कारण वे तर्कशील और विवेकशील होने का अधिकार गवां देते हैं। बच्चों के लिए पढ़ना आवश्यक है बल्कि स्कूल जाना आवश्यक हैं। लड़धकियों के लिए किताबों का महत्व नहीं, बल्कि सौन्दर्य प्रसाधनों का महत्व है। जीवन न तो स्कूल जाने से चलता है और न सौन्दर्य प्रसाधनों से यह तो इंसान की मुट्ठी में है। यदि शिक्षा के सार को जीवन में उतार लें तो जीवन कैसे कट जाएगा मालूम भी नहीं पड़ेगा। यदि आपने समय रहते अपने माता–पिता के द्वारा दिए गए शिक्षा रुपी अमृत को हांसिल कर लिया तो यही आपकी आपके माता–पिता के प्रति सच्ची श्रद्धा होगी।

शिक्षा का लक्ष्य अज्ञान रूपी अंधेरे को दूर करके शिक्षार्थी के अंतर्मन में ज्ञान रूपी प्रकाश का दीपक जलाना है। शिक्षा हमको अन्धकार से प्रकाश, असत्य से सत्य की तरफ तथा अज्ञान से ज्ञान की ओर ले जाने वाली पवित्र साध ाना है। शिक्षा इंसान में देवत्व का अमृत बिखेरने वाली सहस्त्र धारा है। शिक्षा इंसान को सच्चे मायनों में इंसान बनाती है। शिक्षा के अभाव में इंसान की जिन्दघ्गी मूल्य रहित और व्यर्थ हो जाती है। इंसान के भीतर सात्विक एवं पाश्विक दोनों तरह की प्रवृत्तियां पाई जाती हैं। शिक्षा सात्विक प्रवृत्तियों को बाहर निकालकर पाश्विक प्रवृत्तियों को रोकने का काम करती है। इसलिए शिक्षा रुपी पेड़ पर विद्वता और ज्ञान के फल के साथ–साथ सदाचार, शील और संस्कार का फल भी लगना चाहिए। परन्तु बड़े ही दुर्भाग्य का विषय है कि आज की आधुनिक शिक्षा आध्यात्मिकता से दूर होकर भौतिकता रुपी मकड़ / जाल में फसती जा रही है। लॉर्ड मैकाले को भारत में सुयोग्य लिपिक बनाने थे, उसने शिक्षण–प्रशिक्षण की जो प्रणाली तैयार की थी वही प्रणाली आज तक सम्पूर्ण भारत में पूर्ण मनोयोग के साथ अपनाई जा रही है। इसी प्रणाली के माध्यम से भारत में युधि ाष्ठिर, अभिमन्यु और परीक्षित बनाए जा रहे हैं। प्राचीन समय में शिक्षा एक साधना थी परन्तु आज वही शिक्षा पूर्ण रुप से व्यापार बन गई है। शिक्षा पहले विद्यार्थी के लिए एक साध य का कार्य करती थी, लेकिन आज वही शिक्षा नौकरी ग्रहण करने का एक साधन मात्र बनकर रह गई है। आज की शिक्षा व्यवस्था मानवीय मूल्यों के संरक्षण का बोझ ढोने वाली सिद्ध हो रही है। आज का अध्यापक अपने पाठ्यक्रम को पूर्ण करने में इतना मशगूल है कि उसको विद्यार्थी में

नैतिक एवं मानवीय गुणों का विकास करने का वक्त ही वहीं है।

हमारी आज की आधुनिक शिक्षा व्यवस्था ने शिक्षक को पूरी तरह से नतीजा मूलक बनाकर रख दिया है। आज शिक्षक की विद्वता, कर्तव्य परायणता, कर्मठता, श्रेष्ठता, उपादेयता, विचारशीलता आदि समस्त गुणों का मूल्यांकन उसके द्वारा पढ़ाए गए विषय के परीक्षाफल से मूल्यांकित एवं आंकलित किया जाता है। विद्यालय में समस्त विषयों के शिक्षक होते हैं जो अपने–अपने विषयों से सम्बन्धित पाठ पढ़ाने का प्रयास तो करते हैं, परन्तु किसी ने भी विद्यार्थियों में मानवता, विद्वता, सत्यता, त्याग, देश प्रेम, बलिदान, सदाचार, संस्कार आदि गुणों का सृजन करने, तथा खुद भी विद्यार्थियों के सामने आदर्श आचरण प्रस्तुत करने का काम नहीं कर पाते हैं। यह एक सोचनीय पहलू है। आज जरुरत इस बात की है कि माध्यमिक कक्षाओं में ऐसी शिक्षा प्रणाली लागू की जाये जो देश–प्रेम व नैतिकता की भावना से ओत–प्रोत हो ताकि हमारा आज का विद्यार्थी कल का आदर्श नागरिक बन सके तथा सद्घ्मार्ग पर चलते हुए भारत को परम वैभव की ओर ले जाने में अपना सकारात्मक योगदान दे सकें। प्राचीन समय में गुरु के रूप में अध्यापक इंसान को भगवत् प्राप्ति का रास्ता दिखाया करते थे। लेकिन आज वह अपने कक्ष में शिक्षार्थियों के साथ बैठकर बातचीत करने का मजा लेता है। कभी शिक्षा रूपी मंदिर इहलोक एवं परलोक सुधारने का पथ प्रशस्त किया करते थे वहीं आज वे अपराधों के केन्द्र परस्पर द्वेष भाव और दलगत राजनीति के अड्घ्डे बनते जा रहे हैं। आज कहाँ गुम हो गया भारत का वह स्वर्णिम भविष्य। आज न संदीपन मुनि जैसे आदर्श गुरु रहे और न ही भगवान श्री कृष्ण जैसे तपपूत शिष्य, न रामकृष्ण परम हंस जैसे महर्षि रहे और न ही स्वामी विवेकानन्द जैसे श्रद्धालु। अपने गुरु के आदेश पर शिष्य विवेकानन्द ने सम्पूर्ण भारत में आध्यात्मिक ज्ञान का प्रकाश फैलाया था, परन्तु आज बड़े ही अफसोस का विषय है कि कितना शीघ्र पतन हो गया उस सोने की चिड़िया भारत देश का। शिक्षण के हास की सम्पूर्ण कमी अध्यापक पर नहीं थोपी जा सकती है। वास्तविक स्थिति यह है कि आज का अध्यापक शिक्षा के यांत्रीकरण की प्रक्रिया में एक कलपुर्जा बनकर रह गया है।

आज का शिक्षक कक्षा में स्वतन्त्र विचारों को व्यक्त करने में संकोच का अनुभव करता है। आज उसके निजी मंथन या चिंतन का कोई भी महत्व नहीं है। आज का शिक्षक निश्चित पाठ्यक्रम निश्चित अवधि में पढ़ाने के लिए मजबूर है। एक निश्चित समय सारिणी के अनुसार वह एक कक्षा से दूसरी कक्षा में फुटबॉल की तरह धूमता रहता है। अध्यापक को राष्ट्र का निर्माता माना गया है। अतः वह अपनी जिम्मेदारियों से मुख नहीं मोड़ सकता। समाज भले ही कितना भी दूषित हो जाये उसे अपने कर्तव्य पथ पर सवार होकर जीवन रुपी सारथी बनने का प्रयास करना चाहिए। आज हर शिक्षक डॉ. सर्वपल्ली राधा कृष्णन एवं डॉ. जाकिर हुसैन तो नहीं बन सकता लेकिन आदर्श अध्यापक बनकर वह अपने विद्यार्थियों के लिए प्रेरणापुंज जरूर ही बन सकता है। आज के आधुनिक परिवेश में प्रायः यह देखा जाता है कि विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करने की प्रक्रिया को पवित्र नहीं समझते। वह समझते हैं कि आज का अध्यापन एक व्यापार तथा अध्यापक एक कुंठित ज्ञान का व्यवसायी है। अतः आज के वर्तमान परिवेश में गुरु–शिष्य परम्परा को उचित महत्व नहीं दिया जा रहा है। आज के विद्यार्थी को विद्यालय की इमारत दैनिक जेल लगती है। अनुशासित सीखने का परिवेश उसे नीरस लगता है, शिक्षक का पथ–प्रदर्शन उसे बकवास लगता है। अध्यापक की शिक्षण कला उसे महज दिखावा लगती है। इसके परिणामस्वरूप विद्यालयी शिक्षा के हालात हर रोज बिगड़ते जा रहे हैं। आज. का अध्यापक धन के द्वारा ज्ञान को खरीदने में विश्वास करने लगा है। आज विद्यार्थियों एवं अभिभावक दोनों के दिलों में अध्यापकों के प्रति वह आदर एवं सत्कार बिलकुल भी नहीं रहा जो प्राचीन समय में हुआ करता था। शिक्षा का स्वरुप कितना भी विकृत हो जाये, विद्यार्थी के लिए उसका विद्या के मंदिर से कम महत्वपूर्ण स्थान नहीं होना चाहिए। विद्यालय के शिक्षक गण उसके मन–मस्तिष्क में ज्ञान का प्रकाश फैलाने वाले प्रकाशपुंज हैं। अतरू इस तरह से वे पूजनीय हैं, वंदनीय हैं, सम्माननीय हैं। उनके प्रति आदर एवं श्रद्धा का भाव होना चाहिए।

वहीं अध्यापक राष्ट्र और समाज का नाम रोशन करते हैं। तथा जो परिश्रमी, सदाचारी, कर्तष्यनिष्ठ, कर्मनिष्ठ संस्कारी एवं चरित्रवान होते हैं। प्रसिद्ध विचारक ओशो ने

कहा है कि अध्यापक होना सबसे बड़ी साधना है। आइए हम सभी इक्कीसवीं सदी के नवीन भारत को बनाने में अपनी साधना को सकारात्मच सोच के धरातल पर व्यावहारिक परिणाम प्रदान करें ताकि भारत निश्चित रूप से विश्व गुरु की संज्ञा को सच साबित कर सके।

उपसंहार : इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है आज की शिक्षा का मुख्य ध्येय भोग विलास तकही सिमट कर रह गया है। कितनी तेजी से दुनियां में परिवर्तन हो रहा है लेकिन हम अभी भी गुलामी से ग्रसित पाठ्यक्रम को पढ़ रहे हैं। शिक्षा और संस्कृति के क्षेत्र में आज भी हम मैकालेवादी हैं। आधुनिक समय में दी जाने वाली शिक्षा सिर्फ व्यक्ति के साक्षर होने तक ही केन्द्रित हो गयी है। यह प्राणी के भीतरी और बाहरी विकास में पूरी तरह से श्धोबी का कुत्ता घर का न घाट काश के समान है। आज के ज्यादातर छात्र सरकारी नौकरी पाने के लिए शिक्षा ग्रहण करते हैं या फिर केवल डिग्री पाने के लिए। पढ़ाई करने के बाद यदि कहीं नौकरी मिल जाती है तो समझते हैं कि हमारे जीवन का और शिक्षा को पाने का उद्ध्देश्य पूरा हो गया। क्या इस बारे में कभी सोच विचार किया है कि शिक्षा का मूल उद्देश्य क्या होना चाहिए ? शिक्षा एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा हम अपना शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक विकास करते हैं। शिक्षा से ही व्यक्ति में नैतिक एवं चारित्रिक विकास होता है। शिक्षा पाने का अर्थ अपने जीवन को ऊँचा बनाने से है। अतरू विद्यार्थियों को शिक्षा के वास्तविक उद्देश्य को समझना चाहिए। तभी उनका कल्याण संभव है... अन्यथा नहीं। विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण–के लिए शिक्षा बहुत ही महत्वपूर्ण है। सच्चरित्र, श्रेष्ठ चिंतन और मर्यादित शालीन व्यवहार निश्चित रूप से शिक्षा की धुरी है।

अफसोस है कि आज विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में सिर्फ किताबी ज्ञान को आधार बनाया जा रहा है। शिक्षा के आदर्श एवं मूल्य किताबों से लगभग नदारद हैं। आज शिक्षा की दिशा एवं दशा का पता ही नहीं, क्यों कि समाज में बढ़ध्ते अत्याचार, लूट, सामाजिक बुराइयों, तथा चारों ओर अराजकता का माहौल है। ऐसे में स्वस्थ समाज की रचना के लिए शिक्षा का वास्तविक ध्येय जानना जरूरी हो गया है। दरअसल, जहां चरित्र और आदर्श महान होने चाहिए वहाँ अभद्रता, अमर्यादित व्यवहार, अनुशासनहीनता, संस्कार हीनता एवं चरित्रहीनता की भरमार है। मात्र पुस्तकीय एवं तकनीकी ज्ञान ही जरुरी नहीं बालक के श्रेष्ठ एवं आदर्श व्यक्तित्व के लिए महान उद्ध्देश्यों को समझना आवश्यक है। उच्च मादर्श एवं मूल्य तो वास्तविक शिक्षा ही दे सकती है, जो स्वामी विवेकानन्द, महर्षि अरविन्द, दयानन्द सरस्वती एवं गांधी जी में समाहित थी।

आज के तेजी से बदलते भौतिकवादी परिवेश में शिक्षा, शिक्षक एवं विद्यार्थी का स्वरूप भी बदला हुआ दिखाई पड़ता है। आज की शिक्षा एक व्यवसाय बनकर रह गई है। आज के विद्यार्थी घन के बल पर ऊंची से ऊंची डिग्री खरीदने का दम रखते हैं। आज का अध्यापक पूरी तरह से तकनीकी पर आधारित हो गया है। आज के अध यापक का मुख्य उद्देश्य सिर्फ पैसा कमाना रह गया है। उसको संस्कारों एवं नैतिक मूल्यों से कोई सरोकार नहीं। क्या यही है आज की शिक्षा, शिक्षक एवं विद्यार्थी का स्वरुप? इस ज्वलंत मुद्दे पर शिक्षाविद्, शिक्षाशास्त्री, आचार्य गण, दार्शनिक एवं मनोवैज्ञानिकों को गहन चिन्तन, मनन और मंथन करने की आवश्यकता है। तभी हम एक स्वर्णिम भविष्य की नींव रख पाएंगे।..... अन्यथा बिलकुल भी नहीं। गहन अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि आज के तेजी से बदलते आधुनिक परिवेश में शिक्षा, शिक्षक एवं शिक्षार्थी के मायने ही बदल गये हैं। अर्थात् आज तीनों का मौलिक स्वरूप ही परिवर्तित हो गया है।

' सन्दर्भ ग्रन्थ सूची '

(1) नई शिक्षा (मासिक) पत्रिका वर्तमान परिदृश्य में शिक्षा, शिएक एवं शिक्षार्थी, जयपुर (राज.) अंकरू अप्रैल–2024 पृष्ठरो–9–11

(2) पंखुड़ी त्रैमासिक पत्रिका, उत्तराखण्ड, पृष्ठ संख्या–27

(3) शिविरा पत्रिका (मासिक)– माध्यमिक शिक्षा, बीकानेर, (राज.)

(4) राजस्थान–पत्रिका दैनिक समाचारपत्र

(5) दैनिक भास्कर दैनिक समाचार–पत्र

(6) दैनिक नवज्योति दैनिक समाचार–पत्र

(7) अमर उजाला दैनिक समाचार पत्र दिनांक 11 जनवरी, 2008

(8) दैनिक जागरण दैनिक समाचारपत्र दिनांक 29 नवम्बर, 2007

(9) अकिंचन भारत दैनिक समाचार पत्र दिनांक 09 फरवरी, 2008

(10) बज्र गरिमा हिन्दी सांध्य दैनिक समाचारपत्र, मथुरा, उ. प्र.

(11) साहित्य प्रभा (त्रैमासिक पत्रिका), देहरादून, (उत्तराखण्ड)

(12) शिक्षक प्रभा (मासिक पत्रिका), सीतापुर, (उ. प्र.)

शिक्षा में ललित कलाओं का स्थान

अम्बालाल जेदिया
शोधार्थी
मौलाना आजाद विश्वविद्यालय
कमला नगर, जोधपुर (राजस्थान)
मोबाईल नम्बर – 7014373984

मानव भावनाओं की सुन्दरतम् अभिव्यक्ति का साकार रूप ही कला है। जब मानव अपने किसी गुण की अभिव्यक्ति सुन्दर एवं आकर्षक ढ़ंग से करता है तो उसके उस गुण की अभिव्यक्ति 'कला' का रूप ले लेती है।

कला का उदय मानव की सौन्दर्य भावना को उजागर करता है। कला में शारीरिक और मानसिक कौशलों का प्रयोग होता है। मन के अन्तःकरण की सुंदर प्रस्तुति ही कला है। कला की व्याख्या– रविन्द्रनाथ ठाकुर के अनुसार कला में मनुष्य अपने भावों की अभिव्यक्ति करता है। प्लेटो के अनुसार सत्य की अनुकृति ही कला है। कला ही जीवन है।

कला का ज्ञान मानव के सर्वांर्गीण विकास के लिए आवश्यक है। यह मनुष्य का मानसिक शक्तियों का विकास करके उसे पशुत्व से ऊपर उठाता है। कहा भी है –

''साहित्य संगीत कला विहीन।
साक्षात् पशु पुच्छ विषाणहीन।।''

अर्थात् साहित्य, संगीत और कला के बिना मनुष्य बिना पूँछ पशु के समान है।

कला अपने अनेक सुंदरतम् रूपों में मानव जीवन के रोम–रोम में बसी हुई है। कला जीवन को 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' से समाहित करती है।

हमारे यहाँ मुख्य से 64 कलाओं को माना गया है। मानव सभ्यता के साथ–साथ ही विभिन्न कलाओं का विकास हुआ है। 64 कलाओं में पाँच कलाएँ प्रमुख है जिनको ललित कलाएँ कहते है वह है–

काव्य कला, संगीत कला, चित्रकला, मूर्तिकला एवं वास्तुकला

1. शब्द तथा भाषा के माध्यम से भाव व्यक्त करने पर – काव्यकला
2. सप्त स्वरों के माध्यम से भाव व्यक्त करने पर – संगीतकला
3. प्रकृति के दृश्यों को चित्रफलक पर उतारने पर – चित्रकला
4. भावों को मूर्ति के रूप में प्रतिपन्न करने पर – मूर्तिकला
5. भवन निर्माण के रूप में – वास्तुकला

हींगल ने सर्वप्रथम ललित कलाओं तथा उपयोगी कलाओं का विभाजन किया। ललित कलाओं का विस्तृत वर्णन करते हुए हींगल ने कला के तीन वर्ग बताये जो निम्न है–

1. प्रतीकवाद 2. शास्त्रीय 3. रोमानी

ललित कला के लिए आवश्यक है कि उसमें सौन्दर्य, माधुर्य, सहजता, सरलता, प्रसाद, प्रवाह और ओज हो लयात्मकता लालित्य का प्रमुख गुण है। संगीत, काव्य और चित्रकला में ये सभी गुण पाये जाते है।

सभी कलाएँ मन की शांति, आनंद और प्रेरणा प्रदान करती है। संगीतकला में एक विशेष गुण और भी है कि वह सामर्थ्य में मनुष्य के अतिरिक्त पशु–पक्षियों को भी आकर्षित करता है। अन्य ललित कलाओं में यह सामर्थ्य नहीं है। काव्य, चित्रकला, वास्तुकला एवं मूर्तिकला बुद्धि के संयोग से ही भावों का उत्कर्ष कराने में सफल होती है।

शॉपेन हॉवर का कहना है– ''केवल संगीत ही ऐसी कला है श्रोताओं से सीधा सम्बन्ध रखती है। इसे किसी माध्यम की आवश्यकता नही होती।''

गीत, वाद्य, नृत्य तीनों संगीतकला के अन्तर्गत आते है। इनके सम्मलित प्रयोग से संगीत में भाव एवं शक्ति बढ़ जाती है। इसलिए संगीत को ''ब्रह्मानन्द सहोदर'' आनन्द प्रदान करने वाली कला कहा गया है।

संगीत कला अधिक प्रभाव डालने वाली कला है।

मनुष्य के हृदय में सोए हुए भावों को जगाने में संगीत जितना सक्षम है। उतनी कोई और विद्या नहीं है।

लॉटरी खुलने की प्रसन्नता न भाषा से व्यक्त की जा सकती है और न ही चित्र से। उसकी अभिव्यक्ति नाचने, कूदने और उन्मत गान से ही संभव है। इसी प्रकार पुत्र–शोक, प्रिय–बिछोह और समर्पण इत्यादि के भाव संगीत के द्वारा शीघ्र जाग्रत हो जाते है।

अतः सभी ललित कलाओं में संगीत का स्थान सर्वोपरि है, क्योंकि वह गतिशील है, आन्दानुभूति कराने और भावाभिव्यक्ति में सक्षम है। चर और अचर पर प्रभाव डालने में समर्थ है। लोकारंजक है और मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करने वाला है।

संगीत कला एक ऐसी कला है जो आत्मा में नैतिक मूल्यों को विकसित में बहुत अधिक योगदान देती है। संगीत मानव के हृदय की भाषा है, जहाँ शब्दों की कोई दीवार नही है। इसलिए संगीत के माध्यम द्वारा कही गयी बात प्राणी मात्र पर अन्य साधनों की अपेक्षा अधिक जादुयी प्रभाव छोड़ती है। यह कहना अतिश्योक्ति न होगा कि यदि जीवन का लक्ष्य आत्मा का उत्थान कर परमात्मा तक पहुँचना है और परमानन्द या अतिन्द्रिय सुख पाना है तो इसमें संगीत कला महत्वपूर्ण योगदान कर सकती है।

काव्य, चित्र, वास्तुकला एवं मूर्तिकला बुद्धि के संयोग से ही भावों का उत्कर्ष कराने में सफल होती है।

वास्तव में देखा जाए तो चित्र, काव्य और संगीत तीनों ललित कलाएँ एक दूसरे से अलग होते हुए भी आपस में इस प्रकार से जुड़ी हुई है जैसे कि– कपड़ा और सूत।

संगीतकार धुन बनाते समय किसी चित्र की कल्पना करते है, कवि अपने काव्य की रचना करते समय अमूर्त्त स्वरों को छन्द का वाहन बनाता है। इसी प्रकार चित्रकार या मूर्तिकार शब्द के आश्रय से विषयवस्तु को अपने मस्तिष्क में कोई आकार देता है और तब उसे मूर्त्त रूप प्रदान करता है।

संगीत, काव्य और चित्र तीनों ललित कलाओं में केवल एक चीज सामान्य है और वह है– लय।

लय पर ही तीनों कलाओं का सौन्दर्य अवलम्बित होता है। संगीत में लय उसका प्रधान तत्व है, इसलिए लय की सम्पूर्ण शक्ति 'संगीत कला' में निहित रहती है। इसी कारण से सभी ललित कलाओं में संगीत सर्वोपरि है। यह गतिशील है एवं आन्दानुभूति कराने और भावभिव्यक्ति में सक्षम है।

अतः कहा जा सकता है कि मनुष्य के जीवन एवं शिक्षा के सर्वांगीण विकास हेतु सभी पाँचों ललित कलाओं का महत्वपूर्ण स्थान है।

उच्च माध्यमिक स्तर पर ग्रामीण विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का अध्ययन

सुधा कुमारी जाट
शोधकर्त्री, शिक्षा संकाय,
जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ(डीम्ड–टू–बी)
विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

ले.(डॉ.) हिम्मत सिंह चुण्डावत,
सहायक आचार्य, शिक्षा संकाय,
जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ(डीम्ड–टू–बी)
विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

प्रस्तावना :

नेटबॉल एक लोकप्रिय खेल है जो उच्च माध्यमिक स्तर के खिलाड़ियों के बीच में बड़े ही लोकप्रिय है। यह एक टीम खेल है जिसमें खिलाड़ियों को टीम में मिलकर गेंद को डिफेंस करने और स्कोर करने की कोशिश करनी होती है। इस खेल के खेलने के लिए विशेष नियम होते हैं और एक विशेष वस्तुस्थिति की आवश्यकता होती है। इस शोध में हम ''उच्च माध्यमिक स्तर पर नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति, क्रियान्वयन एवं चुनोतियों का अध्ययन'' के बारे में अध्ययन करेंगे।

नेटबॉल क्या है?

नेटबॉल एक टीम खेल है जो सात खिलाड़ियों वाली दो टीमों के बीच खेला जाता है। खेल का उद्देश्य 10–फुट ऊंचे (3 मीटर) पोल पर लगे रिंग के माध्यम से गेंद को फेंककर गोल करना है। खेल के अंत में सबसे अधिक गोल करने वाली टीम जीत जाती है।

नेटबॉल का संक्षिप्त इतिहास :–

नेटबॉल पहली बार 19वीं सदी के अंत में इंग्लैड में खेला गया था। उस समय, इसेक ''महिला बास्केटबॉल'' कहा जाता था और इउसे मुख्य रूप से स्कूलों और कॉलेजों में महिलाएं ही खेलती थीं।। इस खेल ने जल्दी ही लोकप्रियता हासिल कर ली और दुनिया भर में फैल गया, पहला अंतरराष्ट्रीय मैंच 1938 में इंग्लैंड और ऑस्ट्रेलिया के बीच खेला गया।

नेटबॉल कहां खेलें?

नेटबॉल इनडोर और आउटडोर दोनों कोर्ट पर खेला जा सकता है, जिससे वह एक बहुमुखी खेल बन जाता है जिसे पूरे साल खेला जा सकता है। इसके अलावा कई स्थानीय क्लब और लीग भी हैं, जो सभी उम्र और क्षमताओं के खिलाडियों को इसमें शामिल होने का अवसर प्रदान करते है।

नेटबॉल हार्ड या सॉट कोर्ट पर खेला जाता है जिसमें स्कोरिंग हुप्स या दोनों सिरों पर ''रिंग्स'' होते है। कोर्ट बास्केटबॉल कोर्ट से थोड़ा बड़ा है जो 30.5 मीटर (100 फीट) लम्बा और 15.25 मीटर (50.0 फीट) चौड़ा है। लम्बी भुजाओं को ''साइड लाइन'' कहा जाता है और छोटी भुजाओं को ''गोल लाइन्स'' या ''बैंक लाइन्स'' कहा जाता है। कोर्ट को तिहाई में विभाजित करने वाली दो पंक्तियों को ''अनुप्रस्थ रेखाएं'' कहा जाता है। कोर्ट के निशान 50 मिलीमीटर (2 इंच) से अधिक चौड़े नहीं होते हैं। कोर्ट्स को तिहाई में विभाजित किया गया है जो यह नियंत्रित करती है कि प्रत्येक पद के व्यक्तियों को कहां स्थानान्तरित करने की अनुमति है। एक 0.9 मीटर (3 फीट) व्यास ''सेंटर सर्कल'' कोर्ट के मध्य में स्थित है। कोर्ट के प्रत्येक छोर पर एक 4.9 मीटर (16 फीट) त्रिज्या अर्द्धगोलाकार ''शूटिंग सर्कल'' या ''गोल सर्कल'' है, जिसके भीतर से सभी स्कोरिंग शॉट लिए जाने चालिए। गोल पोस्ट रिंग के शीर्ष से जमीन तक 3.05 मीटर (10.0 फीट) ऊँचे हैं और इनमें कोई बैक बोर्ड नहीं है। रिंगों का अतिरिक्त व्यास 380 मिलीमीटर (15 इंच) होता है, और ये पोस्ट से 150 मिलीमीटर (6 इंच) आगे स्थित होते हैं और 15 मिलीमीटर (0.6 इंच) व्यास वाले स्टील से बने होते।

– **गोल शूटर (जीएस)** : यह खिलाड़ी टीम के अधिकांश गोल करने के लिए जिम्मेदार होता है। वे गोलपोस्ट के करीब तैनात होते हैं और अपनी टीम के लिए अंक स्कोर करने के लिए उनके पास बेहतरीन शूटिंग कौशल, सटीकता

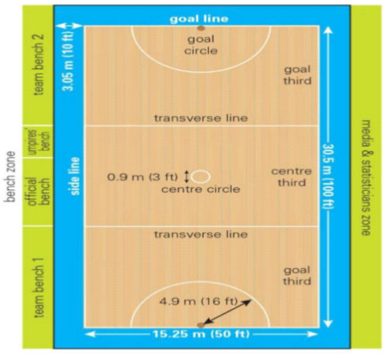

(नेटबॉल कोर्ट चित्र)

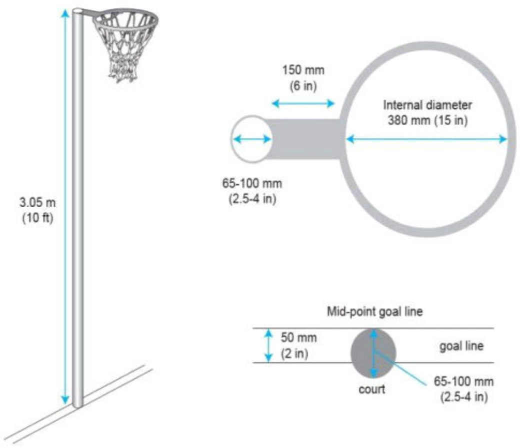

(गोलपोस्ट)

और समन्वय होना चाहिए।

–गोल अटैक (जीए) : गोल अटैक गोल शूटर के साथ मिलकर काम करता है और गोल स्कोर करके और शूट करने के अवसर बनाने में उनकी सहायता करता है। वे गेंद को सेंटर थर्ड से गोल सर्कल तक ले जाने में भी मदद करते हैं।

– विंग अटैक (WA) : विंग अटैक हमलावर खेल की तैयारी करने और गेंद को आगे बढ़ाने में मदद के लिए जिम्मेदार होता है। वे सेंटर प्लेयर के साथ मिलकर काम करते है ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि गेंद कोर्ट में तेजी से और कुशलता से आगे बढे।

– सेंटर (सी) : सेंटर खिलाड़ी टीम के क्वार्टरबैक की तरह होता है। वे खेल को निर्देशित करने और यह सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार होते हैं कि गेंद कोर्ट के एक छोर से दूसरे छोर तक जाए। वे आक्रमण और बचाव दोनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

– विंग डिफेंस (WD) : विंग डिफेंस खिलाड़ी विपक्षी टीम के विंग अटैक को चिन्हित करने और उन्हें गेंद हासिल करने से रोकने के लिए जिम्मेदार होता है। उन्हें फुर्तीला, तेज और बेहतरीन पूर्वानुमान कौशल वाला होना चाहिए।

– गोल डिफेंस (जीडी) : गोल डिफेंस खिलाड़ी विपक्षी टीम के गोल अटैक को रोकने का काम करता है। उन्हें तेज, फुर्तीला होना चाहिए और शॉट्स को डिलेक्ट करने और पास को रोकने के लिए बेहतरीन टाइमिंग होनी चाहिए।

– गोल कीपर (जीके) : गोलकीपर रक्षा की अंतिम पंक्ति है और उसे विपक्षी गोल शूटर को स्कोर करने से रोकना होता है। उन्हें लंबा, फुर्तीला होना चाहिए और शॉट का मुकाबला करने और छूटे हुए शॉट को रिबाउंड करने के लिए उत्कृष्ट कूदने की क्षमता होनी चाहिए।

नेटबॉल खेल खेलना :–

नेटबॉल कोर्ट को तीन भागों में विभाजित किया गया है। बीच का तीसरा भाग वह है जहाँ खेल शुरू होता है, और बाकी दो तिहाई भाग गोल के तीसरे भाग होते हैं। प्रत्येक गोल तीसरे भाग में एक गोल सर्कल होता है, जहाँ गोल स्कोर किए जाते हैं। गोल सर्कल की त्रिज्या 4.9 मीटर है, और गोलपोस्ट 3.05 मीटर ऊँचा है।

एक पूरा मैच 4 क्वार्टर में विभाजित होता है। प्रत्येक क्वार्टर की शुरुआत में, वह टीम जो पिछले क्वार्टर में सेंटर पास से शुरुआत नहीं करती थी, उसे बॉल से शुरुआत करने का मौका मिलता है। अगर खेल बराबरी पर खत्म होता है, तो टीमें 7 मिनट के दो अतिरिक्त हाफ खेलती हैं। अगर अतिरिक्त समय के बाद भी खेल बराबर रहता है, तो विजेता का निर्धारण करने के लिए गोल्डन गोल का इस्तेमाल किया जाता है। सबसे पहले गोल करने वाली टीम गेम जीत जाती है।

उच्च माध्यमिक स्तर शिक्षा का एक चरण होता है जो विद्यार्थियों के शैक्षिक यात्रा का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इस स्तर की शिक्षा विद्यार्थियों को उनके शिक्षा कार्यक्रम के हिस्से के रूप में उच्च शिक्षा और कौशल का परिचय कराती है और उन्हें विषेश विशयों में विशेषज्ञता प्राप्त करने का मौका देती।

विश्व नेटबॉल इतिहास

जैसे–जैसे खेल विकसित हुआ है, वैसे–वैसे अंतरराष्ट्रीय शासी निकाय जैसे कि इंटरनेशनल फेडरेशन ऑफ नेटबॉल एसोसिएशन (आईएफएनए), जिसे अब विश्व

नेटबॉल कहा जाता है, भी समय के साथ बदलता रहा है और वैश्विक परिवेश में चुनौतियों का सामना करता रहा है। कांग्रेस 2011 में ऑस्ट्रेलियाई नेटबॉल दिग्गजों डेइड्रे हाईलैंड एएम और डोरोथी (डॉट) मैकह्यू ओएएम ने अपनी पुस्तक नेटबॉल – स्टेट ऑफ प्लेश का विमोचन किया, जो आईएफएनए की स्वर्ण जयंती के साथ मेल खाते हुए इंटरनेशनल फेडरेशन ऑफ नेटबॉल एसोसिएशन के पहले 50 वर्षों का इतिहास है।

मुख्यतः दस्तावेजी साक्ष्यों पर आधारित यह पुस्तक फेडरेशन के प्रारंभिक विकास, अंतर्राष्ट्रीय खेल के विकास तथा राष्ट्रमंडल से परे नेटबॉल खेल के विकास का पता लगाती है।

राष्ट्रमंडल खेल

नेटबॉल को पहली बार 1998 में कुआलालंपुर में राष्ट्रमंडल खेलों के कार्यक्रम में शामिल किया गया था, जहाँ ऑस्ट्रेलिया ने स्वर्ण पदक, न्यूजीलैंड ने रजत और इंग्लैंड ने कांस्य पदक जीता था। यह 2002 में मैनचेस्टर (इंग्लैंड) में आयोजित राष्ट्रमंडल खेलों में भी एक कार्यक्रमित खेल था, जहाँ ऑस्ट्रेलिया ने फिर से स्वर्ण पदक जीता, न्यूजीलैंड ने रजत और जमैका ने कांस्य पदक के लिए इंग्लैंड को पछाड़ दिया। 2006 (मेलबर्न, ऑस्ट्रेलिया) और 2010 (दिल्ली, भारत) में न्यूजीलैंड ने ऑस्ट्रेलिया को हराया और इंग्लैंड ने कांस्य पदक जीता।

2018 का आयोजन ऑस्ट्रेलिया के गोल्ड कोस्ट में हुआ और पहली बार इन खेलों में पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए समान संख्या में पदक स्पर्धाएँ थीं। इस आयोजन में इंग्लैंड ने इतिहास रच दिया क्योंकि उन्होंने फाइनल में ऑस्ट्रेलिया को एक गोल से हराकर स्वर्ण पदक हासिल किया। जमैका ने कांस्य पदक जीता जबकि न्यूजीलैंड पदक से चूक गया।

यह आयोजन 2022 में इंग्लैंड के बर्मिंघम में आयोजित किया गया, जिसमें जमैका ने इतिहास रचते हुए पहली बार राष्ट्रमंडल खेलों के फाइनल में प्रवेश किया, हालांकि ऑस्ट्रेलिया ने स्वर्ण पदक, जमैका ने रजत और न्यूजीलैंड ने कांस्य पदक जीता।

नेटबॉल विश्व युवा कप

1988 में ऑस्ट्रेलियाई द्विशताब्दी समारोह के हिस्से के रूप में, कैनबरा में 21 वर्ष से कम आयु के खिलाड़ियों के लिए एक युवा टूर्नामेंट आयोजित किया गया था। इसकी सफलता के कारण यह आयोजन हर चार साल में एक बार आयोजित किया जाने लगा। फिजी ने दूसरी विश्व युवा नेटबॉल चौंपियनशिप की मेजबानी की, कनाडा ने तीसरी और वेल्स ने चौथी। ऑस्ट्रेलिया 1988 में विजेता रहा, 1992 में न्यूजीलैंड और 1996 और 2000 में फिर से ऑस्ट्रेलिया विजेता रहा। 2005 में यूएसए में आयोजित विश्व युवा नेटबॉल चौंपियनशिप में न्यूजीलैंड ने स्वर्ण, इंग्लैंड ने रजत और ऑस्ट्रेलिया ने कांस्य पदक जीता। 2009 में कुक आइलैंड्स ने मेजबानी की जिसमें ऑस्ट्रेलिया ने ट्रॉफी फिर से हासिल की, हालांकि वे 2013 में अपने खिताब का बचाव करने में असमर्थ रहे और न्यूजीलैंड ने स्कॉटलैंड में प्रतियोगिता जीत ली।

उच्च माध्यमिक स्तर पर नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का अध्ययन :

उच्च माध्यमिक स्तर पर नेटबॉल खेल की पॉप्युलेरिटी का अध्ययन करना, जैसे कि इसे कितने विद्यालय या कॉलेजों में खेला जाता है और छात्रों की भागीदारी का दर्जा। नेटबॉल की अंषगत सुविधाओं की उपलब्धता और गुणवत्ता का मूल्यांकन करना, जैसे कि कोर्ट्स, सामग्री और अन्य संसाधनों की व्यवस्था। नेटबॉल प्रतियोगिताओं की अवधि और आकार का मूल्यांकन करना जैसे कि इंटर–स्कूल या इंटर कॉलेज प्रतियोगिताओं की व्यापकता।

नेटबॉल और खेल सदस्य

हमें उम्मीद है कि इस शुरुआती गाइड ने आपको नेटबॉल की मूल बातें समझने में मदद की है और आपको गेंद उठाकर इसे आजमाने के लिए प्रेरित किया है। याद रखें, किसी भी खेल में अच्छा बनने की कुंजी अभ्यास है, इसलिए वहाँ जाएँ और खेलना शुरू करें!

खेल का पूरा अवलोकन और नियम वर्ल्ड नेटबॉल वेबसाइट पर देखे जा सकते हैं । ब्रिटेन में हजारों नेटबॉल क्लब हैं, और उनमें से कई अपने क्लब प्रशासन को सुव्यवस्थित करने और अपने क्लब को चलाने में समय बचाने में मदद करने के लिए स्पोर्टमेम्बर जैसी क्लब प्रबंधन प्रणाली का उपयोग कर रहे हैं।

स्पोर्टमेम्बर आपको क्लब के सभी कार्यों को एक स्थान पर एकत्रित करने की सुविधा देता हैय सदस्य डेटाबेस,

कैलेंडर और कार्यक्रम नियोजन, उपस्थिति, सदस्यता शुल्क संग्रह, और बहुत कुछ (एक पूर्णतः एकीकृत और निःशुल्क वेबसाइट सहित)।

Sport Member पर क्लब प्रोफाइल बनाने से आपको क्लब चलाने और उसे व्यवस्थित करने में मदद मिलेगी, और आपको मैन्युअल कार्यों पर बहुत समय की बचत होगी।

नेटबॉल के नियम :–

नेटबॉल खेल के नियम निम्नानुसार है–

1. फुटवर्क :– खिलाड़ी को गेंद पकड़ते समय हमेशा एक पैर जमीन पर रखना चाहिए। फिर वे उस पैर पर घूम सकते हैं, लेकिन वे उछल–कूद नहीं कर सकते या कोई अतिरिक्त कदम नहीं उठा सकते।

2. संपर्क :– खिलाड़ियों को कोर्ट पर अन्य खिलाड़ियों के साथ संपर्क बनाने की अनुमति नहीं है। यदि संपर्क किया जाता है, तो विरोधी टीम को एक फ्री पास दिया जाता है।

3. बाधा :– खिलाड़ियों को किसी अन्य खिलाड़ी की गतिविधि में बाधा डालने की अनुमति नहीं है। यदि कोई खिलाड़ी किसी अन्य खिलाड़ी को बाधा डालता है, तो विरोधी टीम को एक फ्री पास दिया जाता है।

4. ऑफसाइड :– खिलाड़ियों को कोर्ट के अपने निर्धारित तीसरे हिस्से में ही रहना चाहिए, सिवाय सेंटर के जिसे सभी तीसरे हिस्से में खेलने की अनुमति है। अगर कोई खिलाड़ी ऑफसाइड हो जाता है, तो विरोधी टीम को एक फ्री पास दिया जाता है।

5. कोर्ट से बाहर :– यदि गेंद कोर्ट से बाहर चली जाती है, तो विरोधी टीम को उस स्थान से थ्रो–इन दिया जाता है जहां से गेंद बाहर गई थी।

6. स्कोरिंग :– गोल तब स्कोर होता है जब गोल शूटर या गोल अटैक द्वारा गेंद को गोल सर्कल के भीतर किसी भी बिंदु से, गोल सर्कल की सीमा रेखाओं सहित, रिंग के ऊपर या पूरी तरह से फेंका या मारा जाता है।

7. Goals Score :- (गोल होना) एक गोल तभी माना जाता है जब बॉल पूरी तरह से रिंग के अन्दर नीचे आ जाए। और गोल सर्कल के अन्दर से बॉल को ब्वनदज करते ळ। है। GS इसमें गोल लाईन भी शामिल होती है।

– जब एक रोकने/डिफेन्स वाले खिलाड़ी के हाथों में लगर गेंद रिंग के अन्दर चली जाए तो गोल माना जाता है।

– यदि गोल चक्र में टॉस अप होता है तो Galgs टोस जीत जाते है तो वो गेंद को डाल भी सकते है और पास भी दे सकते है।

– गेंद रिंग में डालने से पहले यदि मध्यान्तर की विसल बज जाती है तो गेंद रिंग में विसल होने के बाद डलती है तो यह मान्य नहीं है।

– यदि पेन्ल्टी पास या शॅट मिलता है मध्यान्तर की विसल के पहले तो पास या शॉट काउट माना जाएगा।

– शॉट लेते समय एक खिलाड़ी जो गोल चक्र के बाहर मैदान है उसको छु नहीं सकता न ही बाहर पकड़ सकता है। पैरों के नियमानुसार 03 से. में शॉट करेगा।

8. Goals Not Score :- जब GA या GS द्वारा बॉल को डी के अन्दर से रिंग में डाली जाती है औरवह बॉल रिंग में अन्दर ना जाकर उससे टकरा कर वापस बाहर गिर जाती है वही गोल ना होना कहलाता हे। उस बॉल को या तो उसी टीम का खिलाड़ी ले लेता है या दूसरी टीम का खिलाड़ी लेता है और वह गोल करने के लिए अपने एरिया में ले जाता है।

उच्च माध्यमिक स्तर पर नेटबॉल खेल के क्रियान्वयन की **व्यवस्था का अध्ययन :**

नेटबॉल को शारीरिक शिक्षा पाठ्यक्रम में शामिल करने का अध्ययन करना और यह देखना कि यह एक अनिवार्य या वैकल्पिक खेल है। खिलाड़ियों के लिए प्रशिक्षण और प्रशिक्षण कार्यक्रमों की गुणवत्ता और उपलब्धता जांचें कि नेटबॉल में रूचि रखने वाले छात्रों के लिए अभ्यासकर्ताओं की उपलब्धता। जॉचे कि नेटबॉल द्वारा प्रस्तुत खेल की गुणवत्ता और विभागजन के लिए छात्रों को किस प्रकार के मौके प्रदान किए जाते है, राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर।

खेल के बारे में अम्पायर के हस्त दिशा–निर्देशों का विवरण :–

कैसे, कब और क्यों फाउल हाते है।

1. Start/Restart of Play:- खेल शुरू कराने के लिए संगठन।

– अम्पायर खेल को शुरू तथा दौबारा शुरू करने के लिए विसल बजायेगा।

– सेन्टर पास अम्पायर की विसल पर निर्भर करता है।

– प्रत्येक गोल के पश्चात् खेल दौबारा शुरू होगा प्रत्येक

गोल जुड़ने के बाद प्रत्येक मध्यान्तर के बाद सेन्टरपास लेने के बाद दोनों सेन्टर के पास गोंद एक छोडकर आएगी।

– यदि सेंटर के पास गेंद है और अम्पायर मध्यान्तर की विसल बजा देता है तो मध्यान्तर के पश्चात् सेन्टर पास उसी टीम का होगा।

– हाफ टाइम के बाद वापस मैच शुरू करेगा और एक दूसरे के पास जायेगा।

2. Hod Time (Time out):- जब भी मैंच मे ंकोई इमरजेंसी हो जाए, इंजरी होजाए, बीमार हो जाये, मैदान की लाईन हट जाये या फिर कप्तान या कुाच, मैनेजर द्वारा टाइम लिया जाता है या बॉल मैदान से बाहर जाये और ज्यादा दूर चली जाये तो होल्ड टाइम लिया जाता है।

3. Direction of Pass :- अम्पायर द्वारा जिधर की बॉल होगी उधर का ईशारा करेंगे जब कि एक ओफेन्स वाली टीम के खिलाडी के पास बॉल है और खिलाड़ी ने बॉल मार ली तो वो उधर की बॉल हो जायगी।

उच्च माध्यमिक स्तर पर नेटबॉल खेल की चुनौतियों की जॉच का अध्ययन :

भागीदारों की वाणिज्यिक पर्याप्तता की तरफ बढ़ने के लिए जो छात्रों की तरफ से प्रतिष्ठान अथवा आवश्यकता नहीं मानी जाती है, उसे पता करें। नेटबॉल को समर्थन देने और उसे उच्च माध्यमिक स्तर पर खेलने के लिए सही धन की कमी की जॉच करें और यदि नहीं है, तो इस समर्थन के अभाव के पीछे के कारणों की पहचान करें। कोचिंग और कौषल विकास के लिए दृढ़ कोचों की कमी की जांच करें। नेटबॉल सुविधाओं की स्थिति और उपलब्धता के साथ मुद्दों को हाइलाइट करें।

शोध अन्तराल :

उपरोक्त अध्ययनों पर दृष्टिपात करने पर यह स्पष्ट होता है कि प्रस्तुत शोध कार्यो के चयनित चरों पर कार्य भी हुए है। किन्तु यह कार्य राजस्थान में पढ़ने वाले विद्यार्थियों पर दृष्टिगत नहीं है। अतः प्रस्तावित शोध कार्य औचित्यपूर्ण प्रतीत होता है।

शोध के उद्देश्य :

शोध कार्य हेतु निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये गये है –

1. उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का अध्ययन करना।
2. उच्च माध्यमिक स्तर पर ग्रामीण विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का अध्ययन करना।
3. उच्च माध्यमिक स्तर पर शहरी विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का अध्ययन करना।
4. उच्च माध्यमिक स्तर पर ग्रामीण एवं शहरी विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का तुलानात्मक अध्ययन करना।

शोध परिकल्पना :

उपर्युक्त उद्देश्यों के आधार पर निम्नलिखित परिकल्पनाएँ निर्मित की गयी है–

1. उच्च माध्यमिक विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति में क्षेत्र (ग्रामीण एवं शहरी) के आधार पर कोई सार्थक अंतर नहीं है।

शोध समस्या का परिसीमन

1. शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत शोध कार्य का क्षेत्र अजमेर सम्भाग एवं उदयपुर सम्भाग तक ही सीमित रखा गया।
2. प्रस्तुत शोध कार्य हेतु ग्रामीण एवं शहरी विद्यालयों के उच्च माध्यमिक कक्षाओं में अध्ययनरत किशोर विद्यार्थियों का ही चयन किया गया।

समस्या का औचित्य

विद्यार्थी देश का भविष्य होता है। उनका सर्वांगीण विकास देश की उन्नति में सहायक है। प्रत्येक बालक कुछ जन्मजात विशिष्टताओं को लेकर जन्म लेता है। यदि शिक्षा के माध्यम से उनका सही विकास नहीं हो पाता है तो बालक के व्यक्तित्व का सन्तुलन बिगड़ जाता है और वह अपने भावी जीवन में परिवार व राष्ट्र के लिए बोझ एवं घातक सिद्ध हो सकता है। अतः शिक्षा द्वारा बालक का इस प्रकार विकास किया जाए जिससे वह अपने भावी जीवन में उन्नति करे और राष्ट्र के लिए उपयोगी नागरिक बन सके और इस पवित्र कार्य को सम्पादित करने का दायित्व शिक्षक का ही हैं।

विद्यार्थियों को गुणवत्तापूर्वक, व्यवहारिक मूल्य परक एवं रोजगारपरक शिक्षा प्रदान करने के साथ–साथ शारीरिक शिक्षा भी दी जानी उचित है। यह शिक्षा छात्रों के लिए रोजगार के साथ शारीरिक स्वास्थ्य पर भी लाभदायक सिद्ध होती है।

प्रस्तुत शोध कार्य विद्यार्थ़ियों के दृष्टिकोण से

महत्वपूर्ण हैं। साथ ही विद्यार्थियों के व्यक्तित्व, शारीरिक स्वास्थ्य, सामाजिक उपलब्धि एवं सर्वांगीण विकास के लिए विशिष्ट महत्व रखता है।

न्यादर्श

शोधार्थी द्वारा अजमेर संभाग एवं उदयपुर सम्भाग के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के कुल 100 विद्यालय को न्यादर्श के रूप में चयन किया जाएगा जिसमें 300 छात्र, पीटीआई 100 एवं प्रधानाध्यापक 100 होंगे। इस तरह कुल न्यादर्श 500 होंगे। इन सभी का चयन यादृच्छिक विधि से किया गया।

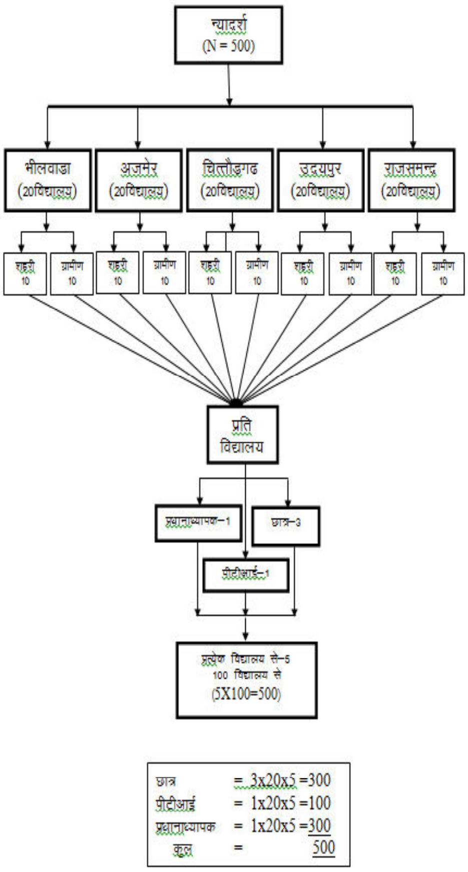

शोध विधि

प्रस्तुत शोध अध्ययन की प्रकृति को देखते हुए शोधार्थी द्वारा सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया।

उपकरण

प्रस्तुत शोध अध्ययन में दंतों के संकलन हेतु निम्नांकित उपकरणों का उपयोग किया गया।

1. वस्तुस्थिति हेतु – स्वनिर्मित

शोध में प्रयुक्त सांख्यिकी

प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्ता द्वारा तथ्यों के विश्लेषण हेतु निम्नलिखित सांख्यिकी का उपयोग किया गया –

1. मध्यमान
2. प्रमाप विचलन
3. टी–परीक्षण

विश्लेषण एवं व्याख्या :

उद्देश्य–1 : उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का अध्ययन करना।

सारणी 1

उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति

कुल विद्यालय	कुल शारीरिक शिक्षक	सहमत प्रतिशत	असहमत प्रतिशत	अस्पष्ट प्रतिशत
100	100	60.00%	15.00%	15.00%

व्याख्या :

शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र में संचालित उच्च माध्यमिक विद्यालय में नेट बॉल के भौतिक संसाधनों की उपलब्धता (वस्तु स्थिति) ज्ञात करने हेतु 5 जिलो में 20–20 विद्यालयों से 100 पीटीआई शिक्षकों को सम्मिलित किया गया। पीटीआई शिक्षकों से प्राप्त उत्तर के आधार पर सारणी संख्या 1 में गणनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

उपरोक्त सारणी 1 के आधार पर यह ज्ञात होता है कि 60.00 प्रतिशत शारीरिक शिक्षकों ने नेट बॉल की भौतिक संसाधनों के उपलब्धता के विषय में सहमति जताई एवं 25. 00 प्रतिशत शारीरिक शिक्षकों ने इसे अस्वीकार किया जबकि 15.00 प्रतिशत ने अस्पष्टता जाहिर की।

अतः निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र में संचालित उच्च माध्यमिक विद्यालय में भौतिक संसाधन उपलब्ध है। जिनमें स्केल संबंधी सामग्री एवं उपकरण आदि उपलब्ध है। किन्तु नियमानुसार नहीं है।

उद्देश्य संख्या–2 : उच्च माध्यमिक स्तर पर ग्रामीण विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का अध्ययन करना।

सारणी 2

ग्रामीण क्षेत्र में संचालित उच्च माध्यमिक विद्यालय में नेट बॉल खेल की वस्तुस्थिति

कुल विद्यालय	कुल शारीरिक शिक्षक	सहमत प्रतिशत	असहमत प्रतिशत	अस्पष्ट प्रतिशत
100	100	50.00%	30.00%	20.00%

व्याख्या :

ग्रामीण क्षेत्र में संचालित उच्च माध्यमिक विद्यालय में नेट बॉल के भौतिक संसाधनों की उपलब्धता (वस्तु स्थिति) ज्ञात करने हेतु प्रत्येक जिले के ग्रामीण क्षेत्रों के 10–10 विद्यालयों से 50 पीटीआई शिक्षकों को सम्मिलित किया गया। पीटीआई शिक्षकों से प्राप्त उत्तर के आधार पर सारणी संख्या 2 में गणात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

उपरोक्त सारणी संख्या 2 के आधार पर ज्ञात होता है कि 50 प्रतिशत शारीरिक शिक्षकों ने नेट बॉल की भौतिक संसाधनों के उपलब्धता के विषय में सहमति जताई एवं 30 प्रतिशत शारीरिक शिक्षकों ने इसे अस्वीकार किया। जबकि 20 प्रतिशत शारीरिक शिक्षकों ने इसे अस्वीकार किया। जबकि 20 प्रतिशत ने अस्पष्टता जाहिर की।

अतः निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में संचालित उच्च माध्यमिक विद्यालय में भौतिक संसाधनों एवं नेटबॉल शारीरिक शिक्षकों का अभाव है। नेट बॉल की कमी है।

उद्देश्य संख्या–3 : उच्च माध्यमिक स्तर पर शहरी विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का अध्ययन करना।

सारणी 3

शहरी क्षेत्र में संचालित उच्च माध्यमिक विद्यालय में नेट बॉल की वस्तुस्थिति (भौतिक संसाधनों) की उपलब्धता संबंधी तथ्यों का विश्लेषण

कुल विद्यालय	कुल शारीरिक शिक्षक	सहमत प्रतिशत	असहमत प्रतिशत	अस्पष्ट प्रतिशत
50	50	70.00%	20.00%	10.00%

व्याख्या :

शहरी क्षेत्र में संचालित उच्च माध्यमिक विद्यालय में नेट बॉल के भौतिक संसाधनों की उपलब्धता (वस्तु स्थिति) ज्ञात करने में 10–10 शहरी विद्यालयों से 100 पीटीआई शिक्षकों को सम्मिलित किया गया। पीटीआई शिक्षकों से प्राप्त उत्तर के आधार पर सारणी संख्या 3 में गणनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

उपरोक्त सारणी संख्या 3 के आधार पर यह ज्ञात होता है कि 70 प्रतिशत शारीरिक शिक्षकों ने नेटबॉल की भौतिक संसाधनों की उपलब्धता के विषय में सहमति जताई एवं 20 प्रतिशत शारीरिक शिक्षकों ने इसे अस्वीकार किया। जबकि 10 प्रतिशत ने अस्पष्टता जाहिर की।

अतः निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि शहरी क्षेत्र में संचालित उच्च माध्यमिक विद्यालय में नेट बॉल मैदान का एवं कोच का अभाव है।

उद्देश्य संख्या–4 : उच्च माध्यमिक स्तर पर ग्रामीण एवं शहरी विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का तुलनात्मक अध्ययन करना।

सारणी संख्या–4

उच्च माध्यमिक स्तर पर ग्रामीण एवं शहरी विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का तुलनात्मक विश्लेषण

क्र.सं.	विद्यालय	आवृति	मध्यमान आवृति	प्रमाप विचलन	टी–मूल्य
1	ग्रामीण विद्यालय	50	41.86	4.22	1.76
2	शहरी विद्यालय	50	39.86	1.70	

df (N1+N2-2)=98

व्याख्या :–

उपरोक्त सारणी संख्या 4 के अनुसार ग्रामीण विद्यालयों का मध्यमान 41.86 है व शहरी विद्यालयों का मध्यमान 39.86 है। ग्रामीण विद्यालयों का प्रमाप विचलन 4.22 है व शहरी विद्यालयों का प्रमाप विचलन 1.70 है। इनके लिए टी–मूल्य की गणना की गई है। गणना से प्राप्त टी–मूल्य का मान 1.76 है। इसके लिए df (N1+N2-2) के द्वारा (50+50–2)df =98 प्राप्त हुआ। इस आधार पर टी–मूल्य के लिए सारणीगत मान 0.01 एवं 0.05 स्तर पर देखे गये जो क्रमषः 2.76 एवं 2.05 है, जो कि टी–मूल्य की गणना द्वारा प्राप्त मान से अधिक है। अतः इस आधार पर परिकल्पना 1 को स्वीकृत किया गया है।

निष्कर्ष :–

इस आधार पर ग्रामीण विद्यालय एवं शहरी विद्यालय

में नेटबॉल खेल की वस्तु स्थिति में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।

शोध निष्कर्ष –

प्रस्तुत शोध कार्य के प्रमुख निष्कर्ष उद्देश्यानुसार इस प्रकार हैं–

1. उद्देश्य–1 : उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का अध्ययन में ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र में संचालित उच्च माध्यमिक विद्यालय में भौतिक संसाधन उपलब्ध है। जिनमें स्केल संबंधी सामग्री एवं उपकरण आदि उपलब्ध है। किन्तु नियमानुसार नहीं है।

2. उद्देश्य संख्या–2 : उच्च माध्यमिक स्तर पर ग्रामीण विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का अध्ययन में पाया गया कि ग्रामीण क्षेत्रों में संचालित उच्च माध्यमिक विद्यालय में भौतिक संसाधनों एवं नेटबॉल शारीरिक शिक्षकों का अभाव है। नेट बॉल की कमी है।

3. उद्देश्य संख्या–3 : उच्च माध्यमिक स्तर पर शहरी विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का अध्ययन पाया गया कि शहरी क्षेत्र में संचालित उच्च माध्यमिक विद्यालय में नेट बॉल मैदान का एवं कोच का अभाव है।

4. उद्देश्य संख्या–4 : उच्च माध्यमिक स्तर पर ग्रामीण एवं शहरी विद्यालयों में नेटबॉल खेल की वस्तुस्थिति का तुलनात्मक अध्ययन में पाया गया कि टी–मूल्य के लिए सारणीगत मान 0.01 एवं 0.05 स्तर पर देखे गये जो क्रमशः 2.76 एवं 2.05 है, जो कि टी–मूल्य की गणना द्वारा प्राप्त मान से अधिक है। अतः इस आधार पर परिकल्पना 1 को स्वीकृत किया गया है। इस आधार पर ग्रामीण विद्यालय एवं शहरी विद्यालय में नेटबॉल खेल की वस्तु स्थिति में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. ए बी ''द रूल्स ऑफ नेटबॉल'', इण्टरनेशनल नेटबॉल फेडरेशन, 27 सितम्बर, 2013

2. ऑल इंग्लेण्ड नेटबॉल एसोसिएशन, 2002, पृ.10

4. ''फास्ट 5 नेटबॉल वर्ल्ड सीरीज, रूल्स ऑफ द गेम'' Fast5worldseries.com.au|Fast5 नेटबॉल वर्ल्ड सीरिज ,मूल पीडीएफ

4. ए बी शेक्सपीयर और काल्डो 2009, पृ. तेरहवे, ए बी स्लेड 2009, पृ. 98

5. ''नेटबॉल नियम : मामूली या 'तकनीकी' नियम, बीबीसी स्पोर्ट अकादमी।

6. यूनाइटेड स्टेट्स ऑफ अमेरिका नेटबॉल ऐसोसिएशन (USANA) Inc. 2010

7. लिवरपूल विश्वविद्यालय महिला बॉस्केटबॉल क्लब, ट्रेगस 2005, पृ. 88–105

8. ऑल इंग्लेण्ड नेटबॉल एसोसिएशन, इण्टरनेशनल फेडरेशन ऑफ नेटबॉल एसोसिएशन, 2008

9. कपिल, एच.के. : ''अनुसंधान विधियाँ'', हर प्रसाद भार्गव पुस्तक प्रकाशन, आगरा, 1981

10. Best, J.W. : "Research in Education", New Delhi, Prentice Hall of India Pvt. Ltd. (1978)

11. Borg Walter, R. : "Educational Research an Introduction", New York Longmans, Green & Co. Ltd., 1963.

12. Buch, M.B. : "A Survey of Research in Education", Centre of Advanced Study in Education, Faculty of education & Psychology, M.S. University of Baroda, India, 1974.

13. Buch, M.B. : "Second Survey of Research in Education", Society for Educational Research & Development, Baroda, India, 1979.

14. Buch, M.B. (1979) : "A second survey of research in education", Baroda society for educational researcher and development.

15. Fox, D.J. : "The Research Process in Education", New York, Halt Rinehart and Winston., 1969

16. Good, C.V. (1945) : "Dictionary of Education", McGraw Hill Book Co., U.S.A.

17. Good, C.V., Bar, A.S. & Scater, D.E. (1935) : "The Methodology of Educational Research". Appleton Centaury Crofts. Inc., New York.

A Comparison of Evaluation System of Teacher Education Programme of Higher Education Institutions

Dr. Reena Agarwal
Professor,
Education Department
Lucknow University,
Lucknow (U.P.)

Lata
Assistant. Professor - B.Ed.
K.N.P.G. Govt. Degree College, Chunar-Mirzapur (U.P.) M. 8865865030
Email Id - latika248@gmail.com

Abstract

The Teacher Education is one of the most concerning topics of NEP 2020 as it contributes in the development of future teaches by inculcating various types of skills. The recommendation in the policy regarding teacher education will help grow the youth to strengthen the country's foundation by skilling the youth as great teachers. The aftermaths of a process are known by its evaluation system. Thus the policy also focuses on evaluation system of teacher education program. The present paper discussed the results drawn from the conclusions of analysis of evaluation system of different type of higher education Institution in light of recommendations of NEP - 2020 and NCFTE 2009. For this data obtained from Ordinances of the program, question papers, results and evaluation related other documents compared in reference of weightage given to different aspect of evaluation system i.e. different type of courses, theory papers, practical, internal, external.

Key Words- Evaluation System, Higher Education Institutions, Program, Course, Universities

Introduction

Teaching is a challenging profession, because teachers have a great responsibility of national building on their shoulders. Thus, it is necessary to prepare for such a great responsibility to bear it successfully. No matter how bright the objectives of education, no matter how advances its means, no matter how alert the administration is, but without effective teachers, the success of the educational program remains doubtful. Evaluation system is a way to assess the effectiveness of teachers, teaching and learning strategies, techniques. It also helps student to know shortcomings and strengths of themselves so that they can make improvement accordingly. Basically, it provides the overall effectiveness of the teaching learning process to all its stakeholders - Teachers, students, parents, concerned authorities and policy makers to make improvements in curriculum, teaching methods, educational environment and teaching material to meet the 21st century challenges.

Evaluation is an ongoing process that is more interested in the desired behavioral change in the relationship between student's feelings, thoughts, and actions rather than in his formal academic performance. Educational assessment is the process of collecting and analyzing data and evidences to determine how each student's behavior develops throughout their academic career. Evaluation is not only concerned with the amount, quantity or frequency of a variable but also matches such an amount, quantity or frequency with relevant criteria for the purpose of making some valued judgment about the observed amount. In essence, the term evaluation involves both quantitative and qualitative description of events, behaviors, things, parameters, or variables as well as value judgment of things or events being described. Thus, evaluation plays a significant role in teacher education programs. Various researches conducted by Mal & Mahato

(2021), Tapsi Howlader (2021), Binoy Roy (2021), Dr. Aditi Sarkar (2019), Kapildeb Sarkar (2019), Bairwa & Mangal (2017), Bhat (2017), Chahal & Manan (2017), Deuri (2016) Chaliha & Gogoi (2019), Mehar (2018) in sphere of Evaluation system have shown that evaluation have a significant role in Education process. The studies conducted by Gunjal (2012), Jagabandhu (2020) and Suokhrie (2021) was on evaluation of U.G. level teacher education programme. The present study is an attempt to evaluated the P.G. level teacher education programme. Thus, it is imperative to compare the evaluation system of Teacher Education program to improve it.

Objective: -

To compare the Evaluation System of Teacher Education Program of Higher Education Institutions.

Research Method: -

This study follows analytical research to evaluate the facts and information related to the conducted research.

Population: - Population of the study is teacher education program of different types of Higher Education Institutions of Uttar Pradesh.

Sample: Sample constitute the Allahabad University (CU) and University of Lucknow (SU) randomly selected from two separate lists; one of Central University (CU) and another is State University (SU)

Delimitation: The study is limited to Master of Education (M.Ed.) Program of Central and State Universities from Uttar Pradesh.

Method of collecting data for the study: - The study is focused on the comparison of evaluation system of Master of Education program of Central University (Allahabad University) and State University (Lucknow University). The program's Ordinances, question papers (www.allduniv.ac.in, www.lkouniv.ac.in) and results (Mark sheets) were studied for the comparative analysis of evaluation system of both universities. The program is divided in four semesters, comprising of various courses i.e. Core courses, Elective courses, Value added courses & Practical activities. Courses were compared semester-wise and year-wise in reference to various components of evaluation system i.e. Internal, External, Practical, Theory, Semester End Exam (SEE) and expressed in % (percentage).

Statistical technique

Weightage of different course categories and evaluation aspects is determined in terms of percentage by the following formulas-

Percentage of the course category for different semesters of Teacher Education Program (Master of Education) -

(Total marks of Course category of Teacher Edcuation Program)/(Total marks of Semester)

Weightage (%) of the course category of the program -

(Total marks of category)/(Total marks of Teacher Edcuation Program)

Analysis of Data: Objective of the study is to compare the Evaluation System of Higher Education Institutions (Central and State universities). For it, the evaluation system of Teacher Education Program - Master of Education is presented, interpreted and compared as displayed in the tables given below-

Table 1 A

Presentation of Evaluation Scheme of M.Ed. program

I Semester of Central and State Universities

	Paper		I Paper	II Paper	III Paper	IV Paper	V Paper	VI Paper	VII Paper	Total	Total %
Allahabad University (CU)	Course type		Core Courses								
	Credit		4	4	4	4	4			20	
	Practical		-	-	-	-	100			100	20
	Theory	External	60	60	60	60	-			240	48
		Internal	40	40	40	40	-			160	32
	Total		100	100	100	100	100			500	100
Lucknow University (SU)	Course type		Core Courses				EC	VC			
	Credit		4	4	4	4	4	4		20	
	Practical		-	-	-	-	100	-		100	16.67
	Theory	External	70	70	70	70	-	70		350	58.33
		Internal	30	30	30	30	-	30		150	25
	Total		100	100	100	100	100	100		600	100

EC = Elective Course, VC = Value Added Course

Table 1 A that in Master of Education - I Semester of Allahabad University (CU), comprises 4 theory core papers and 1 practical of 4 credits each; while Lucknow University (SU) comprises 4 theory core papers, 1 practical, 1 elective paper of 4 credit each and 1 non-credited value-added course. In this way, in Allahabad University (CU) and Lucknow University (SU), Master of Education I Semester is of total 20 and 24 credits, respectively. In Allahabad University (CU), ESE, Internal and practical have gained 48%, 32% and 20%, weightage respectively; while in Lucknow University (SU) it has gained 58.33%, 25% and 16.67%, weightage respectively.

Table 1 B

Presentation of Evaluation Scheme (weightage in percentage) of M.Ed. program - I Semester

	Theory /practical /activities	Theory					Practical		Total
Allahabad University (CU)	Course Type	Core							
	External/Internal	ESE.	In.				Ex.	In.	
	Marks	240	160				60	40	500
	%	48%	32%				12	8	100
	Total %	80%					20%		100
Lucknow University (SU)	Course Type	Core		Elective		VC	Pr.	Pr.	
	External/Internal	Ex.	In.	Ex.	In.	-			
	Marks	280	120	70	30	-	50	50	600
	%	46.67	20%	11.67	5	-	8.33	8.33	100
	Total %	66.67		16.67		-	16.67		100

Pr. = Practical, In = Internal, Ex. = External, ESE = End Semester Exam

The table 1 B that in Master of Education - Semester I of Allahabad University (CU), theory Core papers have gained 80% weightage from witch ESE received 48% and internal received 32%; while in Lucknow University (SU) it has gained 66.67% weightage, from witch External received 46.67% and internal received 20%. In Allahabad University (CU) Elective papers has gained not weightage, while in Lucknow University (SU), it has gained 16.67% weightage from witch External received 11.67% and Internal received 5%. In Allahabad University (CU), Practical has gained 20% weightage from witch External received 12% and Internal received 8%. In Lucknow University (SU), practical has gained 16.67% weightage from witch research Proposal received 8.33% and Review writing of 2 books received 8.33%.

Table 2 A

Presentation of Evaluation Scheme of M.Ed. program

II Semester of Central and State Universities

		Paper	I Paper	II Paper	III Paper	IV Paper	V Paper	VI Paper	VII Paper	Total	Total %	
Allahabad University (CU)	Theory	Course type		Core Courses								
		Credit		4	4	4	4	4			20	
		Practical		-	-	-	-	100			100	20
			External	60	60	60	60	-			240	48
			Internal	40	40	40	40	-			160	32
		Total		100	100	100	100	100			500	100
Lucknow University (SU)	Theory	Course type		Core Courses				EC	EC	VC		
		Credit		4	4	4	4	4	4	-	20	
		Practical		-	-	-	100	-	-	-	100	16.67
			External	70	70	70	-	70	70	-	350	58.33
			Internal	30	30	30	-	30	30	-	150	25
		Total		100	100	100	100	100	100		600	100

The table 2 A Shows that in Master of Education - Semester II of Allahabad University (CU), comprise 4 core theory papers and 1 practical of 4 credits each; while Lucknow University (SU), comprise 3 core theory papers, 1 practical (Core), 2 elective papers of 4 credit each and 1 value added non-credited course.

In this way, in Allahabad University (CU) and Lucknow University (SU), Master of Education - Semester II, is of total 20 and 24 credits respectively. In Allahabad University (CU), practical, ESE and Internal have gained 20%, 48% and 32% weightage respectively; while in Lucknow University (SU) it has gained 16.67%, 58.33% and 25% weightage respectively.

Table 2 B

Presentation of Evaluation Scheme (weightage in percentage) of M.Ed. program - II Semester

	Theory /practical /activities	Theory					Practical		Total
Allahabad University (CU)	Course Type	Core							
	External/Internal	ESE	In.				Ex.	In.	
	Marks	240	160				60	40	500
	%	48%	32%				12	8	100
	Total %	80%					20%		100
Lucknow University (SU)	Course Type	Core		Elective		VC	P. Pr.	Edu. Ex.	
	External/Internal	Ex.	In.	Ex.	In.	-			
	Marks	210	900	140	60	-	50	50	600
	%	35%	15%	23.33	10	-	8.33	8.33	100
	Total %	50		33.33		-	16.67		100

P. Pr. = Psychological Practical, Edu. Ex.= Educational Excursion

The table 2 B shows that in Master of Education - Semester II of Allahabad University (CU) theory Core courses have gained 80% weightage from witch ESE received 48% and internal received 32%; while in Lucknow University (SU) it has gained 50% weightage from witch External received 35% weightage and internal received 15%. In Allahabad University (CU) Elective course have gained no weightage while in Lucknow University (SU) it has gained 33.33% weightage from witch External received 23.33% and Internal received 10%. In Allahabad University (CU) Practical has gained 20% weightage from witch External received 12% and Internal received 18%. on the other hand, in Lucknow University (SU), practical has gained 16.67% weightage from witch Psychological practical received 8.33% and Educational Excursion received 8.33% in University of Lucknow (SU).

Table 3 A

Presentation of Evaluation Scheme M.Ed. program

III Semester of Central and State Universities

Paper			I Paper	II Paper	III Paper	IV Paper	V Paper	VI Paper	VII Paper	Total	Total %
Allahabad University (CU)	Course type		Core Courses								
	Credit		4	4	4	4	4			20	
	Practical		-	-	-	-	100			100	20
	Theory	External	60	60	60	60	-			240	48
		Internal	40	40	40	40	-			160	32
	Total		100	100	100	100	100			500	100
Lucknow University (SU)	Course type		Core (CC)		Elective		CC	EC	VC		
	Credit		4	4	4	4	4	4	-	20	
	Practical		-	-	-	100	-	-	-	100	16.67
	Theory	External	70	70	70	70	-	70	-	350	58.33
		Internal	30	30	30	30	-	30	-	150	25
	Total		100	100	100	100	100	100		600	100

The table 3 A shows that in Master of Education - Semester III of Allahabad University (CU), comprise 4 Core theory papers and 1 Practical of 4 credits each; while Lucknow University (SU) comprises 2 Core papers, 2 Elective papers, 1 practical, 1 Interdepartmental elective course of 4 credit each and 1 value added non-credited course. In this way, in Allahabad University (CU) and Lucknow University (SU) Master of Education - Semester III is of total 20 and 24 credits, respectively. In Allahabad University (CU), practical, ESE and Internal have gained 20%, 48% and 32% weightage, respectively. In Lucknow University (SU) practical, external, and internal have gained 16.67%, 58.33% and 25% weightage, respectively.

Table 3 B

Presentation of Evaluation Scheme (weightage in percentage) of M.Ed. program - III Semester

Theory /practical		Theory							Practical		Total
Allahabad University (CU)	Course Type	Core							Dissertation (CC)		
	Ex./ In.	ESE	In.						Ex.	In.	
	Marks	240	160						60	40	500
	%	48%	32%						12	8	100
	Total %	80%							20%		100
Lucknow University (SU)	Course Type	Core		Elective		ID		VC	SI .		
	Ex./In.	Ex.	In.	Ex.	In.	Ex.	In.	-	100		
	Marks	140	60	140	60	70	30	-	16.67		600
	%	23.33	10	23.33	10	11.67	5	-	16.67		100
	Total %	33.33		33.33		16.67		-	16.67		100

SI = Summer Internship

The table 3 B shows that in Master of Education - Semester III of Allahabad University (CU), theory core courses have gained 80% weightage from witch ESE received 48% and Internal received 32%, while in Lucknow University (SU) theory Core courses have gained 33.33% weightage from witch External received 23.33% and internal received 10%. In Allahabad University (CU) Elective courses gained no weightage while in Lucknow University (SU) it has gained 33.33% weightage from which External received 23.33% and internal received 10%. In Allahabad University (CU) Interdepartmental courses have gained no weightage, while in Lucknow University (SU) it has gained 16.67% weightage, from witch External received 11.67% and internal received 5%. In Allahabad University (CU) there is no provision of Value-added course, on the other hand there is one Value added course in Lucknow University (SU) as compulsory but it has not gained weightage for marks.

In Master of Education - Semester I of in Lucknow University (SU) Practical has gained 20% weightage from witch External received 12% and Internal received 8%, while in Lucknow University (SU) there is provision of Summer Internship of

16.67% weightage.

Table 4 A

Presentation of Evaluation Scheme M.Ed. program

IV Semester of Central and State Universities

		I Paper		II Paper	III Paper	IV Paper	V Paper	VI Paper	Total	Total %
Allahabad University (CU)	Paper									
	Course type (Theory)	Core (CC)		Elective		CC				
	Credit	4	4	4	4	4		20		
	Practical	-	-	-	-	100		100	20	
	Theory External	60	60	60	60	-		240	48	
	Theory Internal	40	40	40	40	-		160	32	
	Total	100	100	100	100	100		500	100	
Lucknow University (SU)	Course type	CC	Elective		MD	ID	VC			
	Credit	4	4	4	8	4	-	24		
	Practical	-	-	-	200	-	-	200	33.33	
	External	70	70	70	-	70	-	280	46.67	
	Internal	30	30	30	-	30	-	120	20	
	Total	100	100	100	200	100		600	100	

MD= Master Dissertation, Candidates scoring 60% and above will be allowed for opting dissertation.

The table 4 A shows that in Master of Education - Semester IV of Allahabad University (CU) comprise 2 core theory papers, 2 electives papers and 1 practical of 4 credits each, while Lucknow University (SU) comprise 2 core papers, 2 elective papers, 1 interdepartmental elective course of 4 credits each, 1 practical of 8 credits and 1 value added non-credited course. In this way, Master of Education Semester IV, of Allahabad University (CU) and Lucknow University (SU) is of 20 and 24 credits in total, respectively. In Allahabad University (CU), Practical, ESE and Internal have gained 20%, 48%, and 32% weightage respectively; on the other hand, in Lucknow University (SU), Practical, External, and Internal have gained respectively 33.33%, 46.67%, and 20% weightage.

Table 4 B

Presentation of Evaluation Scheme (weightage in percentage) of M.Ed. program - IV Semester

Theory /practical		Theory							Practical		Total
Allahabad University (CU)	CT	Core		Elective					Dissertation (CC)		
	Ex./ In.	ESE	In.	ESE	In.				Ex.	In.	
	Marks	120	80	120	80				60	40	**500**
	%	24	16	24	16				12	8	**100**
	Total %	40%		40%					20%		**100**
Lucknow University (SU)	CT	Core		Elective		ID		VC	MT		
	Ex./In.	Ex.	In.	Ex.	In.	Ex.	In.	-	200		
	Marks	70	30	140	60	70	30	-	33.33		**600**
	%	11.67	5	23.33	10	11.67	5	-	33.33		**100**
	Total %	**33.33**		**33.33**		**16.67**		**-**	**16.67**		**100**

The table 4 B shows that in Master of Education-Semester IV, of Allahabad University (CU), theory Core courses have gained 40% weightage from which ESE received 24% and internal received 16% while in Lucknow University (SU) theory Core courses have gained 16.67% weightage from which External received 11.67% and Internal received 5%. In Master of Education - Semester III, of Allahabad University (CU), Elective courses have gained 40% weightage from witch External received 24% and Internal received 16, while in Lucknow University (SU) Elective Course has gained 33.33% weightage, from witch External received 23.33% and internal received 10%. In Allahabad University (CU) Interdepartmental Courses have gained no weightage, while Lucknow University (SU) it has gained 16.67% weightage from witch External received 11.67% and internal received 5%. On the other hand, where CU (AU) don't have any Value-added course, SU (LU) have 1 Value added course as compulsory but it gained no weightage for marks. In Master of Education - Semester IV of Allahabad University (CU), Dissertation has gained 20% weightage from witch External received 12% and Internal received 8%, while in Lucknow University (SU) Master Thesis has gained 33.33% weightage.

Table 5

Presentation of Evaluation structure M.Ed. program - I to IV Semester of Central and State Universities

Theory/ practical/ activities	Allahabad University (CU)					Lucknow University (SU)				
	CT	ESE / In.	Marks	%	Total %	CT	ESE / In.	Marks	%	Total %
Theory	CC	ESE	840	42%	70%	CC	Ex	700	29.17	41.67
		In	560	28%			In	300	12.50	
	EL	ESE	120	6%	10%	EC	Ex	490	20.42	29.17
		In	80	4%			In	210	08.75	
						ID	Ex	140	05.83	8.33
							In	060	02.50	
Internship	CC	ESE	60	3%	5%	P		200	8.33	
		In.	40	2%						
Self. Development	CC	ESE	60	3%	5%	SI		100	04.17	20.83
		In.	40	2%						
Dissertation	CC	ESE	120	6%	10%	MD		200	08.33	
		In.	80	4%						
Total			2000	100%	100%			2400	100%	100%

O = Optional, EC = Elective Course, MD = Master Thesis, CT = Course Type, C = Compulsory, O = Optional, P = Practical

The table 5 shows that Master of Education Program (Semester I to IV) in Allahabad University (CU), theory Core courses has gained 70% weightage from witch ESE received 42% and internal received 28%, while in Lucknow University (SU) Core theory has gained 41.67% weightage from witch external received 29.17% and internal received 12.50%. The table also shows that in Allahabad University (CU), Elective courses has gained 10% weightage from witch external received 6% and internal received 4%, in Lucknow University (SU) Elective courses have gained 29.17% weightage from witch External received 20.42% and Internal received 8.75%.

The tables also show that in Master of Education Program of Allahabad University (CU), Interdepartmental (ID) course has gained no weightage, while in Lucknow University (SU) it has gained 8.33% weightage, from witch External received 5.83% and Internal received 2.50%. There is no provision of Value-added course in Allahabad University (CU) Master of Education Program, while in Lucknow University (SU) there is 1 Value added course (ESE) as compulsory but it has gained no weightage in respect of marks.

The table also shows that in Master of Education Program of Allahabad University (CU), Internship has gained 5% weightage from witch External received 3% and internal received 2%, Self-Development has gained 5% weightage from witch External received 3% and internal received 2%, while Dissertation has gained 10 % weightage from witch External received 6% and internal received 4%. In Lucknow University (SU) practical has gained 20.83% weightage from witch 8.33%, 4.17%, and 8.33% weights, going to Practical, Summer Internship and Master Thesis respectively.

Conclusions

In both university - Allahabad (CU) and Lucknow (SU), the M.Ed. Program have similar % of weightage for theory (80% & 79% respectively) and Practical (20% & 21% respectively).

In Allahabad University (CU), each course of the M.Ed. Program has an 60% external weightage whereas in Lucknow University (SU), it is 70%.

In Lucknow University (SU), the M.Ed. program has 30% internal weightage for each theory course while in Allahabad University (CU) it is 40%.

In Allahabad University (CU), the Practical in M.Ed. Program are divided into external and internal weightage of 60% & of 40% respectively whereas in Lucknow University (SU) has 100% external evaluation.

In both universities, the M.Ed. Program have Dissertation as core and compulsory.

In Allahabad University (CU) the Program does not have Value added and Inter-departmental course while University of Lucknow (SU) has both.

In Lucknow University (SU), the Program includes Review Writing of two books, while in Allahabad University (CU) it is not.

In Lucknow University (SU), the Program has Education Excursion as Practical activity; while in Allahabad University (CU) it is not.

Lucknow University (SU), The Program included Writing a Research Paper for publication while it is not in Allahabad University (CU).

In both Universities the Program has Internship as core and compulsory.

In Allahabad University (CU), the Program does not have educational Psychological Practical as practical while it is in University of Lucknow (SU).

Discussions of Results

Teaching, one of the largest professions, employs around million teachers in India and still there is a shortage of teachers. The demand for high quality teachers is continuously increasing. That's why recent Education Policy (NEP) 2020 focused on Teacher Education and suggested comprehensive change to attract and retain high quality teachers in teaching profession.

It is evident that theory courses have more weightage and practical has less weightage in M.Ed. Programme of both universities. NCFTE 2009 has

pointed towards the major shortcoming of evaluation process of present teacher education practice that it is restricted to measure cognitive learning through terminal test. While NEP 2020 recommended that "revamping curriculum, pedagogy, assessment, and student support for enhanced student's experiences (Page no. 34)." S. Jagabandhu (2020) found that both student-teachers and teacher-educators agree that the present evaluation system of pre-service teacher education program at secondary level in Odisha does not focus equally on theory and practical. K. Suokhrie (2021) found in his study that some teacher-educators were of the opinion that student-teachers were equally participating in practical activities along with theories so more marks may be allotted to practical works. Teacher education programs aiming for holistic development. If they encourage more on theory, then it defeats the very purpose and essence of constructivism. Thus, it is suggested for equal distribution of marks in both theory and practical in post graduate level teacher education program to make it focused on holistic development of teachers.

It is observed that in both CU and LU, the Master of Education program has received more External weightage and less internal weightage in each theory paper as well as for Dissertation/Master Thesis and Practical activities. Gunjal (2012) conducted a study to compare the internal and external evaluation on 100 student-teachers of three colleges of Ahmedabad city and found that there was no consistency between internal and external evaluation. B.Ed. student-teachers got 28% to 30% more marks in internal evaluation in comparison to external evaluation. K. Suokhrie (2021) found in his study 88.88% principals of teacher education institutions were not agree with that internal assessment is just an instrument for improving overall examination result of the student-teachers. Teacher-educators satisfy all the components of internal assessment and marks were not blindly allotted to the student-teachers. 12.5% principals felt that if teacher-educators objectively assess and evaluate student-teachers, then internal assessment should have better outcomes than external evaluation, because it helps in enhancing student-teachers engagement in teaching learning process. 37.5% mentioned that internal assessment covers both scholastic and co-scholastic aspects of the students. It aims to encourage, motivate and improve their overall performance. Some of the teacher-educators felt that less weightage was allotted for internal assessment and suggested to increase the weightage of internal assessment. Internal weightage can be increased as it makes evaluation system more continuous and comprehensive which is also recommended by the NEP 2020.

It is observed that both universities are following credit-based Semester system for Master of Education Program which is also recommended by University Grant Commission (UGC) on Page no.36 of Evaluation Reforms in HEIs and NEP 2020 recommended on page no. 38 that "HEIs shall also move away from high-stakes examinations towards more continuous and comprehensive evaluation".

In the present study, it was observed that some type of courses as Elective/open elective, Value Added, Inter-departmental have given less weightage or did not include in structure of universities' post graduate level teacher education program. Thus, it has to be improvised and move towards achieving academic excellence. Book review, writing of research paper, psychological practical and educational excursion do not find place in the M.Ed. program of Allahabad University. These courses must be included in the M.Ed. program of Allahabad University because these activities provides first hand experiences to the students and also develops higher mental abilities such as, critical thinking, creative thinking, problem solving etc. Thus, Various type of courses should be included with appropriate weightage as NEP 2020 also recommended it.

NCFTE-2009 on page no. 83 criticized the Master of Education program offered by different universities and consider it as an extension of the

Bachelor of Education (B.Ed.) program as it seriously lacks inputs focused on the preparation of teacher educators. In this regard, NEP2020 recommended that "Teachers must be grounded in Indian values, languages, knowledge, ethos and traditions including tribal traditions, while also being well-versed in the latest advances in education and pedagogy (Page no. 42)."

Reference

Bariwa, A. K., & Mangal, S. C. (2017). The Attitude of Teachers towards activities conducted under CCE with reference to Teaching-Learning process, Classroom Environment and Role of Teacher. Education Quest: An International JOurnal of Education and Applied Social Science, 8(2), 583-587.

Bhat, S. M. (2017). Attitude towards Choice Based Credit System of Graducate Level students in Higher Education: A study on Goverenment Degree College for women Anantnag, Kashmir. Recent Educational and Psychological Researches, 6(3), 47-51.

Chahal, D., & Manan, M. M. (2017). Attitude towards Choice Based Credit System (CBCS) of Post Graduate Level Students in Higher Education: A Study on Central Unversity of Haryana. Samwaad: e-Journal, 6(2), 63-193.

Chaliha, M., & Gogoi, P. K. (2019). A Study on attitude towards Semester System of Students at the Undergraduate Level of General Degree Courses. Research Guru (Peer Reviewed), 12(4), 479-484.

Deuri, C. (2016). Attitude towards Choice Based Credit System of Post Graduate Level Students in Higher Education : a study on Gauhati University. International Journal of Interdisciplinary Research in Science Society and Culture (IJIRSSC), 1(2), 115-122.

Dongerkery, S. R. (1948). University and their Problems. Bombay: Hind Kitab Limited.

Gunjal, P.V. (2012). A study of Internal and External Evaluation of B.Ed. student teachers. International Multidisciplinary e-Journal, I(VIII), 14-19.

Howlader, T. &. (2021, February 2). Attitude towards Choics based Credit system (CBCS) of under-Graduate students' in relation to their Academic Achievement. International Journal of Creative Research Thoughts (IJCRT), 9(2), 703-711.

Jagabandhu, S. (2020). Evaluation of pre-service teacher education program at secondary level in Odisha. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/404844/11/12_chapter6.pdf retrieved on 07.12.2024

Mal, S., & Mahato, U. (2021). Attitude towards to choice based credit system (CBCS) of under graduate Level students in Higher Education: A Study on Degree Colleges Under Sikho-Kanho-Birsha University in West Bengal. International Journal of Multidisciplinary Education Research, 10(1), 13-16.

Meher, D. (2018). Opinion of Undergraduate and Postgraduate students of Gangadhar Meher University (GMU) Sambalpur regarding Semester System in relation to gender and Stream. International Journal of Ressearch and Analytical Reviews, 5(3).'

NCTE (2009). National Curriculum Framework for Teacher Education (2009). New Delhi

Roy, N., Khanam, U., & Devi, T. (2013). Attitude towards Choice Based Credit system of PG Level students in Higher Education: A Study on Assam University. Scholarly Research Journal for Interdisciplinary studies, 1, 1198-1208.

Suokhrie, K. (2021). A Study of the Assessment and Evaluation Practice of Secondary Teacher Education Program in Nagaland. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/426780/9/09_chapter%205.pdf retrieved on 07.12.2024

Sarkar, A. (2019). Attitude of Undergraduate Teachers and Students towards Choice Based Credit System (CBCS) - A Study on Basanti Devi College. Journal of Emerging Technologies and Innovative Research, 6(5), 682-684.

Sarkar, K. (n.d.). Attitude of Graduate Students towards Choice Based Credit System. Pramana Research Jounal, 9(10), 34-48.

Govt. of India (2020). National Education Policy 2020. https://www.mhrd.gov.in/sites/ upload_files/mhrd/files/NEP_Final_English_0.pdf retrieved on 15 October, 2021

Government of India - University Grants Commission, (2009). Evaluation Reform in Higher Educational Institutions. New Delhi retrieved from www.ugc.ac.in

Website -

allduniv.ac.in

lkouniv.ac.in

मूर्तिकार अंकित पटेल के मूर्तिशिल्पों की प्रविधि

डॉ मनोज कुमार टेलर,
विभागाध्यक्ष एवं एसोसिएट प्रोफेसर,
विजुअल आर्ट विभाग, वनस्थली विद्यापीठ
प्लॉट नं.– 50, चंद्र नगर, 9 दुकान, झोटवाड़ा, कालवाड़ रोड़ जयपुर– 302012 मो : 9636489033, ई–मेल : kumarsharmashiv@gmail-com

शिव कुमार शर्मा
शोधार्थी, वनस्थली विद्यापीठ निवाई, टोंक (राज.)304022
मो. 9636489033
Email : kumarsharmashiv@gmail.com

सारांश :

अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त राजस्थान के समसामयिक मूर्तिकार अंकित पटेल का जन्म वर्ष 1957 में मोटावराछ गांव, गुजरात में हुआ। स्कूली शिक्षा एन. एम. पी. अमरोही हाई स्कूल में कक्षा आठवीं से 11वीं तक व कला शिक्षा की शुरुआत वर्ष 1976 में गुजरात के एम.एस. विश्वविद्यालय बड़ौदा के मूर्तिकला संकाय में हुआ। फैकल्टी ऑफ फाइन आर्ट्स, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बडोदरा का एक अंग है, जो 1950 ई. में स्थापित हुआ। यह देश के प्रथम ललित कला संकाय के रूप में स्थापित हुआ, जहां बी.एफ. ए. तथा एम.एफ.ए. की डिग्री दी जाती है।"

प्रस्तावना :

आज के इस आधुनिक परिवेश में जहां मूर्तिकार समकालीन मूर्तिकला में कार्य करने के साथ–साथ रोज नवीन प्रयोग करता है और अपनी इस यात्रा को आगे बढ़ाने में लगा रहता है एक मूर्तिकार अपनी विशिष्ट पहचान अपने कार्य की शैली तकनीक व माध्यम के प्रयोग द्वारा बना पाता है मूर्तिकार अपने विचारों को गढ़ने से पहले उन पर चिंतन करता है चिंतन से प्राप्त विचारों को आकार प्रकार देने की शुरुआत करता है। इसे एक प्रक्रिया से शुरू कर अंतिम रूप प्रदान करता है। इस अंतिम रूप के शुरू से अंत की जो यात्रा है यही उस मूर्तिकार की प्रविधि है। जो उसे दूसरे मूर्तिकारों से विशिष्ट बनाती है उसे कला जगत में एक नई पहचान दिलाती है जिसे वह सम्मान रूप पाकर समाज में आने वाली नई पीढ़ियों के लिए भी मार्गदर्शन का कार्य करती है। ष्बच्चे ही किसी भी समाज का भविष्य होते हैं। अतः बच्चों को संस्कारित करना किसी भी समाज की प्रथम आवश्यकता है और यह कला के माध्यम से ही संभव है।" समाज भी ऐसे कलाकार को धरोहर स्वरूप एक विशिष्ट पहचान के साथ उनके कार्यों की सराहना करता रहता है जिससे कि आने वाली पीढ़ियां उनसे प्रेरणा पाकर आगे बढ़ सके।

व्यक्तित्व

अंकित पटेल ने अपने कार्य की प्रविधि से सभी को अपनी ओर आकर्षित किया है जैसा उनके बारे में कहा जाता है कि वह बचपन से ही मेहनती और ईमानदार रहे उनके इन गुणों की वजह से ही वे अपने जीवन में भी अनुशासन ला पाए और अपने कार्य के प्रति समर्पित रहे अंकित पटेल जब शिक्षा ग्रहण के लिए एम.एस. यूनिवर्सिटी थे, उस दौरान उन्हें मूर्तिकला संकाय में कलागुरु महेंद्र पांड्या का सानिध्य मिला जिसकी छवि हम उनके जीवन शैली व कार्य प्रविधि में भी देखते हैं। महेंद्र पांड्या अपूर्णता के माध्यम से संयोजन व भव्यता दिखाना चाहते थे। यही बात उन्होंने अपने छात्रों और शिल्पकार लतिका कट्ट, दीपक कन्नल, किरिट पटेल और अंकित पटेल (जो काइनेटिक मूर्तिशिल्प के लिए जाने जाते हैं) को सिखाया।" बड़ौदा रहते हुए अंकित ने हमेशा से ही विचारों को महत्व दिया और कार्य करने के लिए वे अपने विचारों को सर्वप्रथम कागज पर स्केच के माध्यम से उतारते रहते हैं। कार्य को मूर्तिशिल्प में किस माध्यम में बनाया जाए यह भी विचारणीय है और वे जिस भी माध्यम का चयन करते साथ ही साथ उसके लिए वे पहले एक मेकेट तैयार करते हैं जिससे उसे मेकेट का कलर, टेक्सचर, आकर, बेसिक तत्वों को विजुअली देख पाए और प्रयोग के साथ–साथ रचनात्मक पक्ष को भी मजबूत कर पाए मेकेट तैयार होने के बाद मूर्तिशिल्प को अंतिम आकार देने के लिए तैयार किया जाता है इसके लिए किसी भी माध्यम का

प्रयोग किया जा सकता है।

कृतित्व

अंकित पटेल एक सरल सौम्य स्वभाव के साथ ईमानदार व्यक्तित्व के धनी हैं। इन्होंने अपने बाल्यकाल के खेल में अपने ग्रामीण जीवन से जुड़ी पौराणिक यादों और प्राकृतिक दृश्यों को अपने मूर्तिशिल्पो में बहुत महत्व दिया है मेहनती स्वभाव के धनी अंकित पटेल छात्र अवस्था से ही प्रयोगवादी रहे हैं इन्होंने अपने कार्य को संपूर्ण समय दिया और अपने मूर्तिशिल्पों को बनाने के लिए सबसे पहले रचनात्मक रेखांकन किया।

अंकित पटेल के मूर्तिशिल्प की विशिष्ट प्रविधि की बात करें तो जिससे उन्होंने कला जगत में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई उनके द्वारा बनाए गए काइनेटिक मूर्तिशिल्प हैं जिसके लिए आज देश–विदेश में उन्हें बहुत ख्याति प्राप्त हुई है। "Ankit Patel is a sculptor : working with Kinetic movement] in his large scale metal sculptures- his famous though organic, are not figurative"4 अंकित को काइनेटिक मूर्तिशिल्पों की प्रेरणा मंदिर पर स्थापित कलश पर लहराते हुए झंडे से मिली। उनसे किए गए साक्षात्कार में उन्होंने बताया कि सर्वप्रथम उन्होंने एम.एस. यूनिवर्सिटी बडौदा में ही अपना प्रथम काइनेटिक मूर्तिशिल्प बनाया, जो उनके शुरुआती वुड माध्यम में था जिसके लिए उन्होंने वुड के साथ मेटल का भी उपयोग किया और उनके बाद के काइनेटिक मूर्तिशिल्प में मेटल प्लेट का उपयोग किया जिसके माध्यम का विचार उनके मन में तब आया जब वह एक बार जयपुर में स्थित किशनपोल बाजार में बर्तन बनाने वाले (ठठेरो के मोहल्ले) से गुजर रहे थे जिस तरह से वे बर्तनों को पीट–पीट कर तैयार कर रहे थे और कम वजन के साथ बड़ा आकार भी तैयार कर रहे थे ऐसा नजारा देख उन्होंने मेटल शीट के साथ अपने रचनात्मक काइनेटिक मूर्तिशिल्प को तैयार करने का विचार किया और मूर्तिशिल्पों को अंतिम रूप भी प्रदान किया।

एक आधुनिक कलाकार के रूप में हमेशा से ही इन्हें वुड व मेटल अपनी और बहुत आकर्षित करते हैं आज भी मूर्तिकार द्वारा अपने आसपास का वातावरण वुड व मेटल में समाया हुआ दिखाई देता है 1931 ई. में अलेकजेंडर कालडर की मोटरों द्वारा संचालित मूर्तियों को मार्सेल धुंशा द्वारा 'मोबाइल' नाम दिया गया जिसका फ्रेंच अर्थ 'गति' और 'मकसद' दोनों था"5 पुरानी वस्तुओं, औजारों व मशीनों की तरफ भी इनका बहुत रुझान है। प्रयोग पुरानी वस्तुओं पर किया जा सकता है और नए विचारो का आविष्कार भी यहीं से होता है और तकनीक को सरल बनाने के लिए औजारों की आवश्यकता होती है जिन्हें जरूरत के साथ नवीन प्रयोग करने में इस्तेमाल किया जाता है। "भारतीय कलाकारों ने भी इमानदारी से इस रोमांचक स्थिति को देखा और अपने कार्यों में तकनीकों का प्रयोग करना आरंभ किया। मूर्तिशिल्प के पारंपरिक माध्यम जैसे पत्थर, धातु नए तथा अनौपचारिक मिश्रणों नवीन तकनीकों में बदल गये जैसे स्थल विशिष्ट संस्थापन और घूमने दृफिरने वाले मूर्तिशिल्प।"6 इन्होंने अपनी कार्यशाला में औजारों व मशीनों का जो रख रखा किया हुआ है वह भी उनके स्वभाव को दर्शाता है। इन्होंने

चित्र संख्या 1

अपनी कार्यशाला में नए व पुराने औजारों व मशीनों का रखरखाव इतने अच्छे तरीके से किया हुआ है कि मानो जैसे एक गृहणी द्वारा अपना रसोई घर तैयार किया हुआ हो। अपनी कार्यशाला में औजारों व मशीनों के अलावा प्राकृतिक पौधों का रखरखाव भी किया है जो वातावरण को सकारात्मक बनाए हुए हैं अंकित अपना ज्यादा से ज्यादा समय अपनी कार्यशाला में ही बिताना पसंद करते हैं जिससे वे अपने कार्य को ज्यादा समय दे सके व नवीन प्रयोग कर सके।

चित्र संख्या 2

अपनी कार्य प्रविधि को मजबूत करने के लिए हमेशा नए प्रयोग करते दिखाई देते हैं। मूर्तिशिल्प के माध्यम की खोज अक्सर वे स्वयं बाजार में जाकर करते हैं और साथ ही वे ऐसे व्यक्तियों से भी मिलना पसंद करते हैं जिनसे वे नई–नई तकनीक सीख सके जैसे कि ऐसे व्यक्ति जो अपने कार्य कौशल को तकनीकी रूप से बहुत आसानी से कर पाते हैं जैसे बर्तन बनाने वाले, वेल्डिंग करने वाले, मशीनों को सुधारने वाले कारीगर, वुड की कटिंग हो या भिन्न–भिन्न प्रकार के विशिष्ट कारीगर होते हैं।

उपसंहार

समकालीन कला में अंकित पटेल की कला का बहुत महत्व है अपने कार्यों की विशिष्ट पहचान के कारण अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान कायम किए हुए हैं। इन्होंने अपने विषयों को अपने ग्रामीण जीवन से लेकर समकालीन कला में विलीन किया है और अपने प्रयोगवादी सिद्धांत व तकनीक को सौंदर्यात्मक पक्षों के साथ जोड़कर दिखाया है जिससे समाज के अन्य कलाकारों, कला समीक्षकों व छात्रों को समकालीन कला का एक नया रूप देखने को मिले एवं समाज की आने वाले पीढ़ियों के लिए सदैव प्रेरणा स्रोत के रूप में जाने जाएंगे। "कलात्मक माध्यम का जो रूप समाज ने विकसित किया है उसी को वह प्राप्त करता है समाज में प्रचलित माध्यम और सामग्री का ही प्रयोग करता है पर उसके प्रयोग का ढंग अपना होता है जिस प्रकार जन समुदाय अपनी–अपनी भाषाओं को समझते हैं।"7 समकालीन कला के क्षेत्र में इन्होंने भारत में ही नहीं विदेशों में भी अपनी अनूठी छाप छोड़ी है। उनकी शैली आने वाली पीढ़ियों के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है जिससे भविष्य के मूर्तिकारों को नए प्रयोग करने की प्रेरणा के साथ ही इनकी प्रयोगवादी तकनीक को समझने में एवं भारतीय मूर्तिकला को नए आयाम प्रदान करने में निश्चित रूप से सहायता मिलेगी।

संदर्भ सूची :

1. राकेश गोस्वामी– भारतीय चित्रकला का इतिहास, प्रयागराज, तृतीय संस्करणः फरवरी 2024, पृष्ठ – 390
2. डॉ. मीनाक्षी कासलीवाल 'भारती'– ललित कला के आधारभूत सिद्धांत, जयपुर, 2024 ,पृष्ठ –185
3. राकेश गोस्वामीरू भारतीय चित्रकला का इतिहास, प्रयागराज, तृतीय संस्करण : फरवरी 2024, पृष्ठ दृ390
4. Pratima Sheth: Dictionary of Indian Art and Artists, United States of America, 2006, pg– 272
5. राकेश गोस्वामी– पाश्चात्य कला का इतिहास, प्रयागराज, 2022, पृष्ठ –176
6. डॉ. कृष्णा महावर – नवीन मीडिया कला, जयपुर, 2022, पृष्ठ 245
7. अशोक– कला सौंदर्य और समीक्षा शास्त्र, राजा मंडी आगरा 2022, पृष्ठ दृ127,128
8. चित्र संख्या 1 – मूर्तिकार अंकित पटेल अपनी कार्यशाला में कार्य करते हुए।
9. चित्र संख्या 2 – मूर्तिकार अंकित पटेल अपनी कार्यशाला में कार्य करते हुए।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस एक नए युग की शुरुआत

विजया तिवाड़ी
एग्जीक्यूटिव डायरेक्टर फोरेंसिक विंग फेडरेशन
मो. 9521753849
Email : vijayatiwari31@gmail.com

प्रस्तावना :

डिजिटल सुरक्षा की बात करें तो आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) दोधारी तलवार हो सकती है। जबकि AI का उपयोग डिजिटल सुरक्षा को बेहतर बनाने के लिए किया जा सकता है, लेकिन हमलावरों द्वारा इसका उपयोग अधिक परिष्कृत और खतरनाक हमले करने के लिए भी किया जा सकता है।

उद्देश्य :

AI का उपयोग दुर्भावनापूर्ण उद्देश्यों के कारण कितना खतरनाक हो सकता है

1. AI–संचालित फिशिंग हमले
2. AI–संचालित मैलवेयर
3. AI–संचालित सोशल इंजीनियरिंग
4. AI–चालित सेवा से इनकार (DoS) हमले
5. AI–संचालित डेटा विषाक्तता

1. AI–संचालित फिशिंग हमले : AI का उपयोग अत्यधिक विश्वसनीय फिशिंग ईमेल बनाने के लिए किया जा सकता है, जिससे उपयोगकर्ताओं के लिए वैध और दुर्भावनापूर्ण ईमेल के बीच अंतर करना अधिक कठिन हो जाता है।

2. AI–संचालित मैलवेयर: AI का उपयोग अधिक परिष्कृत मैलवेयर बनाने के लिए किया जा सकता है जो पारंपरिक सुरक्षा प्रणालियों से बच सकता है और नए वातावरण के अनुकूल हो सकता है।

3. AI–संचालित सोशल इंजीनियरिंग: AI का उपयोग अत्यधिक विश्वसनीय सोशल इंजीनियरिंग हमले बनाने के लिए किया जा सकता है, जैसे कि वॉयस फिशिंग (विशिंग) या SMS फिशिंग (स्मिशिंग)।

4. AI–चालित सेवा से इनकार (DoS) हमले: AI का उपयोग अधिक परिष्कृत DoS हमलों को लॉन्च करने के लिए किया जा सकता है जो पारंपरिक सुरक्षा प्रणालियों को प्रभावित कर सकते हैं।

5. AI–संचालित डेटा विषाक्तता: AI का उपयोग मशीन लर्निंग मॉडल को प्रशिक्षित करने के लिए उपयोग किए जाने वाले डेटा को विषाक्त करने के लिए किया जा सकता है, जिससे पक्षपाती या गलत परिणाम सामने आते हैं।

डिजिटल सुरक्षा को कैसे बेहतर बनाए –

1. विसंगति का पता लगाना
2. पूर्वानुमानित रखरखाव
3. घटना प्रतिक्रिया
4. सुरक्षा सूचना और घटना प्रबंधन (SIEM)
5. पेनेट्रेशन टेस्टिंग

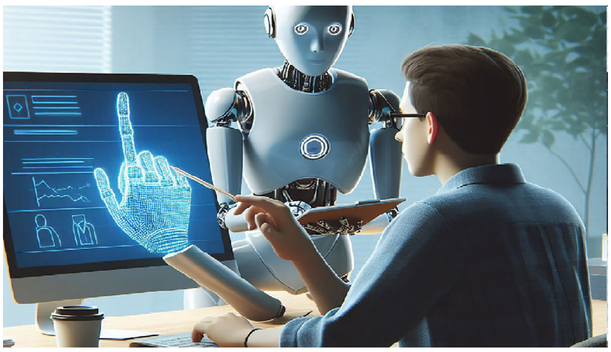

1. विसंगति का पता लगाना: AI का उपयोग नेटवर्क ट्रैफिक में विसंगतियों का पता लगाने के लिए किया जा सकता है, जिससे संभावित सुरक्षा खतरों की पहचान करने में मदद मिलती है।

2. पूर्वानुमानित रखरखाव : AI का उपयोग यह अनुमान लगाने के लिए किया जा सकता है कि सिस्टम या एप्लिकेशन कब विफल होने की संभावना है, जिससे सक्रिय रखरखाव की अनुमति मिलती है और सुरक्षा उल्लंघनों के जोखिम को कम किया जा सकता है।

3. घटना प्रतिक्रिया : AI का उपयोग घटना प्रतिक्रिया को स्वचालित करने के लिए किया जा सकता है, जिससे सुरक्षा खतरों को जल्दी से पहचानने और नियंत्रित करने में मदद मिलती है।

4. सुरक्षा सूचना और घटना प्रबंधन (SIEM)': AI का उपयोग SIEM सिस्टम को बेहतर बनाने के किया जा सकता है, जिससे संभावित सुरक्षा खतरों की पहचान करने और झूठी सकारात्मकता को कम करने में मदद मिलती है।

5. पेनेट्रेशन टेस्टिंग : AI का उपयोग पेनेट्रेशन टेस्टिंग को स्वचालित करने के लिए किया जा सकता है, जिससे सिस्टम और एप्लिकेशन में कमजोरियों की पहचान करने में मदद मिलती है।

यह भी जाने

1. AI–विशिष्ट सुरक्षा उपायों को लागू करें : AI–संचालित हमलों का पता लगाने और उन्हें रोकने के लिए विशेष रूप से डिजाइन किए गए सुरक्षा उपायों को लागू करें।

2. सुरक्षा में सुधार के लिए AI का उपयोग करें : विसंगति का पता लगाने और पूर्वानुमानित रखरखाव जैसी सुरक्षा में सुधार के लिए AI का उपयोग करें।

3. AI–विशिष्ट घटना प्रतिक्रिया योजनाएँ विकसित करें : AI–संचालित हमलों को संभालने के लिए विशेष रूप से डिजाइन की गई घटना प्रतिक्रिया योजनाएँ विकसित करें।

4. AI–विशिष्ट प्रशिक्षण प्रदान करें : सुरक्षा टीमों को AI–संचालित हमलों का पता लगाने और उनका जवाब देने के तरीके के बारे में प्रशिक्षण प्रदान करें।

5. जिम्मेदार AI विकास को प्रोत्साहित करें : पारदर्शी, व्याख्या करने योग्य और निष्पक्ष AI सिस्टम के विकास सहित जिम्मेदार AI विकास को प्रोत्साहित करें।

जबकि AI का उपयोग डिजिटल सुरक्षा को बेहतर बनाने के लिए किया जा सकता है, इसका उपयोग हमलावरों द्वारा अधिक परिष्कृत और खतरनाक हमले करने के लिए भी किया जा सकता है। डिजिटल सुरक्षा में AI के जोखिमों को कम करने के लिए AI–विशिष्ट सुरक्षा उपायों को लागू करना, सुरक्षा को बेहतर बनाने के लिए AI का उपयोग करना और AI–विशिष्ट घटना प्रतिक्रिया योजनाएँ विकसित करना आवश्यक है।

राणी केलमदे एवं राष्ट्रकूटों का तथ्यात्मक अध्ययन

डाॅ. मातु सिंह राठौड
से.नि. ब्लॉक शिक्षा अधिकारी
सूर्य सदन, वार्ड नं. 20, राजगढ़ रोड़
तारानगर (चूरू)
मो. 9672781699

इतिहास मात्र धरोहर ही नहीं एक प्रेरणादायी दस्तावेज भी होता है जो भूतकाल के उदाहरण प्रस्तुत कर भविष्यकाल की योजनाओं का निर्माण करता है। शोधकर्त्ताओं ने व्याख्या करते हुये स्पष्ट किया है कि इतिहास का अर्थ है 'ऐसा ही हुआ था' इतिहास की घटनाओं को प्रमाणित करने के लिए पुस्तकों में लिखित साहित्य के अतिरिक्त शिलालेखों , दानपत्रों एवं प्रशस्ति–पत्रों का महत्तवपूर्ण योगदान होता है । 'राष्ट्रकुटों' का प्राचीन इतिहास इन्ही प्रमाणों पर आधारित है। उत्तर भारत से दक्षिण भारत तथा दक्षिण से उतर भारत के विभिन्न क्षेत्रों पर शासन करने वाले राष्ट्रकूट शासकों का इतिहास विलक्षण योद्धाओं एवं दानदाताओं की गाथा है। 'बीकानेर राज्य का इतिहास 'में लिखा है कि प्राकृत शब्दों की उत्पति के नियमानुसार 'राष्ट्रकूट' शब्द का प्राकृतरूप रूप 'रट्ठऊड़' होता है, जिससे 'राठऊड़' या राठौड़ शब्द बनता है ।''राष्ट्रकूट के स्थान पर कही कही 'राष्ट्रवर्य शब्द भी मिलता है ।जिससे 'राठवड़' शब्द बनता है 'राष्ट्रकूट' और राष्ट्रवर्य दोनो शब्दों का अर्थ एक ही है क्योंकि राश्ट्रकूट का अर्थ 'राश्ट्र' जाति या वंष का शिरोमणी है और 'राष्ट्रवर्य' का अर्थ 'राष्ट्र' जाति अथवा वंश मे श्रेष्ठ है' अनेक स्थानों पर राठौड़ों के लिए राष्ट्रकूट शब्द का प्रयोग हुआ है।चूरू जिले के गांव गोपालपुरा में राव बीदा के पुत्र उदयकरण के वि.सं. 1565 के स्मारक लेख में 'राष्ट्रकूट वंशे' 'लिखा हुआ है। 'ख्यात देशदर्पण ' में लिखित वंशावली में क्र.सं. 64 पर भगवान राजा रामचन्द्र एवं क्रं.सं. 65 पर कुश का नाम लिखा है। इससे प्रमाणित होता है कि राष्ट्रकूट (राठौड़) कुश के वंशज हैं। कुछ लेखकों ने लव का वंशज भी बताया है जो सही नहीं है। राजपूत वंशावली ' में ठाकुर ईश्वर सिंह मडाढ ने लिखा है,'भगवान राम के पुत्र कुश के किसी वंशज ने दक्षिण में जाकर राज्य स्थापित किया था। वहां उसकी राजधानी मान्यखेट थी। वहां से इनकी एक शाखा मध्य भारत में आयी जिससे इनके राज्य को महाराष्ट्र कहा जाने लगा। 'ख्यात देशदर्पण' में वर्णित वंशावली के अनुसार इस वंष में क्रं.सं. 125 पर राजा रठवर हुये ।राठेश्वरी देवी रा वरदान सूं हुओ पुत्र, तैं सूं रठवर कहाया।' क्रं.स. 131 पर राजा कमधज का नाम लिखा है। 'इणसूं कमधज कहाया।' दूसरे मतानुसार बिना सिर के घड़ को 'कबंध' कहा जाता है, राठौड़ योद्धा बिना सिर के लड़ने में भी सक्षम थे, इसलिए इन्हें 'कमधज' कहा जाता है। राष्ट्रकूट पहले भारत के उतर – पश्चिम प्रदेश में ही रहते थे और बाद में यहां से एक शाखा ने दक्षिण की तरफ नये राज्य की स्थापना हेतु प्रस्थान किया।' राष्ट्रकूटों का इतिहास ' में लिखा है कि 'इन प्रमाणों पर विचार करने से प्रकट होता है कि विक्रम की छठी षताब्दी में वहां पर (दक्षिण मेंद्ध राश्ट्रकूटों का राज्य था' बीकानेर राज्य का इतिहास' में लिखा है कि 'दक्षिण के येवूरगांव (कलाडगी जिलाद्ध के सोंलकियों की वंशावली वाले (सोमेश्वर के मन्दिर में लगे हुए) शिलालेख से पाया जाता है कि वि.सं. 550 के लगभग राष्ट्रकूट राजा कृष्ण के पुत्र इन्द्र को जिसकी सेना में 800 हाथी थे ,सोलंकी राजा जयसिंह ने जीता और वहां सोलंकी राज्य की स्थापना की । 'यह शिलालेख प्रमाणित करता है कि इस ऐतिहासिक घटना से पूर्ण दक्षिण में भी राष्ट्रकूटों (राठौड़ों) का सुदृढ राज्य था तथा इसके पश्चात भी दक्षिण क्षेत्र में इनका प्रभावक्षिण नहीं हुआ था। राजधानी एवं सामरिक महत्व के कुछ स्थानों को छोड़ कर अन्य क्षेत्रों पर राष्ट्रकूटों का प्रभाव यथावत रहा।

शिलालेखों एवं दानपत्रों के आधार पर इतिहासकारों

ने मान्यखेट(दक्षिण के मालखेड़ राज्य के अन्तर्गत , रेउ ने इसकी स्थिति शोलापुर से 90 मील दक्षिण पूर्व दी है) के राष्ट्रकूटों का तथ्यात्मक विवरण प्रस्तुत किया है। इतिहासकार विश्वेश्वरनाथ रेउ की पुस्तक 'राष्ट्रकूटों का इतिहास' में (वि. सं. 650 के पूर्व से लेकर वि.सं. 1030 तक) 19 राष्ट्रकूट राजाओं का विवरण दिया गया है लेकिन हम अपने शोधपूर्ण आलेख की आवश्यकता के अनुसार मान्यखेट के 10 राष्ट्रकूट(राठौड़) षासकों के सम्बन्ध में विभिन्न लेखकों द्वारा तैयार ऐतिहासिक सामग्री एवं अन्य स्त्रोतों के आधार पर अध्ययन करेंगे–

1. दन्तिवर्मा (दन्तिदुर्ग) प्रथम– यह राजा पूर्ववर्णित जयसिंह सोलंकी द्वारा परास्त राष्ट्रकूट राजा इन्द्र का वंशज था। मान्यखेट राष्ट्रकूट राजाओं की प्रशस्तियों में इसका नाम सर्वप्रथम लिखा हुआ है। सोलंकियों के अधिकार क्षेत्र से बाहर राष्ट्रकूट राज्य का यह सरंक्षक एवं स्वाधीन शासक था।

2. इन्द्रराज प्रथम– इस राष्ट्रकूट राजा एवं इसके पिता दन्तिवर्मा का नाम एलोरा की गुफाओं में दशावतार मन्दिर के लेख में भी लिखा हुआ है। दशावतार लेख के अनुसार यह अनेक यज्ञों को करने वाला वीर शासक था।

3. गोविन्दराज प्रथम – यह इन्द्रराज का पुत्र और उतराधिकारी था। इसने अपने शासनकाल (वि.सं. 691) में पूर्वजों के हाथ से गये राज्य के शेषभाग को भी प्राप्त करने का प्रयास किया। कुछ इतिहासकारों ने गोविन्दराज को वीरनारायण नाम से भी लिखा है।

4. कर्कराज प्रथम – गोविन्दराज प्रथम का पुत्र कर्कराज उसका उतराधिकारी बना। वैदिक धर्म में आस्था रखने वाला यह राष्ट्रकूट राजा विद्वानो का आश्रयदाता एवं दानी था।

5. इन्द्रराज द्वितीय – कर्कराज के इस पुत्र के समय चालुक्यों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध यथावत रहे। इसकी सेना सुदृढ थी जिसमें घोड़े एवं हाथियों की संख्या अत्यधिक थी।

6. दन्तिवर्मा(दन्तिदुर्ग) द्वितीय – यह अपने पिता इन्द्रराज द्वितीय के बाद गदी पर बैठा । इसने वि.सं. 804 से 810 के मध्य सोलंकी कीर्तिवर्मा (द्वितीय) के समय विस्तृत भू–भाग पर अधिकार कर दक्षिणी क्षेत्र में राष्ट्रकूट राज्य को सुदृढता प्रदान की। दक्षिण के इस प्रतापी राजा ने कलिंग ,कोसल, मालव, टंक एवं नर्बदा के पश्चिम क्षेत्र लाट तथा नागवंशियों पर विजय प्राप्त कर राज्य का विस्तार किया। दानपत्रों से प्रमाणित होता है कि इसका राज्य गुजरात और मालवे की उतरी सीमा से लेकर दक्षिण के रामेश्वरम् तक विस्तृत था।

7. कृष्णराज प्रथम – दन्तिवर्ग के बाद उसका चाचा कृष्णराज प्रथम शासक बना जो इन्द्रराज द्वितीय का छोटा भाई था। शिलालेखों, ताम्रपत्रों एव दानपत्रों के अतिरिक्त इसके राज्यकाल में निर्मित 1800 के लगभग चांदी के सिक्के प्राप्त हुये हैं जो राज्य की आर्थिक स्थिति एवं व्यापार की जानकारी प्रदान करते है।

8. गोविन्दराज द्वितीय – कृष्णराज का बड़ा पुत्र गोविन्दराज उसका उतराधिकारी हुआ। दानपत्रों से इसके राज्य के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी मिलती है। इसने भोगविलास मे फंसकर राज्य का कार्य अपने छोटे भाई को सोंप दिया, जिससे इसका प्रभुत्व शिथिल हो गया तथा कालान्तर में इसके भाई ध्रुवराज (निरूपम) ने राज्य पर अधिकार कर लिया।

9. ध्रुवराज –' बीकानेर राज्य का इतिहास' में लिखा है कि 'ध्रुवराज बड़ा पराक्रमी राजा था। उसने कौशल और उतराखण्ड के कई राजाओं को परास्त किया । इसका राज्य रामेश्वर से अयोध्या तक फैला हुआ था' वि.सं. 850 के एक दानपत्र के आधार पर ' राष्ट्रकूटों का इतिहास 'के पृ.सं 58 पर लिखा है कि 'गोविन्दराज द्वितीय की शिथिलता के कारण राष्ट्रकूट राज्य को दबा लेने के लिए उद्यत हुए अन्य लोगों को देखकर ही उस पर (ध्रुव्रराज ने) अधिकार किया था ।

10. गोविन्दराज तृतीय–ध्रुवराज का अज्ञाकारी योग्य पुत्र गोविन्दराज तृतीय दक्षिण में राष्ट्रकूटों के इस सुदृढ राज्य का उतराधिकारी बना। इसके सम्बन्ध में अन्य सामग्री के अतिरिक्त 9 ताम्रपत्र भी मिले हैं जो राज्य की समस्त जानकारी प्रदान करते है। इस शक्तिशाली शासक का उतर में विंध्य व मालवे से लेकर दक्षिण में कांचीपुर तक के शासक आज्ञा का पालन करते थे। ' बीकानेर राज्य का इतिहास 'में लिखा है कि 'तुंगभद्रा ,वेंगी, गंगवाडी ,केरल, पांड्य ,चोल और कांची के नरेशों को परास्त कर उसने सिंहल के राजा को अपने अधीन किया। फिर उसने प्रतिहार राजा नागभट

को हराकर मारवाड से भगा दिया। गोविन्दराज तृतीय के 9 वें ताम्रपत्र वि.सं. 869 से जानकारी प्राप्त होती है कि गुजराज के मध्य और दक्षिणी भाग (लाट देष) को विजय कर अपने भाई को यह राज्य दिया जिससे गुजरात में दक्षिण के राष्ट्रकूटो की दूसरी शाखा चली थी ।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर इतिहासकारों ने यह प्रमाणित किया है कि दक्षिण के शक्तिशाली राष्ट्रकूट राजा गोविन्दराज तृतीय की राज्य विस्तार योजना से गुजरात के अतिरिक्त राजस्थान का क्षेत्र भी प्रभावित हुआ था।

गुजरात का राष्ट्रकूट राज्य – दक्षिण के शक्तिसम्पन्न शासक दन्तिवर्मा द्वितीय (पूर्व लिखित क्र.स. 6) के समय वि. सं. 810 के लगभग दक्षिण एवं मध्य गुजरात (लाटक्षेत्र) पर अधिकार हो गया था । एक ताम्रपत्र के अध्ययन के आधार पर 'राष्ट्रकूटों' का इतिहास' में लिखा है कि 'दन्तिवर्मा द्वितीय ने अपनी सोलंकियों पर की गई विजय के समय, अपने रिश्तेदार कर्कराज को लाट प्रदेश का स्वामी बना दिया था' गुजरात के ये शासक मान्यखेट के राष्ट्रकूट नरेशों के अधीन शासन करते थे । यहां कर्कराज प्रथम के पश्चात् ध्रुवराज, गोविन्दराज एवं कर्कराज द्वितीय क्रमशः शासक बने। कर्कराज द्वितीय बड़ा प्रतापी और शिवभक्त शासक था। इसने मान्यखेट की सत्ता से अपने आपको मुक्त कर परममाहेश्वर, परमभट्टारक, परमेश्वर और महाराजाधिराज की उपाधियां धारण की तथा अन्य सामंतों के सहयोग से षक्तिषाली बन गया । दक्षिणभारत के राष्ट्रकूटों (राठौड़ों) के सर्वेसर्वा मान्यखेत के शासक गोविन्दराज तृतीय (पूर्व वर्णित क्र.सं.10) के समय कर्कराज द्वितीय को परास्त कर गुजरात के मध्य और दक्षिण भाग (लाटदेश) को पुनः' अपने अधीन किया तथा शेष क्षेत्र के शासक प्रतिहार राजा यशोवर्मा को भी परास्त कर समस्त गुजरात पर अधिकार कर लिया। वि.सं. 860 के लगभग राष्ट्रकूटों की गुजरात में प्रथम शाखा का राज्य समाप्त हुआ तथा द्वितीय शाखा का शासनकाल प्रारम्भ हुआ, जिसके शासकों का इतिहास इस प्रकार उपलब्ध हैं:–

1. इन्द्रराज– यह मान्यखेट के राष्ट्रकूट (राठौड़) राजा ध्रुवराज का पुत्र और गोविन्दराज तृतीय का भाई था । वि. स. 865 के ताम्रपत्र में गुजरात के मध्य और दक्षिण भाग (लाट प्रदेश) के विजय का उल्लेख है । इस विजय को स्थाई करने के लिए गोविन्दराज तृतीय ने अपने विश्वसनिय छोटे भाई इन्द्रराज को नियुक्त कर अपना सामंत बनाया । इसने राज्य सत्ता पर पकड़ मजबूत कर अपने भाई मान्यखेट के शासक गोविन्दराज तृतीय की शक्ति को सुदृढ़ता प्रदान की।

2. कर्कराज– यह इन्द्रराज का पुत्र था । जो उसके बाद राष्ट्रकूटों द्वारा शासित गुजरात एवं निकटवृति क्षेत्र का शासक बना । कर्कराज के समय के तीन ताम्रपत्र (वि.स. 869,873,881) प्राप्त हुये हैं जो इसके पूर्वजों एवं राज्य सम्बन्धी जानकारी के लिए महत्वपूर्ण हैं । महासामन्ताधिपति, लाटेश्वर और सुवर्णवर्ष उपाधियों से विभूषित कर्कराज ने मान्यखेट के राजा अमोधवर्ष प्रथम को उसके पिता की गद्दी पर बैठाने में सहायता की थी ।

3.गोविन्दराजः– यह कर्कराज का छोटा भाई था, जो उसका उत्तराधिकारी बना । गोविन्दराज के समय के दो ताम्रपत्र मिलते हैं । प्रथम में महासामन्ताधिपति व प्रभूतवर्ष उपाधियों का वर्णन हैं । द्वितीय में जयादित्य नामक सूर्यमन्दिर के लिए एक गांव दान में देने का उल्लेख है ।

4. ध्रुवराज प्रथम– यह कर्कराज का पुत्र था, जो गोविन्दराज के बाद राज्य का उत्तराधिकारी बना । महासामंताधिपति, धरावर्ष एवं निरूपम इसकी उपाधियां थी । इसके बाद इस वंश के (5) अकालवर्श (6) ध्रुवराज द्वितीय(7) दन्तिवर्मा(8) कृष्णराज क्रमशः गुजरात क्षेत्र के राष्ट्रकूट षासक हुये । गुजरात के इन सांमत शासकों द्वारा शक्तिसम्पन्न बन कर चुनौती देने कारण मान्यखेट के राजा कृष्णराज द्वितीय ने वि. सं.967 के लगभग अपनी राजधानी के सीधे नियंत्रण में कर लिया ।

राजपूताना के पहले राष्ट्रकूट (राठौड़) :– दक्षिण के राष्ट्रकूट राज्य मान्यखेट द्वारा शासित एवं गुजरात में सामंताधिपति के रूप में स्थापित राठौड़ों की इस शाखा का विक्रम की10 वीं. शताब्दी के लगभग प्रारम्भ में राजस्थान (मरुप्रदेश) में प्रवेश हुआ । पाली जिले में हस्तिकुंडी (हथूंडी) नामक स्थान पर यह पल्लवित –पुष्पित हुयी । पूर्व अध्ययन के अनुसार गुजरात की इस शाखा के प्रथम सामंत शासक इन्द्रराज के बाद उसका बड़ा पुत्र कर्कराज एवं उसके बाद गोविन्दराज राज्य के उत्तराधिकारी हुये । गोविन्दराज के पश्चात् बड़े भाई कर्कराज का पुत्र ध्रुवराज प्रथम गुजरात क्षेत्र का शासक बना । सम्भवतः परिस्थितियों ने नये इतिहास का निर्माण किया । पूर्व शासक गोविन्दराज के पुत्र –पौत्रों को गुजरात क्षैत्र के राज्य में कोई प्रतिष्ठापूर्ण पद प्राप्त नहीं हुआ, परिणामस्वरूप गोविन्दराज के महत्वांकांक्षी पुत्र–पोत्रों ने दक्षिण के मान्यखेट राज्य व गुजरात क्षैत्र के अन्तिम छोर पर स्थित क्षेत्र को अपनी कर्मस्थली निर्धारित किया । सामरिक दृष्टि से सुरक्षित एवं संसाधानों की दृष्टि से सम्पन्न रणकपुर से 30 कि0मी0 बाली से 20 कि0मी0 ,जवाई रेल्वे स्टेषन से 15 कि0मी0 तथा बिजापुर के पास हस्तिकुंडी (हथूंडी) को अपनी राजधानी बनाया । मान्यखेट के शक्ति सम्पन्न राष्ट्रकूट राजा एवं गुजरात के सामंताधिपति इस राज्य को सहर्ष स्वीकृति प्रदान कर दी होगी, क्योंकि यह राष्ट्रकूट राज्य के सीमावर्ती क्षेत्र की सुरक्षा करने वाला प्रयास माना गया । 'हस्तिकुण्डी का इतिहास' मे लिखा है 'राष्ट्रकूट राजाओं ने पश्चिमी राजस्थान को दिग्विजय किया था, हस्तिकुण्डी के राष्ट्रकूट शायद उन्ही के वंशज थे । ' यह हथूंडिया शाखा के राठौड़ों की जन्मस्थली है, इसके सम्बन्ध में विश्वेश्वरनाथ रेउ, डॉ. सोहनलाल पटनी एवं डॉ. हुकम सिंह भाटी ने विस्तार से लिखा है ।

1. हरिवर्मा :– जोधुपर राज्य के गोडवाड़ परगने में बीजापुर से वि.सं. 1053 का एक शिलालेख मिला है, इसमें हथूंडी के राठौड़ों की वंशावली में हरिवर्मा का नाम प्रथम स्थान पर लिखा हुआ है, सम्भवत यह गोविन्दराज (गुजरात क्षेत्र का शासक) का पुत्र था । इसके राज्य स्थापित करने पर गुजराज के शासक द्वारा विरोध करने के प्रमाण नहीं हैं, शायद इसे सुरक्षा कवच माना गया तथा इस वंश में यह एकता बनाये रखने का प्रयास सिद्व हुआ होगा ।

2. विदग्धराज:– हरिवर्मा का पुत्र जो उसका उत्तराधिकारी हुआ । यह वि0स0973 (जर्नल बंगाल एशियाटिक सोसाइटी भाग' 62, पृ.सं. 314 के आधार पर) में हथूंडी का शासक होना प्रमाणित होता है ।' हस्तिकुण्डी का इतिहास' के अनुसार 'ये मेवाड़ के राजा अल्लट के मित्र थे । अल्लट के परामर्श से ही विदग्धराज ने बलिभद्र सूरिजी को हस्तिकुण्डी में बुलाया था और उनके उपदेश से जैन धर्म भी स्वीकार किया था ।'

3–मम्मटराज:– यह विदग्धराज का पुत्र एवं उत्तराधिकारी था । जैनधर्म में आस्था रखने वाले इस शासक ने सर्वप्रथम नैतिक शिखा के आदेश द्वारा अपनी प्रजा को बताया कि –देवद्रव्य एवं गुरुद्रव्य का भक्षण करना महापाप है।' इसके राज्यकाल (वि.स. 996) में आचार्य सर्वदेवसूरि का हस्तिकुण्डी में आगमन हुआ था। जिनके उपदेश से प्रभावित होकर राजपरिवार के कुछ सदस्यों ने जैन धर्म स्वीकार किया था।

4. धवलराज:– मम्मटराज का पुत्र धवलराज जैन धर्म में आस्था रखने वाला शक्तिशाली शासक था । इसने अपने मित्र चितौड़ के शासक महेन्द्र की सहायता कर उसके शत्रुओं को परास्त किया था । धनुर्विद्या में पारंगत धवलराज पड़ौसी शासकों का संरक्षक हो गया था । अपने राज्य में जैन मन्दिरों का जिर्णोद्वार एवं अनेक जनहित के कार्य करवाये । धवलराज के समय हथूंडी की प्रतिष्ठा चरम सीमा पर थी,इसलिये सम्भव है कि इसके संरक्षण में अन्य क्षेत्रों पर भी इस षाखा का राज्य स्थापित हुआ । श्री नरेन्द्र सिंह जसनगर के शोधालेख के अनुसार' वर्तमान राजस्थान में धनोप, शाहपुरा, नोगाम, बांसवाड़ा, हथूंडी, गोडवाड़ क्षेत्र में 11 वीं. सदी तक राष्ट्रकूटों का अस्तित्व मिलता हैं ।' इसके अतिरिक्त सम्भवत कोलासर आदि अन्य क्षेत्रों पर भी लोकप्रिय एवं प्रभावशाली धवलराज के समय हथूंडिया राज परिवार के सदस्यों ने राज्यसत्ता स्थापित की थी । कोलासर (रतनगढ) से 4 कि.मी. हुडेरा जोगियान में वि.स. 1309 का स्मारक लेख प्राप्त हुआ है, जिसके सम्बन्ध में हम आगे के पृश्ठों पर समीक्षा करेंगें । धवलराज के समकालीन परमार मुंज, चौहान दुर्लभराज, चौहान महेन्द्र, सोलंकी मूलराज और प्रतिहार धरणीवराह आदि प्रभावशाली शासक थे ।अधिकतर शासकों को संरक्षण प्राप्त होने पर मित्रभाव रखते थे तथा अन्य शासक भयभीत होकर अपनी राज्य सीमा में ही रहते

थे । धवलराज के समय वि.स. 1053 का शिलालेख राज्य की समस्त जानकारी प्रदान करता हैं ।

5. बालाप्रसादः— धवलराज ने राजकार्य की अधिकता एवं बढती उम्र के कारण अपने जीवनकाल में ही प्रियपुत्र बालाप्रसाद को राज्य संचालन के पर्याप्त अधिकार प्रदान कर दिये थे । विशेष प्रतिभा नहीं होने पर भी राज्य व्यवस्था सुचारू रूप से संचालित रही ।

6. नामदत्त :—धवलराज के बाद हथूंडी प्रतिष्ठित राज्यों में गिना जाने लगा, इसलिए यहां के राष्ट्रकूट शासक हथूंडिया राठौड़ के नाम से प्रतिष्ठित एवं प्रचारित हुये । नामदत्त के राज्य काल के समय महमूद गजनी ने सोमनाथ पर आक्रमण किया था ।

नामदत्त हथूंडिया एवं नाडोल के शासक रामपाल चौहान ने मिलकर गजनी की सेना के साथ युद्व किया,लेकिन परास्त हुये । क्रोधित आक्रांता ने हथूंडी के मन्दिर एवं महल—किलों को नष्ट कर दिया था । इसके बाद शक्तिसम्पन्न हथूंडी कमजोर राज्य हो गया । नाडोल राज्य को भी काफी क्षति हुयी ।

7. सिंगा हथूंडियाः— यह उजड़ी हुयी, साधनहीन हथूंडी का राजा बना । इसने हथूंडी को पुनः प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया, लेकिन सफल नहीं हुआ और बरसिंघ बालिसा चौहान के साथ वि.सं. 1232 में हुये युद्व में वीरगति को प्राप्त हुआ । इस सम्बन्ध में इतिहास प्रसिद्ध एक दोहा हैंः—

बरबे लीधो बांकड़ै, बाहां बल बालीस ।
सींगो कमधज साजियो,बारासें बत्तीस ।।

भावार्थ है कि बालिसा चौहान बरसिंह ने सिंगा राठौड़ को मारकर अपने भुजबल से इस क्षेत्र पर वि.सं. 1232 में अधिकार कर लिया । स्मरण रहे, यह सिंगा हथूंडिया राठौड़ था । लोक साहित्य में इस खांप (शाखा) को हतूड़िया (हटूंडिया) भी कहा जाता है । कुछ लेखकों ने नाम एवं वंश नाम की समानता के कारण दक्षिण की मान्यखेट शाखा के राष्ट्रकूट (राठौड़) जो गुजरात क्षेत्र से आये हथूंडी शाखा के सिंगा हथूंडिया राठौड़ तथा उतर भारत के कन्नोज राज्य के बदायूं क्षेत्र से आये राव सीहा दानेश्वरा राठौड़ के नाम को एक बताकर भ्रम पैदा कर दिया है। यह दोहा सिंगा हथूंडिया के सम्बन्ध में है क्योंकि वि.स.1232 में राव सीहा दानेश्वरा राठौड़ ने मरुभूमि में प्रवेश नहीं किया था । राव सीहा राठौड़ का आगमन वि.सं. 1292 में पाली क्षेत्र में हुआ था ।

कोलासर के हथूंडिया राठौड़ —हथूंडी(हस्तिकुंडी) के राठौड़ (राष्ट्रकूट) धवलराज की कीर्तिपताका ने मरुभोम राजस्थान एवं गुजरात क्षेत्र के विभिन्न राज्यों की षासन व्यवस्थाओं को प्रभावित किया था । पूर्व पृष्ठों में हमने अध्ययन किया है कि इस प्रतिष्ठित शासक ने हथूंडी में निष्कटक राज्य संचालित करते हुये अपने जीवनकाल में ही प्रियपुत्र बालाप्रसाद को राज्य संचालन हेतू अपनी लगभग समस्त शक्तियां प्रदान कर दी थी। धवलराज के अन्य पुत्रों ने अपने सुरक्षित भविष्य के लिये अन्य क्षेत्रों में राज्य स्थापित करने का प्रयास किया । जिसमें इस दूरदर्शी शासक का प्रत्यक्ष—अप्रत्यक्ष सहयोग रहा । सम्भवत धवलराज के एक पुत्र ने कोलासर(रतनगढ) जिला चूरू को राजधानी बनाकर वि.स. 1040 के लगभग अपने नये राज्य की नींव रखी । कृषक एवं पशुपालाकों की दूर दूर तक आबादित ढाणियों के मध्य स्थित कोलासर का तालाब पानी का मुख्य स्त्रोत था। घांधू (चूरू) एवं चरलू —छापर के लगभग मध्य में स्थित यह स्थान गढ (किला, कोट) बनाने के अनुकूल था । इसलिये 4 कि.मी. पर ऊंचे स्थान को देखकर सम्भवत तालाब के नाम से कोलसर गढ का निर्माण करवाया गया । भौगोलिक एंव राजनैतिक दृष्टि से इस क्षेत्र में ददरेवा को छोड़कर अन्य राज्य प्रभावहीन थे । कोलासर राज्य की स्थापना में हथूंडी के प्रभावशाली शासक धवलराज के योगदान को नकारा नहीं जा सकता, क्योंकि तत्कालीन समय में मरुक्षेत्र पर प्रभाव रखने वाले शक्तिशाली शासक सांभर के चौहान दुर्लभराज को परास्त कर नाडोल के महेन्द्र चौहान की रक्षा की थी तथा मारवाड़ के शासक धरणीवराह से मित्रता कर गुजरात के सोलंकी मूलराज को परास्त किया था, इसलिए नए राज्य की स्थापना के समय हथूंडिया राजपरिवार का विरोध करने का साहस किसी भी क्षेत्रीय शासक में नहीं था। दक्षिण भारत के मान्यखेट से आकर गुजरात के शासक रहे, इस परिवार से निकली राष्ट्रकूटों की इस हथूंडिया शाखा के अधिकतर शासक जैन धर्म के अनुयायी थे । दानपत्रों एंव अन्य स्त्रोतों से ज्ञात होता है कि इन्होंने मन्दिरों एवं तालाबों के जीर्णोद्वार के अतिरिक्त साधु—सन्तों व दीनदुखियों को भी खुले हाथ से दान दिया तथा अपनी जनता का पालन पोशण कर मरूप्रदेश में प्रतिष्ठा प्राप्त कर अपने को सर्वश्रेष्ठ

सिद्‌ध किया ।

कुओं–तालाबों एवं लोककथाओं तथा योगी समाज के बहीभाटी (ऐतिहासिक तथ्य प्राप्ति स्थल पर योगी समाज का गांव हुडेरा जोगियान आबाद है) की बही के आधार पर प्रमाणित होता है कि कोलासर राज्य की स्थापना करने वाला हथूंडी के शासक धवलराज का पुत्र सिंघराज हथूंडिया (सिंघड़, हथूंडिया, राजा सिंघा, सिंघा राजा) था । आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न इस शासक ने सामरिक महत्व के उच्च स्थान पर गढ निर्माण के अतिरिक्त अपने राज्य के सभी क्षेत्रों में कुओं–तालाबों के निर्माण को प्राथमिकता प्रदान की थी। पंक्तियों के लेखक ने स्वयं भग्नावशेष गढ तथा हुडेरा में तालाब के पास पहाड़ी पत्थरों से निर्मित सिंघडु (सिंगडू) कुआ' का अवलोकन किया है । पश्चिमी तालाब के पास पहाड़ी पत्थरों से बने हुये सिंघडु कुआ से प्रमाणित होता है कि इस कुआ का निर्माण हथूंडी के कारीगरों द्वारा किया गया होगा,क्यों कि हथूंडी पहाड़ी क्षेत्र में आबाद था तथा यहां के मिस्त्री भी इस पत्थर के निर्माण कार्य से अनभिज्ञ थे । पूर्व दिशा के तालाब के पास भी एक पुराना कुआ है जो सम्भवतः प्रथम या द्वितीय राजा के समय बनाया गया है । लोकचर्चाओं में सबसे पुराना सिंघडु कुआ राजा का बनाया हुआ बताया जाता है । यह राजा का कुआ कहलाता है जिसमें मिट्टी की छोटी–छोटी गणगोर को भी डाला(पधराया) जाता है । तालाब के किनारे कुओं का निर्माण मीठ्ठे पानी की प्रचूरता के लिए होता था । नवस्थापित कोलासर राज्य का निकटवर्ती राजनैतिक क्षेत्र महत्वाकांक्षी सिंघराज के अनुकूल था । उस समय चरलू–छापर क्षेत्र पर इन्दराज (घंघरान चौहान का पुत्र) के पुत्र–पौत्रों (अर्जन,सर्जन,मोयल) का शक्तिहीन राज्य था एवं घांघू (चूरू) में अमरपाल के परिवार में आपसी कलह चरमसीमा पर थी तथा रिणी (तारानगर) डाहलियों की शताब्दियों पुरानी सत्ता प्रभावहीन होकर नश्ट होने के कगार पर थी । ददरेवा के जेवर (जीवराज चौहान) व उसके युवापुत्र गोगदेव की प्रतिष्ठा जनसामान्य को आकर्षित कर रही थी । युवराज गोगा का जन्म विक्रम की 11 वीं शताब्दी के तृतीय दषक में होना प्रमाणित होता हैं । शक्ति सम्पन्न ददरेवा राणा के पुत्र गोगदेव के साथ सिंघराज ने अपनी राजकुमारी केलमदे के विवाह का प्रस्ताव (नारियल) भेजा, जिसे ददरेवा राजपरिवार ने सहर्ष स्वीकार कर लिया । इस वैवाहिक सम्बन्ध ने दोनों राज्यों की शक्ति में वृद्वि की । अनुकूल परिस्थितियों से उत्साहित राजा सिंघराज ने सम्भवतः घांघू क्षेत्र पर अधिकार कर लिया,कालेराबास (चूरू) का सिंघडु कुआ इसका प्रमाण है। परिस्थितियां एवं ऐतिहासिक तथ्य प्रमाणित करते हैं कि चरलू छापर में अर्जन के पौत्र, सर्जन के पुत्र मोहिल के शक्ति सम्पन्न होने तक यह राज्य (कोलासर) स्वतंत्र रहा ।

कोलासर पर राष्ट्रकूटों की इस शाखा का राज्य विक्रम की 11 वीं शताब्दी के लगभग मध्य से 14 वीं शताब्दी के प्रथम दशक तक होना प्रमाणित होता है । युद्व मैदान हुडेरा गांव से अलग अलग समय की तीन प्रकार के पत्थरों से बनी देवळियां (स्मारक, पत्थर पर उकेरित चित्र एवं लेख) इस बात का प्रमाण है कि सत्ता संघर्ष के लिये तीन बड़े युद्व हुऐ थे । एक देवळी पर घुड़सवार हाथ में तलवार लिये है इसके आगे तीन सतियां जो हाथ जोड़े खड़ी हैं, का चित्र उकेरित है । जनसामान्य द्वारा लाछां, पानां, श्यामां के नाम से पूजा होती है । देवली के ऊपर दीवार में इनके स्थान बनाये हुये हैं, यह सबसे पुरानी देवळी प्रतीत होती है । इसके नीचे का लिखित भाग टूटा हुआ है । पहले शासक राजा सिंघराज के समय मोहिल परिवार इनसे युद्व के लिये सक्षम नहीं था, इसलिए सम्भव है कि यह कोलासर के दूसरे शासक की देवळी हैं । (यह भी संभव हैं कि मोहिल के शक्तिसम्पन्न होने पर सिंघराज के अन्तिम समय युद्व हुआ हो और यह देवळी सिंघराज की हो, क्योंकि मोहिल ने लगभग 40 वर्ष राज्य किया था) मोहिल या उसके उत्तराधिकारियों तथा कोलासर के राठौड़ शासक के मध्य संघर्ष के बाद सम्भव है कि कोलासर के षासक मोहिलों के सामंत हो गये हों और वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर मित्रता कर ली हो,क्यों कि मोहिल एवं उसके उत्तराधिकारी हरदत ने राज्य क्षेत्र का विस्तार किया था । वि.स.1162 का जीणमाता मन्दिर में स्थित शिलालेख हरदत की सुदृढ़ आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति को प्रगट करता है । दूसरी देवळी में वीर घुड़सवार के आगे एक सती का चित्र हैं । यह मूर्तिकला शैली पहली देवळी से भिन्न है जो यह सिद्व करती है कि मोहिलों के कमजोर शासक के समय कोलासर के शासक (सामंत) ने स्वतंत्र होने का प्रयास किया हो एवं युद्‌ध मैदान में काम आया, देवळी के के नीचे का भाग टूटा हुआ है

इसलिये विवरण उपलब्ध नहीं हैं ऐसा प्रतीत होता है कि ये दोनों देवळियां अलग अलग स्थानो पर थी, लेकिन खण्डित होने के उपरान्त आस्तिकजनों ने जुझार राठौड़ नरहरिदास एवं संत देवलनाथ की समाधि स्थल पर रखवा दिया । सम्भव है ये दोनो देवलियां पानी भराव क्षेत्र में थी, पानी के साथ मिट्टी आना स्वाभाविक था, आस्तिकजनों ने मूर्ति भाग से मिट्टी हटा कर उसे बाहर रखा तथा विवरण भाग भूमिगत रहा, जिससे नीचे का भाग भूमि की सिलहन के कारण ऊपरी भाग को लगी हलकी चोट से अलग हो गया और विवरण भाग भूमि में रह गया । यह क्षेत्र आबादी में होनें के कारण भविश्य में देवी का आधा भाग मिल सकता हैं, लेकिन वर्तमान में किसी ने भी इस सम्बन्ध में जानकारी नहीं दी । तीसरी देवळी राठौड़ नरहरिदास की है जो वि.स.1309 में युद्व मैदान में वीरगति को प्राप्त हुये, इनके पीछे भाटी किषना सती हुयी थी । क्षेत्रीय राजनीतिक स्थिति से प्रमाणित होता है कि यह युद्व चरलू–छापर के षासक मोहिल सोहणपाल के साथ हुआ था । स्मरण रहे ! युद्व मैदान में वीरगति प्राप्त जुझार की देवळी स्थल (स्मारक) एवं सती का अग्नि स्नान स्थल (सती होने का स्थान) एक होना आवश्यक नहीं था, लेकिन जुझार की देवळी(स्मारक) पर घोड़े के आगे सतियों का चित्र होना यहां की गौरवशाली परम्परा रही है।

लगभग 250 वर्शो तक राष्ट्रकूटों (राठौड़ों) की इस शाखा के 9–10 शासकों ने कोलासर पर स्वतंत्र एवं सामंत की हैसियत से शासन किया । मोहिलों के बढते प्रभाव के आगे इस शाखा का अस्तित्व समाप्त हो गया । राजनीतिक घटनाचक्र एवं ऐतिहासिक तथ्य प्रमाणित करते हैं कि गोगाजी के वि.स.1082 में जुझार होने के उपरान्त उनके यषोगान में राजा सिंघराज कोलासर(कोळासर) गढ एवं राजकुमारी केलमदे का नाम प्रसंगवश आता रहा,लेकिन 14 वीं. शताब्दी के लगभग मध्य में यह राजधराना जनसामान्य की जानकारी में नहीं रहा,क्योंकि कोलासर पर मोहिलों का अधिकार हो गया और राठौड़ राज्य वि.सं.1309 में ही समाप्त हो गया था। वि.सं.1323 में बूड़ोजी व पाबूजी राठौड़ के वीरगति को प्राप्त होनें के पश्चात् पाबूजी की आत्मा को देवषक्ति प्राप्त हुयी, कुछ वर्षों बाद लोककथाओं में परिवर्तन हो गया । कोलासर गढ की राजकुमारी केलमदे को कोळूगढ की राजकुमारी बता 300 वर्शों के अन्तर को भूलाकर बूड़ोजी की पुत्री बताया गया । गोगाजी, पाबूजी व केलमदे के यषोगान में लोककलाकारो एवं बातपोशों ने ऐतिहासिक तथ्य को संयोगवष भ्रमित कर दिया । स्मरण रहें ! हमें आस्था की पट्टी को इतना खैंच कर नहीं बांधना चाहिये कि वास्तविक धरातल के दृश्य दीखने बंद हो जायें ।

कोलासर से उत्तर पश्चिम में स्थित कुओं–तालाबों के पास शांत हुए युद्व मैदान स्थल पर टांई के नाथ आश्रम से वि.सं.1101 में स्वरूपनाथजी अपने शिष्यों के साथ आये एवं आश्रम स्थापित किया । योगी समाज की बही एवं लोकचर्चा के अनुसार उस समय आस पास के क्षेत्र में कृषक तथा पशुपालकों की सात ढाणियां भी स्थाई –अस्थाई रूप से आबाद थी । इस स्थान को नाथों का डेरा नाम से पहचाना जाने लगा । वर्षों बाद इसी स्थान पर पुनः वि.स. 1309 में राठौड़ों एवं मोहिलों के मध्य निर्णायक युद्व हुआ,जिसमें कोलासर के राजा राठौड़ नरहरिदास वीरगति को प्राप्त हुये, उनकी रानी भाटी किशना सती हुयी । सम्भवतः इस युद्व के बाद या वि.सं. 1311 में लोहट मोहिल के छापर की गद्दी पर बैठने के उपरान्त राठौड़ इस क्षेत्र से अन्यत्र प्लायन कर गये । कोलासर गांव जागीर के रूप में मोहिल राजपरिवार के सदस्यों को प्राप्त हुआ । ग्रमवासियों एवं बही के अनुसार लगभग 750 वर्ष पूर्व किशन सिंह चौहान झगड़ा कर ददरेवा से यहां आये तथा नाथजी के गृहस्थ शिष्य हुये, इनके वंशज हुडेरा गावं में निवास करते हैं। मोयल गजेसिंह एंव उनके पुत्र रणधीर सिंह यहां के जागीरदार रहे हैं । मोयल दलपत सिंह देवलनाथजी के समय हुये, जिन्होंने नाथजी की तपस्या से प्रभावित होकर आश्रम के दक्षिण दिशा में दो कुओं का निर्माण करवाया तथा 700 बीधा भूमि आश्रम को प्रदान की । जुझार राठौड़ नरहरिदासजी की देवळी से सवातीन हाथ उत्तर में बही के अनुसार देवलानाथजी ने वि.स.1505 में जीवित समाधि ली । इस स्थान के क्षेत्र में कई समाधियां हैं । राठौड़ नरहरिदास की देवळी मूर्ति को मूल स्थान से हटाकर वर्तमान में देवलनाथजी की मूर्ति के पीछे दीवार में स्थापित कर रखा हैं जहां नियमित पूजा होती है । इस स्थान से 50 मीटर उत्तर में परमार्थ जुझार हुये भोमियां जी का शक्ति सम्पन्न स्थान भी हैं । हथूंडी से आये सिंघराज हथूंडिया एवं उनकी राजकुमारी केलमदे की कहानी कथाओं में प्रतिष्ठित तथा छापर के मोयलों के अधिकार क्षेत्र

में रहा कोलासर, ''रतनगढ परिक्रमा'' के सम्पादक श्री ओम सारस्वत के अनुसार कालान्तर में बीकानेर राठौड़ राज्य का यह आबादी क्षेत्र वि.स.1858 में रतनगढ के नाम से प्रतिष्ठित हुआ । कोलासर की राठौड़ राजकुमारी केलमदे की कहानी लगभग 700 वर्षो से भ्रमित तथ्यों के साथ प्रचारित थी,जिसे प्रमाणित ग्रंथों के आधार पर प्रस्तुत किया गया हैं ।

संदर्भ ग्रंथ–

1. बीकानेर राज्य का इतिहास,लेखक गौरीशंकर हीराचन्द औझा, पृ.स. 75,76,77

(2) ख्यात देशदर्पण, लेखक–दयालदास सिंढायच,पृ.सं.4,6(3) राजपूत वंशावली,लेखक ईश्वर सिंह मडाढ, पृ.सं. 6,54,55

(4) राष्ट्रकूटों का इतिहास ,लेखक विश्वेश्वरनाथ रेउ, पृ.सं. 14,48,58,61,78,84,89,101

(5) हस्तिकुंडी का इतिहास,लेखक –डॉ. सोहनलाल पटनी,पृ. सं.4,14,15,39,40

(6) चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास,लेखक– गोविन्द अग्रवाल, पृ.सं. 126,127,128,131,132

(7) पाबू प्रकास महाकाव्य,लेखक– मोडजी आशिया,पृ.सं. 70,72,81,104

(8) राजपूताने का इतिहास,लेखक –जगदीशसिंह गहलोत,पृ. सं. 7,8,24,29

(9) क्यामखां रासा, कविजान दोहा सं. 109,110,111

(10) चौहानों के राव उदयसिंह आसलपुर की गोगापोता बही

(11) योगी समाज के राव काननाथ की बही हुडेरा जोगियान के सम्बन्ध में लिखित पंक्तियां ।

समयसाराधारितं सप्तद्रव्यस्वाधीनता–पराधीनता विवेचनम्

निलेश जैनः
शोधार्थी (संस्कृत)
जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ मानित विश्वविद्यालय, उदयपुर
मो. 9694158861
ई–मेल : nileshveer3@gmail.com

डॉ. कुसुमलता टेलर
सहायक आचार्य (संस्कृत – विभागः)
सामाजिकविज्ञानमानविकीसंकायः
जनार्दनरायनागरराजस्थानविद्यापीठ (डीम्ड टू बी विश्वविद्यालयः) उदयपुरम्

प्रस्तावना

जैनदर्शनस्य दिगम्बरपरम्पराप्रसिद्ध समयसार नामकः ग्रन्थः आत्मतत्त्वस्य गूढतत्त्वानां प्रतिपादकः प्रकरणग्रन्थः अस्ति। आचार्यकुन्दकुन्दस्य रचना समयसारः जीवात्मनः निश्चय–व्यवहारनयभेदेन स्वरूपनिर्णयमधिदृत्य विस्तृतं दर्शनं प्रदर्शयति। विशेषतः अस्मिन् ग्रन्थे जीव (आत्मा) तथा अजीव (अनात्मद्रव्याणि) इत्येतयोः स्पष्टं भेदोपदेशः विधीयते। प्रत्येकं द्रव्यं स्वस्वरूपेण नित्यस्वतन्त्रं (स्वाधीनम्) अस्ति इत्येतद् जैनसिद्धान्तस्य मूलम्। तथापि व्यवहार.ष्ट्या तान्यन्योन्याश्रयानि इव भान्ति । विशेषतः संसारस्थ जीवः कर्मबंधनादि–वशतः पराधीनभावेनापिदृश्यते। अतः स्वाधीनता (स्वतन्त्रत्वम्, आत्मनियन्त्रणशीलता वा स्वपरिणामकर्तृत्वम्) तथा पराधीनता (अन्यद्रव्यपरतन्त्रावस्थिता) इत्येतयोः संदर्भे सप्तद्रव्याणां स्वभावोऽत्र विचार्यते। समयसारग्रन्थे प्रतिपादितानां सिद्धान्तानां आधारतः प्रतिद्रव्यं स्वाधीनता–पराधीनतास्वरूपं विश्लेषयिष्यामः। प्रकरणस्य संगतिमर्थं प्रथमतः जैनदर्शनप्रतिपादितेषु सप्तसु द्रव्येषु संक्षिप्तः परिचयो दत्तव्यः।

जैनसिद्धान्ते सप्तद्रव्याणि : स्वरूपसंक्षेपः

जैनागमस्य दुरवस्थानुसारं सर्वं तत्त्वं षड्–द्रव्यात्मिका सृष्टिः मित्यभिप्रेतम् । एकं चेतनद्रव्यं जीवः, अपराणि पंच अचेतनद्रव्याणि अजीववर्गे अन्तर्भवन्ति। एतेषां संख्यासंदर्भे 'सप्तद्रव्य'शब्दोऽपि प्रचरति । जीवद्रव्यमेकं तथा अजीवद्रव्याणि पंच, एवं जीव–अजीव इति द्विविधभेदेन सप्तसङ्ख्याकमिति। तत्त्वार्थसूत्रेऽपि निर्दिष्टम् । "अजीवकाया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः" इत्यादि, यदर्थः अजीवास्तिकायाः पञ्च प्रकाराः सन्ति, ते च धर्म, अधर्म, आकाश, पुद्गल तथा (दिगम्बरमतानुसारम्) काल इति द्रव्याणि। अत्र कालद्रव्यस्य गणना कतिपयैः पृथक् क्रियते, श्वेताम्बरमतमान्ये कतिपये ग्रन्थे तु कालं द्रव्यत्वेन नैव स्वीक्रिय, केवलं परिणामसाहाय्यकारणत्वेन व्यवध्रियते इति सूचितम्। तथापि कुन्दकुन्दाद्यैराचार्यैः कालोऽपि वास्तविकद्रव्यत्वेन स्वीक्रियते स्म। एवं षट्/सप्तद्रव्याणि जैनदर्शनस्य दिग्व्यापिनी मूलसत्ता इति प्रतिपादितम्। समयसारग्रन्थे अपि प्रारम्भे नवतत्त्वप्रकरणे जीवाजप्आदीनां तत्त्वानां निरूपणं दृश्यते । यथाआचार्यकुन्दकुन्दः"जीवाजीवआसवसंवरनिर्जराबन्धो मोक्षश्च" इत्यादि निश्चयनयेन भूतार्थस्वरूपतः ज्ञेयानि तत्त्वानि संकीर्तयति।

प्रत्येकस्य द्रव्यस्य स्वरूपं संक्षेपेण निरूपयामः । (१) जीवः चेतनच्तपदबपचसम, ज्ञान–दर्शन–उपयोगलक्षणसंयुक्त आत्मतत्त्वम्। जीवद्रव्यस्य मुख्यलक्षणं ज्ञानोपयोगः (ज्ञान–चेतनाशक्तिरू) इति आगमोक्तं "उपयोगलक्षणो जीवः" इति परिभाष्यते। (2) पुद्गलः रूपादिगुणकाययुक्तं भौतिकद्रव्यं, यथा पञ्चेन्द्रियग्रह्यरूप–रस–गन्ध–स्पर्शात्मकः पदार्थविशेषः। सकलभौतिकवस्तूनां (देहाद्युपाधीनां, कर्मणां च) मूलद्रव्यं पुद्गलः, अनादिनिधन परमाणुरूपेण विद्यमानः। (३) धर्मद्रव्यं दिगम्बरजैनपरिभाषया धर्मास्तिकायः नामकं द्रव्यं, यत् जीवपुद्गलादीनां गत्युपकारकं निमित्तभावेन वर्तमानं सर्वव्यापि द्रव्यं, स्वयं तु निष्क्रियं निरीहमस्ति। (४) अधर्मद्रव्यं अधर्मास्तिकायः, यः स्थित्युपकारकः द्रव्यविशेषः; गतिमन्तोः वस्तुनोः विश्रान्त्यासन्दर्भे साहाय्यकारी निमित्ततत्त्वं, स्वयं निष्क्रियं जडं च। (५) आकाशद्रव्यं सर्वद्रव्याणां अवगाहस्थानं प्रदानं कुर्वन् दिगन्तरालयरूपः वस्तुस्वरूपः; लोकाकाशालोकाकाशभेदेन विभक्तः अनन्तप्रदेशात्मकः द्रव्यविशेषः। (६) कालद्रव्यं परिवर्तनानां अनुक्रमपरिच्छेदकारणभूतः द्रव्यविशेषः। कालः परिणामानां

सहकारिरोधकः सतत्वेऽपि स्वयं निर्गुणावलम्बी द्रव्यत्वेन स्वीक्रियते। दिगम्बरमतानुसारम् कालद्रव्यं द्रव्यमूलकं सत्, परिस्पन्दशून्यत्वात् अनस्तिकायः (प्रदेशात्मकताविहीनः) इति; सः अनन्तानन्तक्षणात्मनाम् कालाणवः (क्षणपरमाणवः) इति स्वरूपभेदेनोद्दिश्यते। एवं चेतननिर्मुक्तानि पुद्गल–धर्म–अधर्म–आकाश–कालाख्यानि पञ्च द्रव्याणि सामूहिकनाम्ना अजीवद्रव्याणि इत्युच्यन्ते एतानि सर्वाणि ज्ञानदर्शनादिशून्यानि जडस्वभावानि, अपरस्पन्दित्वाद् निःक्रियद्रव्याणि च। अधुना एतेषां सप्तानां द्रव्याणां स्वाधीन–पराधीनभावौ समयसारग्रन्थोक्त.ष्ट्या परीक्षणीयौ।

जीवद्रव्यः स्वाधीनता एवं पराधीनता

जीवस्य स्वरूपस्वाधीनता (निश्चयसिद्धान्तः) जीवद्रव्यं चेतनस्वभावकम् आत्मतत्त्वम्। परमार्थदृष्ट्या आत्मनः स्वभावनिर्धारणे कश्चित् अपरः कारकत्वं न विद्यते . आत्मा स्वद्रव्यस्वभावेनैव व्यवस्थितः, स्वपरिणामनिर्वहणक्षमश्च। प्रत्येकस्य द्रव्यस्य यत् स्वलक्ष्मिकं गुणद्युतिः विद्यते तस्य परिवर्तने मूलकर्तृत्वं तदेव द्रव्यं वहति, न पुनरन्यद्रव्यम्। समयसार में आचार्यकुन्दकुन्दः अस्पष्टं निश्चयसिद्धान्तं प्रतिपादयति – "जो जंहि गुणे दव्वे सो अण्णम्मि दु ण संकमदि दव्वे, सो अण्णमसंकंतो कह तं परिणामए दव्वं" इतिद्द अर्थतः यः प्रत्येकद्रव्यस्थितः स्वगुणविशिष्टो आत्मा (वा अन्यद्रव्यं), सः अन्यद्रव्ये गुणान्तरप्रवेशं न करोति; आत्मद्रव्यं स्वपरिणामं स्वयमेव वहति, न तु परद्रव्यं तत्स्वरूपं परिवर्तनक्षमम्। अत एव आत्मा स्वद्रव्यप्रधान उपादानकारणभूतो निजभावपरिणामेषु, न अपरद्रव्यस्य। समयसारे सुवर्णितोऽयमर्थः "जीवः परद्रव्यगुणपर्यायाणां कर्ता नास्ती" इति। अन्य.ष्ट्या यदा कश्चित् मिथ्यादृष्टिर्जीवो देहादिपुद्गलगतविकारानात्मस्वरूपान् आत्मत्वेनाभिमन्यते तदा स मोहान्धत्वात् स्वस्वात्मस्वातन्ष्यं नोपलभते। परन्तु यदा सम्यग्दर्शनप्राप्तः जीवः स्वद्रव्यगुणान् भव्यार्थं .ष्ट्वा परद्रव्येभ्यो व्यक्तं भिदां प्रतिपद्यते तदा स निष्परपृष्ठभावः स्वाधीन आत्मा भवति। समयसारस्य शिक्षानुसारं "आत्मा नितान्तस्वाधीन चौतन्यद्रव्यं यत् ज्ञानदर्शनादिगुणैः सदैव निर्णीतः" आत्मा नित्यसिद्धचौतन्यधर्मका वस्तु, अन्यद्रव्यस्य स्पर्शमात्रेणापि रहितम्। "सर्वज्ञ ने देखा कि सदा उपयोगलक्षणः जीवः पुद्गलमयी कदापि न भवति, न च पुद्गलो जीवस्वरूपः" इति समयसार–वचनस्य तात्पर्यम् आत्मनः चौतन्यगुणः नित्यस्वभावः, स कदापि भौतिकगुणैः न मिश्रयति; अतः शरीरादि पुद्गलद्रव्याणि 'मम आत्मभागः' इति मिथ्या अभिमानः दुर्बुद्धेः फलितः। स्वभावतः आत्मा अरूपः, अमूर्तः, अकर्मकः, केवलज्ञातृ–द्रष्टृस्वभावः अयं नितान्तस्वाधीनपरमात्मस्वरूपे जीवद्रव्यस्य परमार्थः।

जीवात्मनः पराधीनता (व्यवहारस्थितिः) यद्यपि आत्मा निश्चयनयेन स्वपरिणामकर्ता द्रव्यं, तथापि संसारस्थजीवः प्रारम्भादिदेशकालादिसापेक्षः प्रत्यवेक्ष्यते। जीवस्य पराधीनता मुख्यतया कर्मबंधनवशात् व्यवहार–.ष्ट्या भवति। अज्ञानवशात् राग–द्वेषादिकषायबन्धनस्य प्रभावेण आत्मा पुद्गलकर्मद्रव्याणां आस्रवव्रजात् आ.ष्य बन्धं प्राप्नोति तदा स कथंचित् परतन्त्रावस्थां प्राप्नोति, यतो हि शुभाशुभकर्मफलभोगादि विषयेषु आत्मनः स्वतन्त्रशक्तिर्नोपयुज्यते। यद्यपि आत्मा न स्वभावतः पुद्गलकर्मणः कर्तृत्वं वहति, तत्त्वतः तानि कर्मद्रव्याणि स्वोपादानशक्त्या एव बध्यन्ते

तथापि व्याहारिकदृष्ट्या जीवः कर्मणां कर्ता भोक्ता च इति व्यवह्रियते। समयसारकारिका स्पष्टमेतद्विभागं दर्शयति "दव्वगुणस्स य आदा ण कुणदि पुग्गलमयह्मि कम्मह्मि, तं उभयमकुव्वंतो तम्हि कहं तस्स सो कत्ता" इति वचनम्। अर्थतः आत्मा द्रव्यकर्मस्वरूपे पुद्गले किञ्चित् अपि वास्तविकं न करोति, न तस्य द्रव्यस्य गुणस्य वा परिवर्तनं कुर्वन्ति; अतः निश्चयतः जीवः तद् पुद्गलकर्मणः कर्ता न भवितुमर्हति। परन्तु व्यवहारनयमनुसारेण मोहान्धः प्राणी "अहमेव पुण्यपापरूपाणां कर्मणां कर्ता, तदनन्तरं सुखदुःखादिफलानां भोक्ता" इत्यभिमन्यते। एवं व्यवहारसत्ये आत्मनः पराधीनकर्तृत्व–भोक्तृत्वादिभावाः स्वीकुर्त्य शास्त्राणी समुपदिशन्ति, यथा "देहधारी जीवः कर्मबंधवशाद् सुखी दुःखी वा भवति", "संसारी जीवः परवशः, मुक्तस्तु स्ववशः" इत्यादि। बन्धमोक्षादिसमस्तव्यवहारः उपचारदृष्ट्या जीवस्य पराधीनावस्थां दर्शयति। स्वयं समयसारग्रन्थे आचार्येण निर्देशः .तः "जीवेण कदं कम्मं भण्णदि उपचारमत्तेण" इति, यथा रणांगणे योधैः दृत युद्धं राजदृतमिति व्यवहारोपचारतः कथ्यते, तथा आत्मनः द्रव्यकर्मापि दृतमित्युपचरितं कथ्यते। यदा जीवः सम्यक्दर्शनज्ञानचरित्रप्रभावेण मोक्षमार्गं प्रविष्ठः, तदा क्रमशः अशुभकर्मणां निर्जरा अपगतिः सम्पन्ना दृमोहनीयादिकर्मणां क्षयो भवति। अन्ते सर्वकर्मनिर्जरया सिद्धावस्थायां जीवः परमस्वाधीनः, अपराधीनः, नितान्तशुद्धद्रव्यात्मकः परमात्मा

भवति। अतः संसारी अवस्थायां जीवस्य पराधीनता कर्माश्रिता व्यवहारसत्यतया मान्या, मुक्तावस्थायां पुनः केवलस्वाधीनतैवोपपन्ना।

अजीवद्रव्याणि स्वाधीनता एवं पराधीनता

अजीवद्रव्यशब्देन जडस्वरूपाणि पंच द्रव्याणि गृह्यन्ते पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल च। एतेषां सामान्यस्वभावोऽयं यत् ते सर्वे अपि अचेतनत्वेन निजगुणपरिणामकर्तृत्वेन स्वाधीनाः भवन्ति, न च क्वचित् जीवद्रव्यस्य गुणधर्मान् प्राप्य परिवर्तन्ते। तथा जीवनो भवति । आत्मद्रव्यं सत् चौतन्यस्वरूपं, अजीवद्रव्याणि पुनरचेतनान्येव; आत्मनः उपयोगदर्शनादिगुणाः न कदापि अजीवद्रव्येषु संचारितुं शक्नुवन्ति। समयसारविशेषोऽयं यत् जीवो द्रव्यतः परद्रव्यगुणानां स्पर्शमपि न सहते, परस्परं जीवाजीवयोर्भेदः अत्यन्तम्। अत एव जीवाजीवयोर्भिन्नत्वप्रतिपादनमेव समयसारजीव–अजीव–अधिकारस्य केन्द्रीयभावः दृष्टः। अत्र अजीवद्रव्येषु प्रत्येकस्य स्वातन्ष्य–परतन्ष्यावस्थे विविच्य पृथक् परिचालिताः ।

पुद्गलद्रव्यः

पुद्गलः अजीवद्रव्येषु प्रमुखं द्रव्यमित्युच्यते मूर्तत्वात्, ग्राह्यत्वात्, रूपवर्णादिगुणोपेतत्वाच्च तस्य विशेषः। सर्वे भौतिकविषया (शरीरं, इन्द्रियाणि, भोग्यवस्तूनि, सुखदुःखादिभावनिबन्धनानि कर्माणि च) पुद्गलद्रव्यपर्याप्ताः सन्ति। पुद्गलद्रव्यस्य स्वाधीनता तु एतस्मिन् वर्तते यत् पुद्गलम् अपरद्रव्याणां साहाय्यं विना स्वकीयगुणपरिणामं विदधाति। न केवलं जीवनः पुद्गलः पृथक्.तः, अपितु पुद्गल–पुद्गलयोः अपि पारस्परिकं भावादानप्रदानं नियमेन सीमितमेव एकस्मिन् पुद्गलपिण्डेऽन्यस्मिन् गुणप्रवाहः स्वोपादानबलादेव स्यात, नैव परद्रव्यस्य हस्तक्षेपेण। पुद्गलद्रव्याणां परमाणुरूपेण नित्यं स्वभावस्थितत्वम् ते न केनचित् सृष्टिकर्त्रा निर्मीयन्ते, न विना स्वद्रव्यं विनश्यन्ति; केवलं संयोगवियोगादिरूपैः परिवर्तनैः सततं चरन्ति। परमाणवः स्वस्वरूपे नित्यनिरस्तविकारा द्रव्यरूपेण स्वाधीनाः, संयोगादिरूपपर्यायैः अनादिकालं चरन्ति। समयसारकारिकायां पुद्गलस्य स्वपरिणामाधीनकर्तृत्वमुद्दीप्यते "तम्हि सयं पोग्गलं दव्वं कम्मत्तं परिणमदे" इत्युक्तम्। यदा जीवस्य भावानुसारिणः पुण्यापुण्याश्रवः संजायते, तदा तस्य अनुकूलान् सूक्ष्मपुद्गलपरमाणून्कर्मवर्गणारूपेण उद्भवमानान् आत्मा उपादत्ते। अत्र ।चप यथार्थतः पुद्गलद्रव्यमेव स्वकीयवर्गणायां कर्मत्वेन परिणमते, आत्मा केवलं निमित्तमात्रम्। एवं उपादान–निमित्तभेदेन पुद्गलस्य परिणमनक्रियासु आत्माभिनिवेशः केवलम् औपचारिकः आत्मा न पुनः पुद्गलस्य द्रव्यकर्तृत्वं वहति। जडरूपत्वात् पुद्गलस्य स्वतन्त्रं क्रियात्मकत्वं सीमितमेव स चेतनवत् स्वप्रयोजनं न जानाति, किन्तु दैवीयनियमेन स्वगुणानां परिवर्तनं निरन्तरं कुर्वन्मात्रं दृश्यते।

पुद्गलद्रव्यस्य पराधीनता विशेषतः जीवद्रव्यसापेक्षतया दृश्यते। यद्यपि जीवः पुद्गलगुणानां वास्तविकं परिवर्तनं न करोति, तथापि संसारचक्रे जीवनः उपस्थित्या पुद्गलः नानारूपेण व्यवस्थितः सम्पश्यते। शरीररचनायां पुद्गलपरमाणवः जीवसंयोगं विना न स्थूलतनुरूपं समवयन्ते देहानिर्मितये जीवसंयोगानुसारः सूक्ष्मकर्मप्रभावः आवश्यकः। तथा सुखदुःखादि अनुभूतेः निमित्ती.ताः शुभाशुभकर्मपुद्गला जीवनः रागद्वेषवशेनावश्यं बध्यन्ते। अतः कर्मस्थानकपुद्गलानां बन्धोपादाने जीवनः रागद्वेषादयः प्रमुखं कारणं अत्र पुद्गलः परतन्त्रः इव दृश्यते यतो हि जीवनः भावप्रेरणां विना कर्मवदनामुद्रेक्षणं न स्यात्। परं सत्यं तु यत् पुद्गलद्रव्यं तत्स्वभावेनैव कर्मत्वं प्राप्नोति, न जीवतः स्पर्शनिमित्तमात्रेण तद्रूपं अत्र पुनः निश्चयसत्ये स्वाधीनतैव पुष्टा। एवं चिदचिद्वस्तुनोः संबन्धोऽयं नैयमिकः नित्यभिन्नद्रव्यत्वेऽपि जीवनः उपाधिनिमित्तत्वेन पुद्गलस्य प्रकारान् निर्धारयति, पुद्गलश्च जीवनः व्यवहारान् प्रत्युपकरोति। अन्यच्च, धर्माधर्मद्रव्ययोः अपेश्रितः पुद्गलः गमनागमननिवृत्त्योरुपकरणार्थं तयोः साहाय्यमपेक्षते। स्वयं निष्क्रियः सन् पुद्गलः न गन्तुं शक्नोति यद्यपि बलान्तरापेक्षया चलनप्रवृत्तिम् उपादत्ते; किन्तु धर्मद्रव्यसंनिकर्षे सति एव गतिर्निर्वहति, अन्यथा न। एवं धर्मास्तिकायसहाय्यभावे पुद्गलपरमाणवः न क्वापि सञ्चलितुं शक्नुवन्ति। अतः अयं परतन्त्रत्वप्रकारो व्यवहार.ष्ट्या पुद्गले .श्यते। तथैव स्थित्यभावेऽपि अधर्मद्रव्यनिर्भरः पुद्गलः, अन्यथा निश्चलत्वं न लभते। अत एव भौतिकजगतः संचालनं नियमबद्धं सम्यक् सम्पन्नं भवति यतो हि पुद्गलद्रव्याणि धर्माधर्मद्रव्यसाहाय्योपेतानि स्वव्यापारं कुर्वन्ति।

धर्मद्रव्यः (धर्मास्तिकायः)

द्रव्येषु धर्माख्यं द्रव्यमेकं विशिष्टं विद्यते यत् स्वयम् अचेतनं निष्क्रियं च सन् अपरद्रव्याणां गतिक्रियायै निमित्ततां ददाति। धर्मास्तिकायः इति संज्ञायां बोध्यते अस्तिकायत्वेन दिग्व्यापि द्रव्यविशेषः सन्निहितः, धर्मत्वेन गमनप्रक्रियायै

अपरद्रव्याणि अनुपकुरुते। अस्य स्वाधीनता एतत् यत् धर्मद्रव्यं स्वस्थानस्थितमेव सर्वव्यापि वस्तु, न कस्यचित् प्रेरणां विना स्वभावतोऽस्ति नित्यं यथावदवस्थितिः। न तस्य कापि चेष्टा, न कश्चन विकाररू, न वा कस्यचित् क्रियायां प्रत्यक्षसहभागिता; केवलं यत्र यद् द्रव्यम् संचलितुं शीलम्, तस्मै मार्गवत् पथिकाय, सलिलवत् मत्स्याय, आश्रयभावेनोपस्थितं भवति। धर्मद्रव्यस्य सतत्त्वे सति सर्वभौतिकचेतनवस्तूनां गतिरू सुगमता सम्भवति; यदि तन्न स्यात्, कश्चन सञ्चालनव्यापारोऽपि न स्यात् इयं जैनागमप्रसिद्धिः। अत एव धर्मद्रव्यं स्वतन्त्रं द्रव्यं सत् गुणविशेषरहितं केवलं गतिसाधकं नित्यं सन्निहितमस्ति।

पराधीनता तु धर्मद्रव्यस्य एतावान् एव यत् असौ अनुपकारकद्रव्यं जीवनां पुद्गलानां गतौ सहायकः। स्वयम् अगत्यभावात् तस्य धर्मत्वमेव निःस्वर्यमाणम् भावरूपेण क्वापि गतिरेषां द्रव्याणां धर्मद्रव्यं विना न सिध्यति। तस्मिन् सति गमनं निष्ठम्पूर्वकं भविष्यति, तस्मिन् विना जडप्राणिनोः प्रमीणगमनव्यवहारो दुःसाध्यः। परन्तु अयं परतन्त्रभावः केवलं व्याहारिकः न हि धर्मद्रव्यं काचित् शक्तिर्जडान् प्राणिनोः अन्तः प्रविश्य चलयितुं, न वा गतिमन्तोः चौतन्यवान् द्रव्ययोः अभाव आरभ्य सञ्चालकं कर्तुं समर्थः। अदेहधारिणां सिद्धजीवेषु धर्मद्रव्यस्योपयोगो नास्ति तेषां सर्वगतित्वेऽपि गत्यभावात्; तथापि तदस्तीत्वं न निवर्तते। अतो धर्मद्रव्यं स्वभावतो निरपेक्षं नित्यमस्ति, केवलं व्यवहारार्थं जीवनां पुद्गलानां गत्यपेक्षया तदुपस्थितिं परतन्त्रया उल्लेखन्ति।

अधर्मद्रव्यः (अधर्मास्तिकायः)

अधर्मद्रव्यं धर्मद्रव्यस्यैव विपरीतकार्यकरं द्रव्यं गतिविरोधि स्थितिसाधकं तत्त्वम्। अधर्मास्तिकायः दिग्व्यापी द्रव्यविशेषः, यः अन्यद्रव्याणां विश्रान्त्यवस्थानिमित्ततां वहति। एतस्य स्वाधीनस्वरूपं तथैव यथा धर्मद्रव्यस्य स्वभावतो निश्चेष्टं निरवयवं चेदं द्रव्यं सर्वत्र वर्तमानं, स्थिरत्वप्राप्तौ प्रेरकानां परिस्थितीनां एकं कारणम्। तस्य गुणाः स्वकिये एव वर्तन्ते, कोऽपि जीवादिः तस्य रूपान्तरे प्रवर्तकं कर्म न कुर्यात्। अयं निश्चलः, स्वयं सर्वदा संस्थितिशीलः अत एव स्थितौ प्रेरकत्वं नाम गुणभूतमारोपितमस्य द्रव्यस्य।

अस्य पराधीनता अपि धर्मद्रव्यवन्मात्रम् यतो हि अन्यद्रव्याणां स्थितिक्रमः अस्योपस्थानेन सुकरः। यदि अधर्मास्तिकायः न स्यात्, सर्वथा प्राणिनः वस्तूनि च निरन्तरं चलनशीलानि स्युः विश्रान्तिरेव न स्यात्। अधर्मद्रव्यं छायाश्रयवत् स्थाननिगमनाय कारणं इति .ष्टान्तश्रवणं प्रचलितम्। तस्मिन् द्रव्ये सति, गतिश्रमशान्तये जीवः विश्रामं विन्दति, पुद्गलद्रव्याणि स्वगतसंघटनस्थितिमुपयान्ति, नीतरां च बलपूर्वकं यावत् कालं स्वस्थानपरिसरे तिष्ठन्ति। अस्यास्ति व्याहारिकपरतन्त्रता स्थूलतया स्थाननिगमन क्रियासु अन्यद्रव्याणामपेक्षां करोति; अतः शरीरधारिणां प्राणिनां मृत्युकाले अधर्मायतनस्य आश्रयः कथ्यते अर्थात् जीवः शरीराद्विच्छिन्नः संघातस्थानत्वमेव प्राप्नोति, नाचिरात् अन्यशरीरप्राप्तिपर्यन्तं। एवं जन्म–मरणादिकार्यक्रमेऽपि अधर्मद्रव्यस्य उपस्थितिर्जीवस्य अवस्थाविशेषनिर्धारणे सहायकभूतास्ति।

आकाशद्रव्यः

आकाशः सर्वद्रव्याणां अवगाहस्थानं, देशपरिशेषयुक्तो दिग्विस्तृतः पदार्थः। जैनशास्त्रे आकाशद्रव्यं लोकाकाश–अलोकाकाशरूपद्विविधम् अभिहितं, यत्र लोकाकाशः ज्ञातव्यः स प्रादेशिकरूपेण सीमितः क्षेत्रविशेषः यत्र सर्वाणि जीवाजीवद्रव्याणि वर्तमानानि; अलोकाकाशस्तु तद्बाह्यमनन्तशून्यक्षेत्रं यत्र जीवनोऽपि न विद्यते, केवलमाकाशद्रव्यं स्वयं विराजते। आकाशद्रव्यस्य स्वातन्त्र्यं तु सर्वेषां द्रव्याणां अधिकं निर्लक्षणम् यतः सः सर्वथा निष्क्रियः, निष्प्रभवः, केवलं अवकाश–प्रदानलक्षणम् एकं गुणं धारयति। नास्य कापि .श्यक्रिया, न च कस्यचित् उपकारको नाम व्यवहारः; केवलं तदस्तीत्वमात्रेण सर्वेषां पदार्थानां अवतरण–स्थित्यादि सम्भवति। "आकाशं नाम द्रव्यमस्ति, तस्य परमः स्वभावोऽनन्तावकाशप्रदानम्" इति जैनसिद्धान्तः। न तस्य सृष्टिरस्ति न विनाशः नित्यशुद्धद्रव्यात्मनैव स त्याज्यग्रहणाद्यतिरिक्तः स्वे महिम्नि तिष्ठति। अन्यद्रव्यैः सह तादात्म्याभावात् तस्य न कोऽपि स्वभावविकल्पः स्वपरिणामेष्वपि शून्यः। अनेन कारणेन आकाशद्रव्यं परमार्थतो निरपेक्षस्वरूपम्। एतस्य पराधीनता अत्यल्पतरि यतः सन् सर्ववस्तूनां अधिष्ठानभूतोऽस्ति। अवकाशं विना न किञ्चन वस्तु प्रतिष्ठां वा गति वा लभते; अतः सर्वभवनानां जन्मस्थानमिव आकाशस्य भावः। तदप्यधिकं न परतन्त्र, यतः आकाशस्यावकाशः स्वस्यैव धर्मः, न जीवेन न पुद्गलेन वा तद्धर्मः कश्चित् प्रदीयते। तथापि सृष्टौ द्रव्यव्यवस्थापनार्थं यद्यपि आकाशस्य व्यापकत्वं अपेक्षितम्, तथापि तल्लक्षणसिद्धिर्नियतैव . एवमपि कथंचित् व्यवहारचित्तेन तस्य अस्तित्वं पराश्रितमिव प्रतिभाति। मूलतो यतः द्रव्यानां विस्तारः

स्वतन्त्रः, तथापि विस्तारसुलभं क्षेत्रं आकाशः सञ्जानाति इति वदामः, व्यवहारावस्थानुसारम्।

कालद्रव्यः

कालस्य स्वरूपं जैनदर्शने विशिष्टम् न स कश्चित् शक्तिमान् देवः कालः, न च केवलं सृष्टिचक्रस्य पारिपाट्यिकः संकेत मात्रः; अपितु कालोऽपि द्रव्यात्मकः तत्वान्तरं परिगणितः। कालद्रव्यस्य दिगम्बरमतानुसारिणो द्वौ भेदौ (१) निष्क्रियः निश्चयकालः (द्रव्यकालः) यः अनन्तपरमाणुरूपक्षणात्मको द्रव्यसमूहो लोकाकाशप्रदेशेषु स्थितः, (2) व्यवहारोपचारनिर्दिष्टः संकल्पकालः यः परिवर्तनपरम्परानुसारः भूतभविष्यद्वर्तमानक्रमनिर्देशार्थं मानवादिभिः कल्प्यमानः समय–क्षण–मुहूर्तादिरूपः। कालद्रव्यस्य स्वाधीनता तु अन्योक्त्या स्पष्टा न हि कालः कदाचित् जीवपुद्गलाद्यन्यद्रव्याणाम् प्रवर्तनां प्रबन्धं वा स्वेच्छया करोति; वरं तु कालद्रव्यं स्वस्वरूपानुगतस्य क्षणत्वगुणस्य प्रकाशनमात्रेण सर्वेषां द्रव्यपरीणामानां साकल्येनानुगमनक्रमं ददाति। प्रत्येकस्य द्रव्यस्य जो पर्यायपरिवर्तने गुणध्रौव्ययुक्तौ स्वकालानुगतं क्रमं प्राप्नोति, स एव कालस्य दानं नात्येति कश्चित् स्वकालम्। कालानुबन्धित एव सर्वस्यानुवर्तनक्रमः प्रचलितः, स च कालद्रव्यस्वभावनिर्वाहितः। कालः नित्यः न तस्योत्पत्तिर्न विनाशः; केवलं सततपरिवर्तिषु द्रव्येषु नूतनपुरातनत्वनिर्देशकत्वेन अस्य भावना गृह्यते। जडद्रव्यत्वात् कालः स्वयमकरणीयः स एकं निमित्तमात्रं परिवर्तनाय। समयसारादिषु ग्रन्थेषु कालद्रव्यस्य विशेषो नावर्णितः, किन्तु द्रव्यसङ्ग्रहे इत्यादिप्रकरणेषु "परिणामप्रत्युपकारकः कालः" इति सूत्ररूपेणोपवर्ण्यते। कालद्रव्यस्य व्यवहारतः पराधीनता विकल्प्या कारणं यतः स्युः कतिपयाः जैनाचार्याः ये समयमात्रं कालरूपं स्वीकुर्वन्ति, द्रव्यस्वतन्त्रतां न मन्वानाः। एवं मते कालः न स्वतंत्रं वस्तु, अपितु द्रव्याणाम् अनुगते परिवर्तनभेदे एव व्यवहारी कल्पना। तत्र स द्रव्येष्वेव अन्तर्भाव्यते एवं सति कालद्रव्यं परतन्त्रं स्यात्, स्वतन्त्रं द्रव्यं न भवेत्। परन्तु दिगम्बरमतानुसारं कालः वास्तविकं भिन्नद्रव्यं, तथा स्वाधीनः अन्यद्रव्येषु निलीनं कालतत्त्वं स्वीक्रियमाणं परतन्त्रमपि स्यात् कुन्दकुन्दादयस्तु कालद्रव्यस्य स्वतंत्रसत्त्वमेव स्वीकुर्वन्ति। अतएव समयसारादौ नवतत्त्वनिरूपणे कालः स्वर्गृहीतः नोपलभ्यते, स स्पष्टं अजीववर्गे अन्तरस्यैव एकदेशतया मनस्वीयम्। वस्तुतः कालद्रव्यं न चरति, न जानाति, न प्रेरयति तस्य समयस्वरूपता नितान्तं स्वतन्त्रधर्मः; तथापि भौतिकशरीरिणां जन्ममृत्युरैश्वर्यक्षयादिकं कालक्रमानुगतं .श्यते इत्यस्य .ष्टीर्णीकरणाय मानवानां चित्तवृत्तौ कालः कश्चन नियन्ता इव अभिमतः। एतत् सर्वं केवलं व्यवहाराश्रितमनुभवसत्यं, न पुनः तत्त्वतोऽस्ति। निष्कर्षतः कालद्रव्यं स्वस्वरूपे नितान्तस्वतन्त्रं, अपरद्रव्यविकासे यद्यपि सहायकं तथापि न कथञ्चित् तेषां गुणधर्मान् आदत्ते अनेन प्रकारेण तस्यापि स्वाधीनत्वमेव प्रथते, न परतन्त्रता।

निष्कर्षः

समयसारग्रन्थमनुसृत्य सप्तद्रव्याणां यथार्थस्वरूपं परिगृह्य तेषां स्वाधीनता–पराधीनताविषये निष्कर्षं निष्क्रष्टुमिच्छामः। जैनदर्शनानुसारेण निःशेषं द्रव्यं वस्तुतः स्वपरिणामकर्तृत्वेन स्वतन्त्रं विद्धि न हि द्रव्यस्य अपरद्रव्यं वास्तविकं कार्यं विनापि सहकरोति । जीवद्रव्यं तु विशेषतः स्वाधीनं यतः तस्य चौतन्यस्वरूपनिर्मलस्वभावः कश्चन अपरः न बाधते, न व्याप्तुं प्रभवति। यद्यपि संसारावस्थायां मोहकषायवशात् आत्मा परद्रव्यसम्बन्धं प्राप्नोति, तथापि स सम्बन्धोपि मूलतो नैवात्मनोऽस्ति, केवलं व्यवहारव्यवस्था। तथा अजीवद्रव्याणि सर्वाण्यपि स्वस्वगुणधर्मेषु नितान्तनियमितपरिणामान्येव तेषां रूपान्तरे क्वचित् क्वापि चेतनाहस्तक्षेपो न विद्यते। एवमपि परस्परसहचारितया विश्वव्यवस्था सुचारुरूपेण प्रवर्तते आत्मपुद्गलयोरनादिबन्धः, धर्माधर्मयोः गतिस्थित्योः साहाय्यम्, आकाशस्य सर्वावगाहप्रदानम्, कालस्य अनुक्रमनियमनम् एतैः सर्वैर्द्रव्यैः सहभूयमानैरिदं जगत् कारणकार्यसम्बद्धं .श्यमानम्। परस्परसहयोगेऽपि द्रव्याणि स्वलक्ष्यनियते एव सन्ति न कदापि जीवः पुद्गलत्वं गच्छति, न च पुद्गलः जीवत्वम् ; एवं न धर्मादयः अन्यद्रव्यत्वं भजन्ते। समयसारः निश्चयव्यवहारभेदेन जीवनः स्वाधीनता–पराधीनते यथावत् व्याचष्टे भूतार्थ.ष्ट्या जीवः कर्मादि–अस्पृष्टशुद्धद्रव्यात्मकः, व्यवहार.ष्ट्या तु कर्मबन्धनादि सहितः परवशत्वेनापि .श्यते। तस्मात् स्पष्टरूपेण जैनागमसिद्धान्तः निजपरिणामेषु सर्वाणि द्रव्याणि स्वाधीनानि, व्यवहारोपयोगे तु परस्परं पराधीनकल्पितानि इति प्रतिपन्नः। अन्ते कुन्दकुन्दाचार्यस्यैव वचनेन सारया अर्थः सूचितुं शक्यते परद्रव्यभावं कर्तुमशक्यं, स्वद्रव्ये परिणामकर्तृत्वमेव नित्यम् इति। अदः सर्वं समयसारग्रन्थनिसृतं सप्तद्रव्यस्वातन्त्र्य–परतन्त्र्यस्वरूपविवेचनं तत्वतः ऐहिकजीवनस्य परम् मार्गदर्शनं क्रियतामिति प्रार्थयामहे।

कर्म योग और निर्विचार शांति : आधुनिक संदर्भ में प्रासंगिकता

विकास कुमार कासनिया
शोधार्थी
योग विभाग, टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. रामदेवा राम आलडिया
शोध निर्देशक
योग विभाग, टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

परिचय

कर्म योग का शाब्दिक अर्थ है 'कर्म में योग', भारतीय दर्शन में एक ऐसी पद्धति है जो कर्म को भी साधना का माध्यम बनाती है। जो कर्म को शांति और निर्विचारिता के साथ जोड़ता है गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं : कर्म में अधिकार है, फल में नहीं। यह निष्कामता का सिद्धांत कर्म को बोझ से मुक्त कर उसे साधना में बदल देता है। दूसरी ओर, निर्विचारिताकृविचारों का पूर्ण विरामकृशांति की वह अवस्था है, जो मन को शुद्ध और स्थिर करती है। आधुनिक जीवन में तनाव, चिंता, और विचारों की अधिकता शांति को छीन लेती है। ऐसे में कर्म योग एक प्रासंगिक और व्यावहारिक समाधान बनकर उभरता है। इस शोध पत्र का उद्वेश्य इसके आधुनिक संदर्भ में प्रासंगिकता, उपयोग को जांचना है। तथा कर्म योग के आयामों का वर्णन करते हुए इसके शास्त्रीय आधार को समझते हुए यह विश्लेषण करना है कि यह शांति और निर्विचारिता का आधार कैसे बनता है। कर्म योग के निम्न आयाम है–

निष्कामता– कर्म को फल की इच्छा से मुक्त करना। यह अहंकार को कम करता है और मन को शांत रखता है।

साक्षी भाव– कर्म करते हुए स्वयं को कर्ता न मानकर द्रष्टा बनना। यह वैराग्य को जन्म देता है।

समर्पण– कर्म के परिणाम को ईश्वर या प्रकृति को समर्पित करना। यह चिंता और तनाव से मुक्ति दिलाता है। ये सभी आयाम कर्म को एक साधारण क्रिया से योग की अवस्था में बदल देते हैं।

आधुनिक संदर्भ में प्रासंगिकता–

आधुनिक युग में तनाव, कार्य–दबाव, और आत्म–केंद्रित जीवनशैली के बीच कर्म योग एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। यह अध्ययन तर्क देता है कि कर्म योग केवल संन्यासियों के लिए नहीं, बल्कि गृहस्थों और किसी भी कार्य क्षेत्र में संलग्न पेशेवरों के लिए भी उतना ही प्रासंगिक है। आधुनिक अध्ययनों में कर्म योग को सकारात्मक मनोविज्ञान से जोड़ा गया है। निष्काम कर्म से तनाव और चिंता में कमी देखी गई है। यह माइंडफुलनेस ध्यान विधि की तरह ही कार्य करता है, जो व्यक्ति को वर्तमान में रखता है।

विवेकानंद जी ने कर्म योग को लोक कल्याण से जोड़ा। उनका कथन कृष्कर्म ही पूजा है –

मानसिक स्वास्थ्य –

आधुनिक जीवन में तनाव और चिंता आम बात हैं। कर्म योग निष्कामता से तनाव कम करता है। एक अध्ययन में पाया गया कि निष्काम कर्म करने वाले व्यक्तियों में चिंता 30 प्रतिशत कम थी। यह निर्विचारिता से शांति को गहरा करता है। निष्काम भाव से कार्य करने वाले व्यक्ति शांत रहते हैं। निर्विचारिता एकाग्रता बढ़ाती है। एक गृहस्थ जो निष्काम भाव से परिवार की देखभाल करता है वह संतुलित रहता है।

कर्म योग का शास्त्रिय आधार–

कर्म योग का वर्णन प्राचीन भारतीय ग्रंथो में मिलता है जो बहुत पुराना है और ऋग्वेद कालीन से ही है लेकिन गीता जी में इसको प्रमुख रूप में बताया गया है, गीता जी को इसका प्रमुख ग्रंथ माना है इसमें कर्म योग को आसक्ति रहित, बिना फल की इच्छा किए गए कार्य को कर्म 'योग' की श्रेणी में रखा गया है श्रीमद्भगवद्गीता के तीसरे अध्याय में 'कर्म योग' की व्याख्या विस्तार से मिलती है। यहाँ श्रीकृष्ण कहते हैं: 'न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्' (3.5) कोई भी क्षण भर के लिए भी कर्म के बिना नहीं रह

सकता। कर्म योग का मूल सिद्धांत यह है कि कर्म प्रकृति का स्वाभाविक गुण है, परंतु इसे फल की आकांक्षा से मुक्त कर निष्काम भाव से करना ही योग है। यह निष्कामता मन को शुद्ध करती है और आत्मा को परमात्मा से जोड़ती है। पतंजलि योग सूत्र के अनुसार निष्काम कर्म चित्त की वृत्तियों को नियंत्रित करता है, जो ध्यान और समाधि की ओर ले जाता है। अन्य शास्त्रों में संदर्भ– ऋग्वेद (10.90) और उपनिषदों (ईशोपनिषद् 1.1) में भी कर्म की महत्ता और उसके निष्फल भाव से करने की प्रेरणा मिलती है। यह दर्शाता है कि कर्म योग वैदिक परंपरा का अभिन्न अंग रहा है।

हमारे शीर्षक के निम्न शब्दों कर्म, और निर्विचार शांति को देखें तो प्रथम दृष्टि में परस्पर विरोधी प्रतीत होते हैं। क्यों की कर्म में तो गति है, परिणाम की आकांक्षा है, जबकि शांति, निर्विचारिता में ठहराव, मौन और संतोष है। फिर कैसे कर्म योग शांति का आधार बन सकता है? यह सवाल हर उस व्यक्ति के मन में उठता है, जो जीवन की भागदौड़ में शांति की तलाश करता है। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण इस रहस्य को खोलते हैः 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' (2.47) – कर्म करो, पर फल की चिंता मत करो। कर्म योग वह कला है, जो कर्म को शांति के साथ जोड़ती है। यह लेख कर्म योग की इस शक्ति को समझेगा कि कैसे यह न केवल जीवन को सार्थक बनाता है, बल्कि मन की गहरी शांति का आधार भी बनता है।

एक तरफ तो जहां आधुनिक जीवन में शांति एक दुर्लभ खजाना बन गई है। सुबह से शाम तक दौड़–भाग, काम का दबाव, और अनगिनत इच्छाएँ मन को अशांत रखती हैं और दूसरी तरफ आजकल Law of Attraction की एक अवधारणा प्रचलित हो गई है की ज्यादा से ज्यादा विचार करो क्यों की विचारों की शक्ति द्वारा इच्छाएँ प्राप्त करना आसान है कोई भी इच्छा करते जाओ, वह वस्तु प्राप्त होती जायेगी यह अवधारणा पश्चिमी दर्शन और न्यू–एज आंदोलन ('द सिक्रेट') से प्रेरित 20 वीं सदी में उभरी है। यह कहता है कि सकारात्मक सोच, दृढ़ संकल्प, और बार–बार विचार करने से हम अपनी इच्छाओं (धन, सफलता, स्वास्थ्य) को वास्तविकता में बदल सकते हैं।

वहीं दूसरी और शांति और निर्विचारिता इच्छाओं को समाप्त करने और मन को शांत करने की बात करते हैं। लेकिन ये दोनों दृष्टिकोण एक–दूसरे के विरोधी लगते हैं –एक इच्छाओं को छोड़ने की बात करता है, दूसरा उसे बढ़ाने की।

आगे हम व्यावहारिकता के आधार पर विश्लेषण करेंगे की इनमें से क्या 'अच्छा' है। और इस बात को विस्तार रूप से समझते हुए शास्त्रों, तर्को के आधार पर आधुनिक समय में कर्म योग से कैसे निर्विचार शांति प्राप्त की जा सकती है। इन दोनों के बीच का मार्ग क्या है?

विश्लेषण :–

सबसे पहले हम समझते हैं आकर्षण का सिद्धांत की ये विचारों की शक्ति क्या है। यह कैसे काम करती है इसके अंतर्गत जो हम चाहते हैं, उसे स्पष्ट रूप से सोचते हैं (विज्वलाइजेशन) करते हैं और इस पर अपनी पूरी भावनात्मक ऊर्जा लगाते हैं। यह ब्रह्मांड से उस चीज को 'आकर्षित' करता है। जो हमें प्राप्त करनी है इसका आधार यह मानते है कि विचार एक ऊर्जा हैं, जो बाहर की दुनिया को प्रभावित कर सकती हैं। जैसे कोई नौकरी चाहता है, तो वह रोज उसकी कल्पना करता है, सकारात्मक रहता है, और कर्म द्वारा मेहनत करता है – फिर वह नौकरी मिल जाती है।

भारतीय दर्शन में भी इस प्रकार संकल्प से सिद्धियाँ प्राप्त करने का उल्लेख मिलता है लेकिन वह केवल भौतिक विषयों, वस्तुओं के लिए नहीं है उसका भाव आंतरिक, आध्यात्मिक है।

शांति, निर्विचारिता में तो इच्छाओं को समाप्त करना होता है क्यों की योग और भारतीय दर्शन (गीता, पतंजलि, उपनिषद, बौद्ध दर्शन ,जैन दर्शन) कहते हैं कि इच्छाएँ मन को अशांत करती हैं और सच्चा सुख निर्विचारिताकृ विचारों के अभाव और शांति में ही है। मन को विचारों से मुक्त कर शांत किया जाता है। इच्छाएँ (कामना) तो अहंकार से जन्मती हैं, और इन्हें छोड़ने से आत्मा अपने मूल स्वरूप में स्थिर होती है। यहाँ लक्ष्य बाहरी उपलब्धि नहीं, बल्कि भीतर की शांति है। लेकिन इसके विपरीत लॉ ऑफ अट्रैक्शन, विचारों की शक्ति में तो ज्यादा से ज्यादा विचार करने होते हैं और इच्छाएँ तो अनंत हैं–एक पूरी होती है, दूसरी जन्म लेती है। अगर एक नई गाड़ी की इच्छा है, अगर वो मिलती है, तो अगली इच्छा नए घर की हो जाती है अब यदि चाही गई वस्तुएं न मिले, तो निराशा भी बढ़ती है। इससे तो मन

और ज्यादा अशांत होगा। शांति और निर्विचारिता तो भीतरी शांति देती है, जो बाहरी हालात से प्रभावित नहीं होती। गाड़ी मिले ना मिले, घर मिले ना मिले, नौकरी जाए या आए, लेकिन मन स्थिर रहता है। इच्छाओं का अंत होने से चिंता, तनाव, और असंतोष खत्म होता है—यह स्थायी सुख का रास्ता है। इन दोनों के बीच संतुलन का एक तीसरा रास्ता हैकृ कर्म योग। गीता कहती है : कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु अर्थात सिर्फ कर्म पर ही तुम्हारा अधिकार है, कर्म के फल पर नहीं, भाव है की कर्म को फल के लिए मत करो और ना ही फल प्राप्त करने का उद्देश्य रखो ,अपना कर्म करो किंतु फल की इच्छा छोड़ो। विचारों का इस्तेमाल लक्ष्य बनाने में करो, पर उनके परिणाम से मन को न बाँधो। कर्म करो, पर निर्विचारिता की शांति को भी बनाए रखो। उदाहरणरू हम नौकरी के लिए मेहनत करते हैं, सोचते हैं, परिणाम की चिंता छोड़ देते हैं। मिले तो ठीक, न मिले तो भी ठीक। अब यहां अगर व्यक्ति यह सोचने लग जाए कि मैने तो मेहनत की लेकिन मुझे नौकरी नहीं मिली और अतीत या भविष्य में ही अपने मन का भटकाव रखे तो उसका मानसिक संतुलन भी डगमगा सकता है लेकिन कर्म योग दोनों के लाभ देता है—सफलता की संभावना भी और शांति, निर्विचारिता का आधार भी।

कर्म योग को हम निम्न उदाहरण समझेंगे की एक किसान बड़े अच्छे मनोभाव, मेहनत से खेती करता है वह किस प्रकार से आलस्य रहित होकर अपने खेत में निराई गुड़ाई करते हुए अपनी फसल को बढ़ाता है किस तरह वह अपनी कृषि की उपज बढ़ाने के लिए दिन—रात लगा रहता है लेकिन पर्यावरणीय अनुकूल स्थिति न होने के कारण उसकी फसल कमजोर रह जाती है उसकी मेहनत के अनुरूप फसल नहीं होती वह इस बात का पछतावा करता है कि मैंने तो बहुत मेहनत की मेरी फसल कमजोर क्यों हुई? यह सोच कर परेशान, अशांत होने लगता है। यह दर्शाता है की वह अपने कार्य में अत्यधिक संलिप्त रहा, भविष्य के विचारो में रहा। अब यहां पर प्रश्न उठता है कि विचार शक्ति तो उसके पास भी थी उसने भी तो सकारात्मक विचार करके प्रयास किया लेकिन उसे उसके अनुरूप फल नहीं मिला जिसके फलस्वरुप उसका मन अशांत हुआ क्योंकि यहां खेती तो कई प्राकृतिक तत्वों पर निर्भर करती है, अगर बारिश अधिक हो जाए तो भी समस्या और अगर बारिश ना हो तो भी समस्या ,अब इन सब पर किसान का कोई अंकुश नहीं है वह तो निर्भर है— प्रकृति पर।

किन्तु एक दूसरा किसान जिसने इतनी ही मेहनत अपने खेतो में की लेकिन उसके अनुरूप उसे उपज नहीं मिली तो वह ईश्वर का आदेश मानकर जो हुआ ठीक हुआ जो मिला है उससे वह संतुष्ट रहता है कर्म फल में संलिप्त नहीं रहता तो वही एक सच्चा कर्म योगी हुआ। एक अन्य उदाहरण से देखें तो मां अपने रोते हुए बच्चे को शांत करने में इतना खो जाती है, लीन हो जाती है कि उसे स्वयं का आभास भी नहीं रहता अर्थात उसका ध्यान केवल बच्चे को शांत करने में एकाग्र होता है भाव यह है की जिसको जो काम मिला हुआ है उस कार्य को निष्कामता, ईमानदारी पूर्वक ढंग से करते रहना फल की इच्छा ना करते हुए उस काम में रम जाना मतलब लीन हो जाना, काम करते करते अपनी शुद्ध बुद्ध भी खो देना अपने स्वरूप को भी भूल जाना केवल कर्म और कर्ता के संबंध भाव को ही याद रखना तथा इसकी उच्च स्थिती आने पर स्वयं का कर्ता भाव भी समाप्त हो जाता है इस प्रकार निष्काम भाव से किया गया कार्य सच्चा कर्म योग है इस प्रकार के कर्म योगी का कर्म यज्ञमय बन जाता है और कर्मों को ईश्वर इच्छा मानकर किया जाए तो कर्म से योग समाधि मिलती है।

समाधि की इस अवस्था में साधक को केवल अपने होने का भान रहता है। वह अपने शरीर या उसकी अवस्था के प्रति जागरूक नहीं होता बल्कि केवल स्वयं के होने के एहसास के प्रति जागरूक रहता है। इस प्रकार से कर्म में एकाग्रता मनोयोग और भक्ति तीनों मिल जाए तो समाधि, निर्विचारिता का आनंद आने लगता है सब कुछ परमात्मा को समर्पित कर के कर्म करते करते अकर्म को प्राप्त हो जाना— ब्रह्म को प्राप्त हो जाना— ब्राह्मी स्थिति में पहुँच जाना ही कर्म समाधि है। इससे मन सांसारिक बंधनों से मुक्त होता है यह बंधन्मुक्ति ब्रह्म से युक्त होकर ही मिलेगी ,श्रद्धा में—बिना किसी आसक्ति के प्रेम में डूबकर किये गये समर्पण भाव से संपादित कर्मों से ही मिलेगी।

यहाँ कर्म योग एक प्रकाश की तरह आता है। यह हमें सिखाता है कि शांति बाहर की परिस्थितियों में नहीं, बल्कि हमारे कर्म के प्रति नजरिए में छुपी है। जब हम फल

की चिंता छोड़ देते हैं, तो मन पर से बोझ हट जाता है। यह बोझ ही अशांति का कारण है– क्या होगा, क्या नहीं होगा, यह मिलेगा या नहीं। कर्म योग कहता है : 'जो करना है, करो। जो होगा, उसे स्वीकार करो।' यह स्वीकार्यता शांति का पहला कदम है।

कर्म योग इस शांति तक पहुँचने का व्यावहारिक मार्ग है। जब कर्म निष्काम होता है, तो वह चित्त की वृत्तियों को शांत करता है, जो शांति की ओर ले जाता है।

इस प्रकार कर्म योग और निर्विचारिता एक–दूसरे से गहरे जुड़े हैं। जब हम निष्काम कर्म करते हैं, तो विचारों का शोर कम होता है। मन न फल की आशा में भटकता है, न असफलता के डर में डूबता है। यह ठहराव निर्विचारिता की ओर ले जाता है। पतंजलि कहते हैं: 'तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्' (1.3) –जब विचार रुकते हैं, तो आत्मा अपने रूप में स्थिर होती है। कर्म योग इस यात्रा का प्रारंभ है।

चुनौतियां और समाधान :–

कर्म योग अपनाना चुनौतीपूर्ण है। हमारा मन फल की आशा से बंधा है। 'अगर मेहनत करूँगा, तो कुछ तो मिलना चाहिए'–यह सोच गहरी जड़ें जमाए है। लेकिन कर्म योग कहता है कि मेहनत करो, पर उसे समर्पित कर दो। इसके लिए अभ्यास चाहिए–ध्यान, आत्म–चिंतन, और शास्त्रों का अध्ययन। स्वामी विवेकानंद का कथन है– 'कर्म ही पूजा है।' इसे पूजा की तरह करने से शांति अपने आप प्राप्त होती है।

निष्कर्ष –

कर्म योग शांति, निर्विचारिता का आधार इसलिए है, क्यों की यह कर्म को बोझ, भार से मुक्त करता है और उसे साधना में बदल देता है। यह न तो कर्म से भागने की बात करता है, न ही इच्छाओं के पीछे दौड़ने की। यह बीच का मार्ग है–कर्म करो, पर मन को शांत रखो।

आज के युग में, जहाँ मानसिक स्वास्थ्य और कार्य–जीवन संतुलन चुनौती हैं, कर्म योग एक प्रभावी समाधान प्रस्तुत करता है। कर्म योग निष्काम कर्म के माध्यम से आत्म–साक्षात्कार और जीवन संतुलन की राह दिखाता है। यह शोध पत्र शास्त्रीय सिद्धांतों और समकालीन अध्ययनों के मिश्रण से कर्म योग के बहुआयामी स्वरूप को उजागर करता है। कर्म योग शांति और निर्विचारिता की कुंजी है। कर्म योग कहता है कि शांति के लिए कुछ पाने की जरूरत नहींकृवह अभी, इसी पल में है। यह अध्ययन यह निष्कर्ष निकालता है कि कर्म योग आधुनिक जीवन की अशांति और तनाव के बीच शांति और निर्विचारिता का मजबूत आधार बनता है।

संदर्भ :–

1.श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय 2–3, गीताप्रेस, गोरखपुर।

2.पतंजलि योग सूत्र (2010). स्वामी विवेकानंद अनुवाद, अद्वैत आश्रम, कोलकाता। सूत्र 1.2, 1.15, 1.43।

3.योग वशिष्ठ (1998). मुनि विश्वनाथ संन्यासी, गीता प्रेस, गोरखपुर। खंड 4, अध्याय 11।

4.राय, हिमांशु (2023). 'कर्म योग और मानसिक स्वास्थ्य', IIM इंदौर शोध पत्र, खंड 12, अंक 3, पृ. 45–60।

5.योग वशिष्ठ, मुनि विश्वनाथ संन्यासी, संस्कृत मूल।

6.Journal of Indian Management (2024), "Karma Yoga and Organizational Behavior."

आधुनिक हिन्दी कविता में राष्ट्रीय संदर्भों का विकासात्मक परिदृश्य

डॉ यदुवीर सिंह खिरवार
व्याख्याता (हिन्दी विभाग)
राजकीय महाविद्यालय, दूदू (राज.)

सारांश

आज राष्ट्र, राष्ट्रीयता, राष्ट्र भूमि, राष्ट्र संस्कृति, राष्ट्र धर्म और राष्ट्रीयता के प्रतीक किस मानव मन में आत्मगौरव का संचार नहीं करते ? वस्तुतः आधुनिक विश्व के विकास में जितना हाथ राष्ट्रवाद का रहा है उतना और किसी मानवीय प्रवृत्ति का नहीं रहा। इतना होने पर भी अब तक राष्ट्रीयता के भाव का यथोचित मूल्यांकन नहीं किया जा सका है। इसी लिए एक ओर तो ऐसे लोग मिल जायेंगे जो राष्ट्र प्रेम के नाम पर सब कुछ करने के लिए यहाँ तक कि अन्य राष्ट्रों को हानि पहुँचाने और वहाँ के लोगों की हत्या करने के लिए भी तत्पर हो जाते हैं। वस्तुतः राष्ट्रीयता राष्ट्र की ही भाव वाचक संज्ञा है, क्योंकि राष्ट्र के प्रति रखी जाने वाली भावना ही राष्ट्रीयता है। हमारे हिन्दी कोशों में भी राष्ट्रीयता का अर्थ किसी राष्ट्र का नागरिक होने का भाव, राष्ट्र प्रेम या देश भक्ति ही माना है। वस्तुतः भूमि और भूमि पर बसने वाले जन और जन संस्कृति इन तीनों के सम्मिलन से राष्ट्र का स्वरूप बनता है। इसलिए राष्ट्र सांस्कृतिक परम्पराओं, जीवन के समान नैतिक मूल्यों के प्रति गौरव के साथ एक भूमि पर बसकर उसके प्रति गौरव पूर्ण भाव रखने वाले समूह को कहते हैं। कहा जाता है कि राष्ट्रीयता आधुनिक संसार का धर्म है। मानव की आगाध नैसर्गिक प्रवृत्ति में इसकी जडें गहरी हैं। इतना ही नहीं यह एक आध्यात्मिक एवं मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त राष्ट्र का अहंभाव तथा गौरव गरिमा है। जो राष्ट्रीयता के विकसित भाव पर आधारित हैं राष्ट्रीयता, राष्ट्रीय राज्य एवं राष्ट्रीय राष्ट्र का अद्भुत मिश्रण राष्ट्रवाद है। इसी राष्ट्रीयता के विकासात्मक परिदृश्य को हिन्दी कवियों ने अपनी कविता में अभिव्यक्ति प्रदान की है जिससे भारतीय जनमानस में देश प्रेम और राष्ट्रीयता की भावना का संचार किया जा सके।

प्रमुख शब्द— सिद्धांत, अद्भुत मिश्रण, अद्भुत मिश्रण, यथोचित, ऋषि, राष्ट्रीयता, ब्रह्मवर्चस्व, अथर्ववेद तथा आनन्दगर्भ आदि।

भद्र मिच्छन्त ऋषयः स्तपोदीक्षामुपनिषेदुरग्रे/ ततो राष्ट्रं बलमाजश्च जातं तदस्मै देवाः उपसंनमुन्तु।। अर्थात् कहा जा सकता है कि मंगल कामी आनन्दगर्भ ऋषि कुल ने बहुत—बहुत पहले, रच—पच तपदीक्षा में ओज तेजमय राष्ट्र किया यह विकसित, तपदीक्षा से अर्जित ओज—तेज की छवि यह भूपर मनहर, सुरगण इसकी ऋद्धि सिद्धि रक्षा के हित नित रहें समर्पित। इससे निम्नलिखित बिन्दु स्पष्ट होते हैं— राष्ट्र एक ऐसी संस्था है जो ब्रह्मवर्चस्व के साथ भौतिक ऊर्जा से भी सम्पन्न है। राष्ट्र के प्रति निष्ठावान ऋषि थे जो पृथ्वी पर स्वर्ग के आदर्श को चरितार्थ करने के लिए कृत संकल्प रहे। राष्ट्र का स्वस्थ विकास तप और दीक्षा के ऋषि धर्म का अपेक्षी है। विद्या और शिक्षा की यह रीढ़ है। राष्ट्र की रक्षा के लिए अपेक्षा देव संस्कृति की है और असुर विकृति की नहीं। गीता में वाचित दैवी संपदा इसका समावर्तन है। प्रथम राष्ट्र देश होता है। एक देश 'देश' की संज्ञा से ऊपर उठकर राष्ट्र की संज्ञा को तभी प्राप्त करता है जबकि उसके निवासियों में कुछ सामान्य विशेषताओं के आधार पर घनिष्ठ संबंध स्थापित हो जाता है तथा वे सब अपने को देश की इकाई के रूप में देखते हैं। राष्ट्र शब्द को विभिन्न अर्थो में प्रयुक्त किया गया है। महा राष्ट्र शब्द कोश के अनुसार— देश, राज्य, मण्डल, प्रान्त, धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक आत्मीयता से पूर्ण जन समुदाय, अनेक लोग, राज कारोबार इत्यादि। अथर्ववेद में त्वा राष्ट्र भृत्याय में राष्ट्र शब्द समाज के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। राष्ट्र' शब्द अत्यधिक प्राचीन है। इसका उल्लेख भारतीय प्राचीन वाड.मय में पर्याप्त मात्रा में मिलता है। संस्कृत व्याकरण के अनुसार राष्ट्र शब्द कई प्रकार से व्युत्पन्न माना गया है। सिद्धान्त

कौमुदीकार ने सर्वधातुम्यः ष्ट्रनः के अनुसार राष्ट्र शब्द की निष्पत्ति दीप्त्यर्थक राज धातु से बतायी है। जिसमें औणदिक ष्ट्रन प्रत्यय जोड़ा गया है। इसी प्रकार शब्द कल्पद्रुम में राष्ट्र शब्द का अर्थ विषय है। मानक हिन्दी कोश में राष्ट्र शब्द का अर्थ राज्य, देश, किसी निश्चित और विशिष्ट क्षेत्र में रहने वाले लोग, जिनकी एक भाषा, एक से रीति–रिवाज तथा एक सी विचार धारा होती है तथा किसी एक शासन में रहने वाले सब लोगों का समूह किया गया है। नन्ददुलारे वाजपेयी के अनुसार– राष्ट्रीयता का अर्थ यह है कि प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्र का अंश है और उस राष्ट्र की सेवा के लिए इसको.............स्वीकार करने चाहिए। इस प्रकार नन्द दुलारे बाजपेयी द्वारा दी गयी राष्ट्रीयता की परिभाषा समीचीन प्रतीत होती है।

आधुनिक हिन्दी कविता राष्ट्रीय जागरण की दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी जाती है। वस्तुतः इस कालखण्ड में ही राष्ट्रीय कविता धारा की विकासात्मक यात्रा स्वाभाविक रूप से देखी जा सकती है। यों तो आदिकाल, भक्तिकाल और रीतिकाल में राष्ट्रीयता प्रत्यक्ष रूप से पनप नहीं सकी। वह तो मात्र जातीयता के रूप में ही सिमटकर रह गयी। फिर भी हिन्दी के महाकवि सूरदास, तुलसी दास, जायसी आदि इन कवियों में प्रछन्न रूप से राष्ट्रीयता की भावना को देखा जा सकता है। वस्तुतः राष्ट्रीय भावना का प्रत्यक्ष उदय सन् 1857 की क्रांति के आस–पास मिलता है। इस काल खण्ड की राष्ट्रीयता में जातीयता का या साम्प्रदायिकता एवं धर्मान्ध ाता की गंध नाम मात्र को नहीं थी। सन् 1857 में लिखा गया राष्ट्र गीत इस युग की राष्ट्रीय भावना का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण माना जा सकता है। है। अतः भारतेन्दु युग में राष्ट्रीय भावना, द्विवेदी युग में राष्ट्रीय भावना, छायावादी युग में राष्ट्रीय भावना, छायावादोत्तर युग में राष्ट्रीय भावना तथा स्वातंत्र्योत्तर युग आदि में राष्ट्रीय भावना का स्वरूप यथार्थ के धरातल पर परिपुष्ट होता दिखाई देता है।

भारतेन्दु युग आधुनिक काल का सर्वाधिक महत्वपूर्ण काल माना जाता है। राष्ट्रीय भावना की दृष्टि से भी इस युग की भाव भूमि अत्यधिक उर्वरा दीख पड़ती है। यद्यपि इस युग में राष्ट्रीयता का स्वरूप क्रान्तिकारी नहीं था फिर भी इस युग के साहित्य में राजनैतिक एवं सामाजिक जागरण के साथ–साथ राष्ट्रीयता के तत्व मिलते हैं। इतना ही नहीं भारतेन्दु युग की राष्ट्रीय भावना कई रूपों में देखी जा सकती है। जैसे– भारत की दशा, विदेशी शासकों की निन्दा, अतीत का गुणगान, वर्तमान के प्रति क्षोभ आदि। आधुनिक हिन्दी काव्य धारा का विकास उस समय हुआ जब समूचा राष्ट्र अंग्रेजी शासन के विरूद्ध स्वाधीनता के आंदोलन में संघर्षरत् था। अतः इस काल के काव्य में राष्ट्रीयता की व्यंजना होना स्वाभाविक था। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और उसके युग के कवियों ने भारत की दुर्दशा का वर्णन करते हुए भारतीय जनमानस को जागृत करने का प्रयत्न किया है। ब्रिटिश शासन की अफगान–विजय पर उन्होंने विजय–वल्लरी नामक कविता के माध्यम से अंग्रेजी शासन की आलोचना की है– स्ट्रैजी डिजरैली लिटन चितन नीति के जाल/फसि भारत जरजर भयो काबुल युद्ध अकाल।/सत्रु सत्रु लड़वाइ दूर रहिं लखिय तमासा/ब्ल देखिये जाहि ताहि मिलि दीजै आसा।। इस प्रकार देखा जा सकता है कि भारतेन्दु की राष्ट्रीयता का क्षेत्र बहुत व्यापक है। उन्होंने अपने राष्ट्र के सब धर्म, सम्प्रदायों, भाषाओं और सभी वर्ग विशेष के साथ प्रेम प्रदर्शित किया है। हम कौन थे, क्या हो गये और क्या होंगे अभी /आओ, विचारें बैठकर के ये समस्याएँ सभी।। द्विवेदी युग के अनेक कवियों ने राष्ट्रीयता की भावना व्यंजित की है। जिनमें मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्राकुमारी चौहान और सोहन लाल द्विवेदी आदि उल्लेखनीय हैं। मैथिलीशरण गुप्त की राष्ट्रीय भावना सर्वप्रथम उनकी रचना भारत भारती में प्रस्फुटित हुई। वस्तुतः इस रचना में व्यक्त राष्ट्रीय चेतना से ही गुप्त जी राष्ट्र कवि के रूप में विख्यात हुए। नीलाम्बर परिधान हरित पट पर सुन्दर है,/सूर्य चन्द्र युग मुकुट, मेखला रत्नाकर है। /नदियाँ प्रेम प्रवाह, फूल तारे मण्डल हैं,/बन्दी विविध विहंग, शेष –फन सिंहासन है। इसी प्रकार मैथिलीशरण गुप्त की राष्ट्रीयता का मार्मिक रूप भारत भारती में दृष्टिगोचर होता है। मैथिलीशरण गुप्त कृत भारत भारती की यह पक्तियाँ पाठकों के हृदय में राष्ट्रीयता का संचार कर देती है। द्विवेदी युग के राष्ट्र कवि माखनलाल चतुर्वेदी का राष्ट्रीयता का स्वरूप ब्रिटिश शासकों के प्रति विद्रोह रूप में प्रस्फुटित हुआ है। उन्होंने अपनी रचनाओं के द्वारा युवा वर्ग को राष्ट्र के लिए आत्म बलिदान होने की प्रेरणा दी है। उनकी कविता जवानी नामक शीर्षक में उनकी राष्ट्रीय भावनाओं को इस प्रकार देखा जा सकता है। यथा– द्वार बलि का खोल चल भूडोल कर दें,/एक हिमगिरि एक सिर का माल कर दें! मसल कर अपने इरादों सी उठाकर, /दो हथेली है कि पृथ्वी गोल कर दें।/ रक्त है ? या नसों में क्षुद्र पानी,/जॉच कर तू सीस दे देकर

जवानी ! इस प्रकार माखन लाल चतुर्वेदी की जवानी नामक कविता में शौर्य भावना की अभिव्यंजना हुई है। इतना ही नहीं इसका उद्देश्य राष्ट्रीय स्वतंत्रता होने के कारण इसे राष्ट्रीयता का ही आधार मान सकते हैं। भारतीय राष्ट्रीय स्वतंत्रता आन्दोलन में सुभद्रा कुमारी चौहान का भी योगदान महत्वपूर्ण माना जाता है। वस्तुतः खूब लड़ी मरदानी वह तो झांसी वाली रानी थी जैसी ओज पूर्ण कविताओं की रचना करने वाली प्रसिद्ध कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान आज किसी परिचय की मोहताज नहीं। इन्होंने अपने गीतों में युवकों को स्वतंत्रता के लिए मर मिटने का आह्वान किया है। एक बहिन के रूप में देश के भाईयों को चुनौती देती हुई कहते हैं– आते हो भाई ! पुनः पूछती हूॅ ....राखी की है आज तुमको।। इसी प्रकार राष्ट्रीय भावना को जागृत करने हेतु सुभद्राकुमारी चौहान पुरस्कार नामक कविता में लिखतीं हैं। दृष्टव्य–आज तुम्हारी लाली से मॉ के मस्तक पर हो लाली।...............स्वीकृत है, मॉ की बेदी पर पुरस्कार उन हाथों का। सोहन लाल द्विवेदी ने अपनी कविताओं में गांधीवादी दर्शन और राष्ट्रीयता का चित्रण जगह–जगह किया है। भैरवी नामक कविता में सोहन लाल द्विवेदी एक ओर तो भारत के अतीत गौरव का स्मरण दिलाते हैं तो दूसरी ओर भारतीय जन मानस को स्वतंत्रता हेतु जागृति का संदेश देते हैं। दृष्टव्य– भूल गये क्या रामराज्य वह........जागो मेरे सोने वाले।।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारतेन्दु युग को राष्ट्रीय भावना का बीजवपन काल कहा जाये तो द्विवेदी का काल अंकुरण काल माना जा सकता है। इस युग में भारतेन्दु युग में निर्मित काव्य की पृष्ठभूमि का ही विस्तार हुआ। इस काल के साहित्य का मुख्य उददेश्य भाषा और भावों का गांभीर्य प्रदान करना था। वस्तुतः यह राजनीतिक हलचल का काल था, क्रांतिकारी प्रवृत्तियों का यौवन काल था। समूचा राष्ट्र संकुचित विचारों का परित्याग करके वसुधैवकुटुम्बकम् की भावना तथा स्वतंत्रता की कामना कर रहा था। युवा वर्ग क्रांति की साधना में जुट गया था। अतः भारतेन्दु युग में अंकुरित राष्ट्रीयता की लता लहराने लगी थी। इस काल की राष्ट्रीय भावना को विभिन्न रूपों में देखा जा सकता है– अतीत का गुणगान, हिन्दु मुस्लिम एकता की प्रवृत्ति, सत्याग्रह, अहिंसा की भावना, वन्दना गीत, जागरण गीत, अभियान गीत, क्रांति एवं बलिदान के गीत और वर्तमान के प्रति क्षोभ आदि उल्लेखनीय हैं। इतना ही नहीं, इस काल के कवियों ने देश की दरिद्र अवस्था, भूख की पीड़ा, कृषकों और मजदूरों की दयनीय अवस्था की वकालत की तथा शोषितों के प्रति सहानुभूति प्रकट की गयी। इस काल में असहयोग आन्दोलन धर्म और जाति की एकता, छूआ–छूत का विरोध, सामाजिक रूढियों का विरोध तथा हिन्दी भाषा के महत्व आदि रूपों में भी राष्ट्रीयता का स्वर सुनायी पडता है। निश्चय ही यह युग राष्ट्रीयता का युग था। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि द्विवेदी युगीन कविता एवं राष्ट्रीय सांस्कृतिक कविता इस युग की राष्ट्रीयता साम्प्रदायिकता और प्रांतीयता से ऊपर उठकर अति व्यापक एवं उदार राष्ट्रीयता है। मातृ–भूमि के लिए सर्वस्व बलिदान, त्याग की भावना, पारस्परिक वैमस्यता को दूर करने की अमोध प्रेरणा देकर कवियों ने असंकीर्ण व उदार राष्ट्रीय भावना को विकसित किया तथा तत्कालीन राष्ट्रीय आन्दोलनों को बल प्रदान किया है।

हिन्दी साहित्य में सन् 1918 से लेकर सन्1936 तक का काल खण्ड छायावादी काल माना जाता है। वस्तुतः 1918 के बाद का समय राष्ट्रीय भावना के प्रसार का काल कहा जा सकता है। लगभग इसी समय छायावादी काव्य की रचना प्रारम्भ हुई थी। तत्कालीन राष्ट्रीय जागरण एवं आंदोलनों का प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष प्रभाव इस काव्य पर दिखायी देता है। इस काव्य धारा पर यथार्थ से पलायन एवं इस काल के कवियों पर सामाजिक एवं राष्ट्रीयता के उत्तरदायित्व का आरोप भी लगाया जाता है। इतना ही नहीं छायावाद पर अनेक आक्षेप लगाये गये हैं। जिनमें से प्रमुख इस प्रकार हैं– छायावाद न सौन्दर्य की खोज तो की लेकिन जीवन की समालोचना न की। जब देश जाग रहा था तब छायावादी कवि सो रहे थे। जब देश स्वतंत्रता के लिए लड़ रहा था तब ये विरह के गीत गा रहे थे। हिन्दी कवि छायावादी बन गये और धरती से दूर कल्पना के परलोक में बस गये। छायावादी हिस्टीरिया की भॉति हिन्दी कविता का एक मानसिक रोग है। इससे यह स्पष्ट है कि विद्रोह का कारण छायावादी कवि की स्वातंत्र्य भावना ही थी। यहॉ स्वतंत्रता का अर्थ केवल राजनीतिक स्वतंत्रता ही नहीं वरन् सभी प्रकार के बंधनों का विरोध किया है। वस्तुतः स्वच्छन्द प्रेम के प्रति छायावादी कविता आकर्षण बंधन मुक्त हदय का ही परिणाम है। इतना ही नहीं, छायावादी कवियों ने न केवल रूढियों का विरोध किया वरन् जीवन के प्रत्येक क्षेत्र की विषमता, पराधीनता और अन्याय के विरूद्ध संघर्ष

किया। छायावादी कविता की राष्ट्रीय भावना भारतेन्दु व द्विवेदी युग की राष्ट्रीय भावना से अधिक गंभीर और उर्वरा दीख पड़ती है। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन जिन रूढ़ियों को तोड़कर स्वराज्य की व्यापक कल्पना को लेकर आगे बढ़ रहा था उसका व्यापक घोष सर्वप्रथम छायावादी काव्य में सुनायी दिया। समाज में परिवर्तन की भावना इन कवियों की प्रमुख प्रेरणा थी। राष्ट्र छायावादी काव्य में राष्ट्रीय भावना एक ओर यदि राष्ट्रीय स्वातंत्रता संग्राम में बंधा था तो दूसरी ओर समग्र मानव की कल्याण भावना से। इस काल के प्रमुख कवियों में प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी वर्मा हैं। जिनके काव्य में राष्ट्रीय भावना के अनेक आधार हैं। जैसे– देश के मनोरम व उज्ज्वल अतीत का वर्णन, प्रशस्ति गान, आक्रोश, वर्तमान का चित्रण, नारी स्वातंत्र्यता का समर्थन, क्रांति के स्वरों में गूंज, बलिदान की भावना, मातृ भूमि का देवीकरण, नव निर्माण का स्वरूप, उद्बोधन गीत, भाषा संस्कृति से प्रेम आदि उल्लेखनीय हैं।छायावाद के प्रवर्तक कवि जयशंकर प्रसाद ने भारतीय गौरव गाथा तथा देश की आजादी का हेतु जनमानस को इस प्रकार संदेश दिया है–हिमाद्रि तुंग श्रंग से / प्रबुद्ध शुद्ध भारती / स्वयंप्रभा समुज्ज्वला /स्वतंत्रता पुकारती / अमर्त्य वीर पुत्र हो दृढ़ प्रतिज्ञ सोच लो।/प्रशस्त पुण्य पंथ है– बढ़े चलो, बढ़े चलो।। यहाॅ कवि कहता है कि चेतनाशील एवं पवित्र वाणी की देवी सरस्वती अपनी समुज्ज्वल प्रभा को बिखेरती हुई हमें स्वतंत्रता के लिए पुकारती है। वह भारती हमें कहती है कि तुम सब भारतीय अमरों की श्रेष्ठ संतान हो, तुम अपनी स्वतंत्रता की रक्षा के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ बनकर सोच लो, तुम्हारा भविष्य उज्ज्वल है, तुम्हारा भावी जीवन पथ प्रशंसा योग्य पुण्यों से भरा हुआ है। इस लिए तुम निरन्तर इस पथ पर बढ़े चलो। प्रगति के मार्ग पर निरन्तर आगे बढ़तें रहो तथा मातृ भूमि की उन्नति करते रहे। इस प्रकार यहाॅ आत्मगौरव एवं ओजस्विता के साथ देश भक्ति का भी व्यक्त हुआ है। अरावली –श्रृंग सा समुन्नत सिर किसका ?......... ..उमड़ रहा है ज्योति रेखा हीन, क्षुब्ध हो। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व की रचना होने के कारण जयशंकर प्रसाद ने भारतीय जन मानस को भारत गौरव गरिमा की रक्षा के लिए ललकारा है। इसी कारण यहाॅ सभी को मृत कहा है। इस प्रकार प्रसाद ने अपनी ओजस्वी वाणी में देश की स्वतंत्रता हेतु देशवासियों की सुप्त चेतना को जाग्रत करने का प्रयास किया है।

हिन्दी साहित्य में सूर्यकांत त्रिपाठी निराला निराला एक ऐसे कवि माने जाते हैं जो राष्ट्रीयता और जन जागरण के भावों को भी कविता में उसी प्रकार महत्व देते थे जिस प्रकार यथार्थ और प्रगतिशील भावों को। निराला ने विवेकानन्द से आध्यात्म, रामकृष्ण से अद्वैत, गांधी जी और तिलक से सत्य और विरोध का आधार प्राप्त कर अपनी राष्ट्रीयता का निर्माण किया था। जीवन को मोहभंग करने की वाली विकृतियों, अतीत की महिमामयी झांकियों और भावी भविष्य के निर्माण के स्वरों से अपनी राष्ट्रीयता को गति प्रदान की है। उनकी राष्ट्रीयता निम्न रूपों में देखी जा सकती है। निराला ने देश की तत्कालीन सामाजिक और आर्थिक दुर्दशा पर क्षोभ प्रकट किया। नारी की स्वातंत्रता को महत्व प्रदान करना। नारी की महानता को रेखांकित करना। अतीत के वैभव को वाणी प्रदान करना। भावी समाज के उज्ज्वल भविष्य की कल्पना करना। हिन्दी भाषा के प्रति निष्ठा व्यक्त करना। दलित और शोषितों के प्रति सहानुभूति प्रकट करना। राष्ट्र की सुप्त चेतना को जाग्रत करना। नव निर्माण हेतु युवाओं को प्रेरित करना। छायावादी काव्य धारा के प्रमुख कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला ने विदेशी शासन को समस्त विषमताओं का मूल माना। अतएव परतंत्रता के कलंक को धोकर स्वराज्य प्राप्ति की प्रेरणा दी है– पशु नहीं, वीर तुम, समर शूर क्रूर नहीं, /काल चक्र में हो दबे, आज तुम राजकुॅअर! इसी प्रकार कवि कालचक्र की गति को उलटने तथा पराधीनता की बेड़ियों का तोड़ने का संदेश देता है– पर क्या है, सब माया है, माया है।/मुक्त हो सदा ही तुम, बाधाविहीन बंद छंद ज्यों।। तत्कालीन समाज में फैली हुई अनेक विषमता व युगीन समस्याओं और राष्ट्रीय–सांस्कृतिक पराभव को निराला तुलसी दास खण्डकाव्य के माध्यम से इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं–भारत के नभ का प्रभापूर्य........... अस्तिमित आज रे– तमस्तूर्य दिड.मंडल। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलनों में देशवासियों को जाग्रत करने हेतु निराला ने अनेक राष्ट्रीय जागरण गीत लिखे। जो कि इस प्रकार हैं–जागो जागो आया प्रभात .... आती भारत की ज्योतिर्धन महिमाबल। मातृ वंदना शीर्षक कविता में कवि ने भारत माता के चरणों में सर्वस्व अर्पित कर देने की कामना प्रकट की है। माता की पराधीनता की स्थिति में उसे लौकिक अथवा पारलौकिक किसी भी प्रकार का सुख अभीष्ट नहीं है। स्वतंत्रता का सुख सबसे बड़ा सुख है। इस सन्दर्भ में गोस्वामी तुलसी का कथन निराला के विचार से मेल खाता है–पराधीन सपनेहु

सुख नाहीं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि जागो फिर एक बार जैसी कविताओं के माध्यम से जागरण का संदेश देकर निराला ने अपनी राष्ट्रीयता का अलख जगाया है।

छायावादोत्तर काव्यधारा अर्थात् प्रगतिवादी कवि, प्रयोगवादी कवि, प्रयोगशील कवि और नयी कविता के कवि ही छायावादोत्तर कवि के रूप में जाने जाते हैं। कुछ वाद के घेरे से निकल कर कवियों ने स्वतंत्र लेखन कार्य किया है। इनमें प्रमुख हैं– गोपाल सिंह, रामेश्वर अंचल, नरेन्द्र शर्मा और रामधारी सिंह दिनकर हैं। इन कवियों ने अपनी कविताओं के माध्यम से भारत की एकता और अखण्डता को अक्षुण्य रखने को प्रयास किया। वस्तुतः इन कवियों ने राष्ट्रीय एकता को अपनी काव्य साधना का आधार भूत तत्व माना है। इन कवियों के मध्य रामधारी सिंह दिनकर का राष्ट्रीय स्वर विलक्षण था। पराधीनता के युग में दिनकर ने देशवासियों के अंतःकरण में आजादी की ललक जगायी। वस्तुतः दिनकर ने अपनी काव्य यात्रा का प्रारम्भ स्वातंत्र्य संघर्ष को उत्तेजित करने से किया था। इस विकसित ज्ञान–विज्ञान के युग में दिनकर जैसे कवियों ने राष्ट्रीयता को सीमित अर्थो में ही स्वीकार किया और उसे पशु धर्म तक कह डाला। स्वाधीनता प्राप्ति तक उनकी कविता का प्रमुख स्वर राष्ट्र जागरण था। मगर स्वतंत्रता मिलन के बाद उनके काव्य की दिशा बदल गयी और वे भारतीय संस्कृति के उद्‌गाता बन गये। यथा– जय हो लोहित भानु, विश्व में यदि सर्वस्व अनल है/तो ले जाओ अभी यहॉ बाकी गंगा जल है !..........ज्ञान ग्रीव में पड़ी आणविक बम की मालाओं पर ! इस प्रकार कहा जा सकता है कि राष्ट्र कवि रामधारी सिंह दिनकर के सम्पूर्ण चिंतन की धुरी राष्ट्रीय–सांस्कृतिक एकता है। स्वतंत्रता के उपरान्त हिन्दी कवि जिस उज्ज्वल भविष्य की कामना कर रहा था। वह धीरं–धीरे धूमिल होने लगी। अमीरी और गरीबी की खाई और बढ़ने लगी। देश के कर्णधार नव सर्जक राजनीतिज्ञ अपने घरों को भरने लगे। देश में भ्रष्टाचार चरम पर पहुॅच गया। महॅगाई ने आम जन की कमर तोड़ दी। इस प्रकार अमीर और अधिक अमीर होता चला गया गरीब और अधिक गरीब। मध्यवर्ग त्रिसंकू बनकर बीच में लटक गया। इस काल खण्ड का कवि भला ऐसी विषम परिस्थितियों में कैसे शान्त रहता। देश में इन विषम परिस्थितियों के कारण राष्ट्रीयता का स्वरूप बदल गया। कविगणों का ओजस्वी स्वर मूलतः परिवर्तित हो गया। परिस्थितिजन्य कविजन भी भूखों और नंगों का पक्षपाती हो गया और असहायों की दयनीय दशा का चित्रण करने लगा। समाज में व्याप्त इस वातारण को, स्वार्थ और अन्याय को जीर्ण पत्थरों की तरह झरने का संदेश देने लगा। इस युग के कवियों में त्रिलोचन, नरेन्द्र शर्मा, शमशेर बहादुर, भगवती चरण वर्मा, केदार नाथ, दिनकर, अज्ञेय आदि प्रमुख हैं। स्वाधीनता के पश्चात् कवियों ने राष्ट्र के संकुचित रूप से उठकर अन्तर्राष्ट्रीयता के विषय में सोचना प्रारम्भ किया। राष्ट्र प्रेम, मानव प्रेम और विश्व प्रेम का आधार बन गया। गांधी जी ने विश्व वंधुत्व का अलख जगाया। राष्ट्रवाद विश्व मानवता के रूप में पर्यवसित हो गया। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आधुनिक काल के पूर्व हिन्दी काव्य में अनेक धाराएॅ विकसित हुईं। जिनमें राष्ट्रीय भावना का वह स्वर यथार्थ के धरातल पर सुनाई नहीं पड़ता, जो कि आधुनिक काल की कविताओं में सुनायी देता है। अतः राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत आधुनिक काल की कविताएॅ मात्र एक युग तक ही नहीं बल्कि युगों–युगों तक भारतीय जनमानस में राष्ट्रीयता की भावना को परिपुष्ट करने में अपनी महती भूमिका का निर्वहन करेंगी, क्योंकि जिस प्रकार वर्तमान में राष्ट्र विघातक शक्तियॉ राष्ट्रीयता को क्षति पहुॅचाने का प्रयास कर रहीं हैं ऐसे नाजुक समय में राष्ट्रीयता का अलख जगाने वाली आधुनिक काल की हिन्दी कविता का महत्व और भी बढ़ जाता है।

संदर्भ –

1. अथर्ववेद 19/37/39
2. सिद्धान्त कौमुदी , उणादि प्रकरण 4/118
3. शब्द कल्पद्रुम चतुर्थ खण्ड पृ 158
4. मानक हिन्दी कोश पृ 505
5. हिन्दी की सैद्धान्तिक समीक्षा –भूमिका : रामाधार शर्मा
6. चिन्ता मणि भाग दो – आचार्य शुक्ल पृ 69
7. सुमित्रानन्दन पंत – मानस विशम्भर पृ 42
8. तार सप्तक : प्रभाकर माचवे पृ 184
9. तार सप्तक : प्रभाकर माचवे पृ 184
10. छायावादी काव्य में राष्ट्रीय–सांस्कृतिक चेतना पृ 58
11. दिनकर और उनकी काव्य कला : पन्ना लाल जैन पृ 29
12. दिनकर और उनकी काव्य कला : पन्ना लाल जैन पृ 29

बी. एड. पाठ्यक्रम में राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रभाव
Impact of National Education Policy on B.Ed. Curriculum.

Dr. Chanchal Lata
Assistant Professor
Sanjay Teacher's Training college
Jaipur

पाठ्यक्रम का अर्थ –

पाठ्यक्रम शिक्षा का एक महत्वपूर्ण भाग है। यह शिक्षा की दिशा तय करता है। पाठ्यक्रम अध्यापक व विद्यार्थी दोनों का ही मार्गदर्शन करता है। पाठ्यक्रम विद्यार्थियों को ज्ञान कौशल नैतिक मूल्यों को समझने में मदद करता है, इसका अर्थ है कि शिक्षण प्रक्रिया में पाठ्यक्रम एक महत्वपूर्ण तत्व है चाहे किसी भी रूप में शिक्षा दी जाए इसके लिए पाठ्यक्रम अत्यंत ही आवश्यक है।

पाठ्यक्रम शब्द अंग्रेजी भाषा के 'करिकुलम' शब्द का हिंदी रूपांतरण है 'करिकुलम' शब्द की उत्पत्ति लेटिन भाषा के 'क्यूरेरे' जिसका अर्थ है 'दौड़ का मैदान'। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि पाठ्यक्रम वह है जिसका अनुसरण करके विद्यार्थी शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करता है।

B.Ed. पाठ्यक्रम का अर्थ :–

B.Ed. पाठ्यक्रम शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है क्योंकि यह भावी अध्यापकों को शिक्षा के सिद्धांतों शिक्षक विधियों व शिक्षण तकनीकी के बारे में ज्ञान प्रदान करता है जिसके कारण की भाभी अध्यापक अच्छे तरीके से शिक्षण कर सके।

B.Ed. पाठ्यक्रम की विशेषताएं :–

1 अध्यापन के सिद्धांतों का ज्ञान :–

B.Ed. पाठ्यक्रम शिक्षा के दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, और ऐतिहासिक पहलुओं को समझाता है जिससे भावी अध्यापकों को शिक्षा के उद्देश्यों में विधियों को अच्छी प्रकार से समझने में मदद मिलती है।

2 अध्यापन सामग्री का विकास :–

B.Ed. पाठ्यक्रम भाभी अध्यापकों को शिक्षा सामग्री के विकास के बारे में भी सीखना है जिससे वे अपने छात्रों के लिए अच्छी शिक्षण सामग्री का निर्माण कर सके।

3 शैक्षिक तकनीकी का उपयोग :–

B.Ed. पाठ्यक्रम भावी अध्यापकों को शैक्षिक तकनीकी का उपयोग करने के बारे में ज्ञान प्रदान करता है जिससे कि शिक्षण प्रक्रिया को वे और अधिक प्रभावी बना सके ।

4 मूल्यांकन प्रक्रिया –

B.Ed. पाठ्यक्रम भावी अध्यापकों को छात्रों के प्रदर्शन का मूल्यांकन करना सिखाता है जिससे की भावी शिक्षक विद्यार्थियों की प्रगति के बारे में जान सके व उन्हें और ज्यादा बेहतर बनाने में मदद कर सके ।

5 पाठ्यक्रम विकास में योगदान :–

B.Ed. पाठ्यक्रम भावी अध्यापकों को पाठ्यक्रम विकास में योगदान देने के लिए प्रोत्साहित करता है, जिस कारण वह शिक्षा के क्षेत्र में और ज्यादा सुधार कर सके।

B.Ed. पाठ्यक्रम में राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रभावः–

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 शिक्षा के क्षेत्र में सुधार लाने के लिए भारत सरकार द्वारा उठाया गया एक महत्वपूर्ण कदम है। इस नीति का उद्देश्य शिक्षा को अधिक समावेशी, और गुणवत्तापूर्ण बनाना है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रभाव B.Ed. पाठ्यक्रम में बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह पाठ्यक्रम अध्यापकों को तैयार करने के लिए ही बनाया गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के मुख्य लक्ष्य :–

1 गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना :– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का मुख्य लक्ष्य है कि सभी पृष्ठभूमि वाले विद्यार्थियों को उच्च गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना।

2 समावेशी शिक्षा :– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का मुख्य लक्ष्य है कि सभी पृष्ठभूमि वाले छात्रों को समानता के अवसर प्रदान करना ।

3 अध्यापकों की क्षमता निर्माण को बढ़ाना :– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का एक मुख्य लक्ष्य है कि अध्यापकों की क्षमता निर्माण को बढ़ावा दिया जाए ताकि वह विद्यार्थियों को अच्छी तरह से शिक्षण प्रक्रिया के बारे में समझा सके।

4 शिक्षा में तकनीकी को बढ़ावा देना:– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का एक और महत्वपूर्ण लक्ष्य है कि शिक्षण प्रक्रिया में तकनीकी को बढ़ावा देना ताकि आगे आने वाले समय में छात्र अध्यापक शिक्षण प्रक्रिया में तकनीकियों का प्रयोग करके विद्यार्थियों को और भी अच्छी तरह से समझा सके।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के ठ.म्क पाठ्यक्रम पर प्रमुख प्रभाव :–

1. 4 वर्षीय एकीकृत बीएड पाठ्यक्रम (ITEP):–

पुरानी जो परंपरा चली आ रही है 2 वर्षीय बीएड वाली उसको अब धीरे–धीरे हटाया जा रहा है।

- अब 4 वर्षीय एकीकृत बीएड पाठ्यक्रम लागू किया गया है ।
- 12वीं कक्षा के बाद सीधे इस पाठ्यक्रम में प्रवेश लिया जा सकता है ।
- यह कोर्स एनसीटीई द्वारा डिजायन किया गया है और 2023 – 24 से लागू किया गया है।

2. बहुविषयक और लचीला पाठयक्रम :–

- B.Ed. पाठ्यक्रम में बहुत सारे विषयों को जोड़ा गया है जैसे की कला, विज्ञान ,सामाजिक विज्ञान और व्यावसायिक शिक्षा।
- छात्र अध्यापकों को इसमें विषय चयन की स्वतंत्रता दी गई है जिससे की छात्र अध्यापक अपनी रुचि के अनुसार विषय का चयन कर सके।

3. व्यावहारिक प्रशिक्षण और तकनीकी का समावेश :–

- B.Ed. पाठ्यक्रम में अब इंटर्नशिप को पहले से ज्यादा महत्व दिया गया है।
- B.Ed. पाठ्यक्रम में अब अध्यापकों को ई लर्निंग टूल्स, ऑनलाइन संसाधन, और स्मार्ट क्लासरूम तकनीकों से परिचित करवाया जाएगा ताकि शिक्षा में डिजिटल लर्निंग को बढ़ावा दिया जा सके।
- अध्यापकों को अब आई इ, आंकड़ा विज्ञान और तकनीकी शिक्षा संबंधी प्रशिक्षण दिया जाएगा।

4 शिक्षक भर्ती और मूल्यांकन में बदलाव :–

- नई शिक्षा नीति के अनुसार अब शिक्षक भर्ती के लिए बीएड के बाद में एक राष्ट्रीय शिक्षक पात्रता परीक्षा को मजबूत किया जाएगा।
- शिक्षकों की भर्ती अब अधिक पारदर्शिता के साथ की जाएगी और बाद में पदोन्नति कौशल व योग्यता के आधार पर होगी।

5 मातृभाषा में शिक्षण और प्रशिक्षण :–

- नई शिक्षा नीति में प्रारंभिक स्तर तक बच्चों को उनकी मातृभाषा में शिक्षा देने पर जोर दिया गया है, इसलिए बीएड पाठ्यक्रम में भी भाषाई विविधता और द्विभाषी शिक्षण कौशल को भी जोड़ा गया है।

6 शोध और नवीनता या सर्जनात्मकता को प्रोत्साहन:–

- B.Ed. कार्यक्रम में अब से शिक्षकों को अध्यापकों को शोध कार्यों और सृजनात्मकता या नवीनता से भी जोड़ा जाएगा।
- अध्यापकों को अब आलोचनात्मक चिंतन और समस्या समाधान आधारित शिक्षण का भी प्रशिक्षण मिलेगा।

निष्कर्ष :–

पाठ्यक्रम को अधिक व्यावहारिक, व्यापक और तकनीकी रूप से सक्षम बनाने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति एक बहुत बड़ा कदम है। इस नीति के तहत अध्यापकों को केवल शिक्षा देने के लिए नहीं बल्कि छात्रों के भविष्य के लिए मार्गदर्शक व नवाचारों का प्रयोग करने वाला अध्यापक बनने के लिए तैयार किया जाएगा। इससे हमारे देश में शिक्षा प्रणाली में उच्च गुणवत्ता और प्रभावशीलता बढ़ेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

भारत सरकार, मानव संसाधन विकास मंत्रालय (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (National Education Policy 2020). नई दिल्ली : भारत सरकार।

राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद (NCTE) (2021). शिक्षक शिक्षा में सुधार हेतु दिशा–निर्देश (Guidelines for Teacher Education Reform). नई दिल्ली: NCTE।

यूनिवर्सिटी ग्रांट्स कमीशन (UGC) (2021). शिक्षक शिक्षा में नवाचार और सुधार (Innovations in Teacher Education). नई दिल्ली : यूजीसी।

शर्मा, आर. सी. (2022). शिक्षा नीति 2020 और भारतीय शिक्षक शिक्षा प्रणाली. बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी।

गुप्ता, एस. पी. (2023). बी.एड. पाठ्यक्रम में नवीन परिवर्तन और उनका प्रभाव. दिल्ली विश्वविद्यालय प्रकाशन।

विश्व बैंक (2021). भारत में शिक्षक शिक्षा का भविष्य : नीति विश्लेषण और सुझाव. वाशिंगटन डीसी : वर्ल्ड बैंक ग्रुप।

NCERT (2021). शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में सुधार हेतु अनुशंसाएँ. नई दिल्ली: NCERT।

कुमार, ए. (2022). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020: शिक्षकों के लिए अवसर और चुनौतियाँ. भारतीय शिक्षा शोध पत्रिका।

पांडेय, वी. (2023). शिक्षा नीति 2020 और शिक्षक शिक्षा का नया युग. अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय

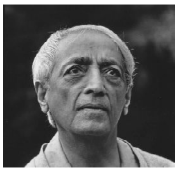

जिद्दू कृष्णमूर्ति के चिंतन में निहित शिक्षा के व्यावहारिक पक्षों की वर्तमान में प्रासंगिकता

Dr. Pradeep Paneri
Principal, The Ankur TT College
Nathdwara Rajasthan
Mob. 097841 44410
Email
PradeepPaneri01@gmail.com

LALIT KUMAR SAIN
RESEARCH SCHOLAR
(EDUCATION)
MOHANLAL SUKHADIA
UNIVERSITY- UDAIPUR,
Mob. 9413193178
Email : sainlalit5273@gmail.com

सारांश

जिद्दू कृष्णमूर्ति की सही शिक्षा का उद्देश्य बच्चों में मुक्त चिंतन का विकास करना है, ताकि छात्र स्वयं सत्य की खोज कर सके तथा चिंतन के माध्यम से स्वस्थ जीवन को समझ सके। छात्र के अंतर्मन के संपूर्ण परिवर्तन एवं उन्नत नागरिक बनने हेतु सत्य तथा शाश्वत जीवन की गहरी दिशा को जागृत करना आवश्यक है।

प्रस्तावना

भारत विश्व के सभी प्रमुख धर्मों की शरण स्थली रहा है। यहां सभी धर्मों ने पोषण पाया है। इस पावन धरा पर समय–समय पर महान विभूतियों का आविर्भाव हुआ है जिनके कारण संपूर्ण मानवता नई दिशा, दृष्टि और जीवन संदेशों की उपलब्धियों से उर्ध्वगामी हुई है।

भारतीय संतों और विचारकों ने मानव विचार और भावना की गहराइयों की अत्यंत विस्तार से खोज की और उनका वर्गीकरण किया। भारतीय धार्मिक दर्शन की सर्वश्रेष्ठ धारा में आंतरिक आध्यात्मिकता, आत्मनिर्भरता और स्वायत्तता की भावना प्रमुख रही है। यही तत्व जिद्दू कृष्णमूर्ति की शैक्षिक दृष्टि में भी परिलक्षित होते हैं। कृष्णमूर्ति की शिक्षा दृष्टि भारतीय दर्शन की मुक्तिवादी सोच से प्रभावित थी।

मुख्य शब्दावली : जिद्दू कृष्णमूर्ति, थियोसॉफिकल सोसायटी, विश्व शिक्षक, सही शिक्षा।

जिद्दू कृष्णमूर्ति का जीवन परिचय :

जिद्दू कृष्णमूर्ति का जन्म बेंगलुरु और चेन्नई मार्ग पर आंध्र प्रदेश के चित्तूर जिले के एक पहाड़ी कस्बे मदनपल्ली में 11 मई 1895 की मध्य रात्रि में पिता नारायण्या के घर के पूजा स्थल में हुआ था। माता संजीवम्मा के कृष्ण भक्त होने तथा कुल 10 संतानों में आठवीं संतान होने के कारण बालक का नाम कृष्णमूर्ति रखा गया। जिद्दू इस तेलुगुभाषी ब्राह्मण परिवार का कुल नाम था।

कृष्णमूर्ति के 52 वर्षीय विधुर पिता नारायण्या मजिस्ट्रेट के पद से सेवानिवृत होकर थियोसोफिकल सोसायटी के अंतर्राष्ट्रीय मुख्यालय अड्यार (चेन्नई) के एसोटेरिक सेक्शन में सहायक सचिव के रूप में 1909 के प्रारंभ से सेवाएं देने लगे। कृष्णमूर्ति अड्यार से 6 मील की दूरी पर स्थित मैलापुर के पैनाथुर हाई स्कूल पैदल पढ़ने जाते थे। बीमार स्वास्थ्य और स्कूल की संकुचित चारदिवारी में छड़ी के कठोर अनुशासन के कारण कृष्णमूर्ति का अकादमिक शिक्षा से मोह भंग हो गया।

विश्व शिक्षक के रूप में चयन :

रूस की मैडम हेलेना पेत्रोवना ब्लावट्स्की और अमेरिका के कर्नल हेनरी स्टील ओलकॉट ने 8 सितम्बर 1875 को धर्म और विज्ञान के बीच सामंजस्य स्थापित करने वाली एक महत्वपूर्ण वैश्विक संस्था थियोसॉफिकल सोसायटी की स्थापना की, जिसका मुख्यालय अमेरिका के न्यूयॉर्क में खोला गया। भारत के धर्म, दर्शन और आध्यात्मिक विरासत से प्रभावित होकर थियोसॉफी के नेताओं ने 19 दिसंबर 1882 को सोसायटी का मुख्यालय तमिलनाडु की राजधानी

चेन्नई के समीप स्थित अड्यार में स्थानांतरित कर दिया।

मानवता के उद्धार और मार्गदर्शन के लिए समय–समय पर मसीहा मानव के रूप में अवतरित होता हैय ऐसा विभिन्न धर्मग्रंथो में उल्लेख है। थियोसॉफी के प्रारंभिक नेताओं का यह विश्वास था कि भगवान मैत्रेय किसी रिक्त मन वाले शरीर को माध्यम बनाकर धरती पर पुनरावतरण होंगे। थियोसोफिकल सोसायटी के द्वितीय पीढ़ी के नेता एनी बेसेंट और चार्ल्स वैबस्टर लेडबीटर ने 1909 में रिक्त मन वाले बालक जिद्दू कृष्णमूर्ति को विश्व शिक्षक के वाहन के रूप में चुन लिया। थियोसोफिकल सोसायटी की अंतरराष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. एनी बेसेंट 1911 में कृष्णमूर्ति को अपने साथ इंग्लैंड ले गई और वहां पश्चिम सभ्यता के अनुसार उसका पालन–पोषण किया गया। कृष्णमूर्ति को ग्रेट व्हाइट ब्रदरहुड में शामिल कर लिया गया। कृष्णमूर्ति की अध्यक्षता में यहां ऑर्डर ऑफ द स्टार इन द ईस्ट की स्थापना की गई।

जिद्दू कृष्णमूर्ति को सत्य का साक्षात्कार :

17 अगस्त 1922 को कृष्णमूर्ति कैलिफोर्निया के ओहाय घाटी (बसेरा) में तीन दिवसीय गहन अलौकिक अनुभव (प्रोसेस) से गुजरे, जहां उन्हें एक छोटे गोलमिर्च (पेपर) वृक्ष के नीचे सत्य का साक्षात्कार हुआ।

3 अगस्त 1929 को ओमेन (हॉलैंड) में हुए ऑर्डर ऑफ द स्टार के कैंप में उन्होंने अपने ही इतिहास के एक युग का अवसान कर दिया। उन्होंने वक्तव्य दिया : सत्य एक पथहीन भूमि है, और आप किसी भी मार्ग द्वारा, किसी भी धर्म या संप्रदाय के जरिए उस तक नहीं पहुंच सकते। विश्वास एक नितांत व्यक्तिगत मामला है, इसे संगठित करने के प्रयासों से यह जड़ हो जाता है। यह एक मत, संप्रदाय या धर्म में तब्दील हो जाता है, जिसे दूसरों पर थोपा जा सके। मैं अनुयायी नहीं चाहता हूं। जैसे ही आप किसी का अनुकरण करने लगते हैं सत्य से आपका नाता टूट जाता है। मैं स्वयं को केवल एक अत्यावश्यक चीज से जोड़ रहा हूं, और वह है मनुष्य को समस्त पिंजरों से और भय से पूर्णतया, बिना किसी शर्त के मुक्त करना, ताकि वह अलग–अलग धर्मों, संप्रदायों, सिद्धांतों और दर्शनशास्त्र की खोज में न लगा रहे। सारे सुख–भोग और हर बलिदान से यह कहीं अधिक बड़ी बात है।

उन्होंने ऑर्डर ऑफ द स्टार को भंग कर दिया।

जिद्दू कृष्णमूर्ति का व्यक्तित्व :

– जिद्दू कृष्णमूर्ति 20वीं सदी के पांच महान संतों में से एक हैं TIME मैगजीन
– जिद्दू कृष्णमूर्ति युग के महानतम विचारकों में से एक है दलाई लामा
– कृष्णमूर्ति को सुनना बुद्ध के प्रवचनों को सुनने जैसा था–इतनी शक्ति, इतनी अंतर्निहित प्रामाणिकता ओल्डस हक्सले
– जिद्दू कृष्णमूर्ति इस सदी के सबसे मेधावी व्यक्ति थे, उन्होंने मनुष्य की आध्यात्मिकता के हर आयाम में जितनी गहराई से झांककर देखा जा सकता था, देखा है, वैसी तीक्ष्ण प्रज्ञा अब सदियों तक फिर देखने को नहीं मिलेगी रजनीश ओशो।

स्वतंत्र चिंतकः

कृष्णमूर्ति को डॉ. एनी बेसेंट और चार्ल्स वैबस्टर लेडबीटर जैसे अत्यधिक सत्ताशक्ति संपन्न थियोसॉफिस्टों का सानिध्य और संरक्षण मिला। उनका बेहतरीन पालन–पोषण किया गया था, लेकिन जैविक रूप से विचित्र इस बालक ने सभी परंपरागत धर्म, दर्शन, पद्धति, गुरुसत्ता तथा सिद्धांतों को त्याग दिया। विश्व शिक्षक के अपने ही इतिहास के एक स्वर्णिम युग का उन्होंने अवसान कर दिया।

बंधन रहित आध्यात्मिकताः

जिद्दू कृष्णमूर्ति की सत्य दृष्टि ने थियोसोफिकल सोसायटी के आदर्श और उद्देश्यों, विश्व के सभी संगठित धर्मों के ढांचों और आध्यात्मिक अधिसत्ता को नकार दिया। उनका सत्य दर्शन परम निरपेक्ष था।

करुणा और मानवीय संवेदनशीलता :

जिद्दू कृष्णमूर्ति अपने वातावरण के विचार और अनुभूति की प्रत्येक गतिविधि के प्रति जागरूकता वाले व्यक्ति को एक समरस इकाई के रूप में अर्थात संवेदनशील मानव मानते थे। करुणा और संवेदनशीलता उनकी शिक्षाओं के केंद्रीय तत्व थे। प्रेम को वह वास्तविक और एकमात्र क्रांति स्वीकार करते थे।

मानवीय मन और भय की गहरी समझ :

जिद्दू कृष्णमूर्ति मानवीय समाज की यथा–स्थितिवादी प्रवृत्ति पर प्रश्न उठते हैं। मानव पिछले हजारों वर्षों से जैसा रहा है, वैसा ही वर्तमान में क्यों बना हुआ है? अनादि काल

से द्वंद्व और भय के कारण किसी उद्धारक की खोज में क्यों लगा हुआ है? मानव अपनी बुद्धि और सामर्थ्य से महान प्रयोग और आविष्कार के रूप में भौतिक प्रगति तो कर रहा है, लेकिन मनोवैज्ञानिक तल पर आचरण के क्षेत्र, चेतना के जगत की उपेक्षा कर रहा है। मानव का स्व–केंद्रित मन दुनिया में विध्वंस का कारण है। हमारी चेतना केवल हम तक सीमित नहीं हैय वरन संपूर्ण मानव जाति की चेतना है। कृष्णमूर्ति कहते हैं आप ही विश्व है और विश्व आप ही है। मानव जब तक स्वयं में मौलिक और आंतरिक रूप से बदलाव नहीं लाता तब तक भविष्य भयावह रहेगा।

गुरु परंपरा के विरोधीः

जिद्दू कृष्णमूर्ति ने अपने जीवन काल में न तो किसी गुरु, पद्धति, पुस्तक आदि का अनुसरण किया और न ही स्वयं किसी का गुरु, मार्गदर्शक या उद्धारक बनना स्वीकार किया। वह जीवन भर मानव समाज को सत्य के लिए अभिप्रेरित करते रहे। वे कहते थे मैं तो केवल दर्पण हूं जिसमें आप स्वयं को स्पष्टता से देख लेने के बाद इस दर्पण को हटा सकते हैं। दर्पण का कोई मूल्य नहीं है, मूल्य है आपके स्वयं के प्रयासों का।

जिद्दू कृष्णमूर्ति के अनुसार सही शिक्षा :

कृष्णमूर्ति के अनुसार सम्यक शिक्षा हो तो सामाजिक अथवा अन्य सुधारो की आवश्यकता ही नहीं रह जाएगी, क्योंकि अपनी तुलनात्मक प्रवृत्तियों के साथ समस्त ईर्ष्या ही समाप्त हो जाएगी।

शिक्षा का वास्तविक अर्थ व्यक्ति को परिपक्व तथा मुक्त होने में, प्रेम तथा अच्छाई में अधिक पुष्पित होने में सहायता करना है। कृष्णमूर्ति शिक्षा में स्वतंत्रत चिंतन को केंद्रीय तत्व के रूप में स्वीकार करते हैं। हमारी वर्तमान शिक्षा व्यवस्था अनुकरण, सफलता की उपासना, प्रतिस्पर्धा, तुलना और भय पर केंद्रित है। इस तरह की शिक्षा और जीवन की दशा हमारे मन और ह्रदय को स्फूर्तिहीन बना देती है और व्यक्ति सत्ता, प्रामाणिकता और परंपरा के झूठे सम्मान में व्यस्त हो जाता है। इस प्रकार हमारा मन व्यक्तिगत और व्यष्टिगत भेद को स्पष्ट रूप से समझने में सक्षम नहीं रहता, ऐसा मन भ्रांति में जीता है।

केवल कुछ सूचना और तथ्यों का स्मरण कर लेने में व्यस्त रहने वाला मन स्वयं को उसकी समग्रता अर्थात श्जो हैश को पूर्णता में नहीं देख पाता। शिक्षा का कार्य है जीवन की समग्रता को समझने में विद्यार्थी की सहायता करना। व्यक्ति के परिपक्वन तथा मुक्त होने, प्रेम तथा अच्छाई में पनपने में सहायता करना है। जब तक शिक्षा पूर्वनिर्मित सिद्धांतों पर आधारित है तब तक यह कार्यकुशल व्यक्ति का निर्माण भले ही कर ले, परंतु सृजनशील मनुष्य को पैदा नहीं कर सकती।

शिक्षा का प्रयोजन :

मौलिकतायुक्त सरलता धार्मिक जीवन का उच्चतम स्वरूप है। मुक्त क्रिया ही पूर्ण क्रिया है। यह क्रिया संवेदन, इच्छा, भावना और विचारों के रूप में प्रकट होती है। कृष्णमूर्ति इसे ही जीवन कहते हैं जहां निश्चित प्रयोजन नहीं है। जीवन के प्रयोजन को वही व्यक्ति पहचान पाता है जो प्रत्येक प्रकार की अनुभूति से मुक्त होगा। ऐसा व्यक्ति अपने जीवन के सार का निर्माण कर पाएगा। यही शिक्षा और जीवन का प्रयोजन है। स्वयं के विशिष्ट व्यक्तित्व की अद्वितीयता का विकास करना ही शिक्षा का प्रयोजन है।

शिक्षा के उद्देश्यः

विभिन्न शिक्षा मनीषियों ने देश, काल और परिस्थिति के अनुरूप शिक्षा के उद्देश्य स्थापित किए। जिद्दू कृष्णमूर्ति ने शिक्षा के प्रगतिशील उद्देश्यों पर प्रकाश डाला। वे शिक्षा के माध्यम से मानवीय जीवन में परिवर्तन तथा संपूर्ण समाज में क्रांतिकारी बदलाव लाना चाहते थे। शिक्षा का लक्ष्य विद्यार्थी के डिग्री प्राप्त कर नौकरी या व्यवसाय में लग जाना ही नहीं वरन भय मुक्त, मानव की गरिमा तथा सम्मान की अक्षुण्णता, समग्र और संतुलित मानव का विकास करना है। तुलना तथा सभी प्रकार के पूर्वाग्रहों से विद्यार्थी को दूर रखने और उनके स्वयं के विचारों की स्वतंत्रता और पोषण में सहायक हो। संकुचित विचारों के स्थान पर वैश्विक दृ ष्टिकोण, वैज्ञानिक तर्क–बुद्धि तथा संवेदनशीलता का विकास करना। कृष्णमूर्ति के अनुसार– शिक्षा का उद्देश्य ऐसे मनुष्य का निर्माण करना है जो समग्र रूप से विकसित और बुद्धिमान हो।

शिक्षण विधि :

शिक्षण विधि का सीधा संबंध शिक्षक से होता है, जिसका मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाना है। कृष्णमूर्ति ने व्यक्तिगत लाभ और सतही

मूल्यों पर केंद्रित शिक्षण की कठोर व परंपरागत विधियों के स्थान पर आत्म अन्वेषण और आंतरिक परिवर्तन को प्रोत्साहित करने वाली विधियों का समर्थन किया। शिक्षक सूचना और तथ्यों की रटन्त विधि के स्थान पर लचीली, प्रगतिशील और एकीकृत शिक्षण विधियों को महत्व दिया, जो विद्यार्थियों को स्वतंत्र चिंतन और प्रश्न पूछने का पूरा अधिकार दे। ऐसे वातावरण में छात्र का भावनात्मक, मनोवैज्ञानिक और बौद्धिक तीनों पक्षों का सामंजस्यपूर्ण विकास हो सके। शिक्षक प्रत्यक्ष अनुभव के माध्यम से सीखने को सुगम बनाने के प्रयास करें। इस प्रकार की शिक्षण विधियां सीखने की यंत्रवत व्यवस्था को सहज, सृजनात्मक और जीवंत बना सकती है। स्व–क्रिया और स्व–प्रयासों से सिखा गया ज्ञान रुचिमय, क्रियामय, स्थाई तथा व्यावहारिक और बालक के सर्वांगीण विकास हेतु आवश्यक है। कृष्णमूर्ति शिक्षण की अवलोकन विधि, सह–संबंध और एकीकृत विधि, आदान–प्रदान विधि, संवाद विधि आदि को महत्व देते हैं।

पाठ्यक्रम :

जिद्दू कृष्णमूर्ति पाठ्यक्रम के माध्यम से प्रज्ञा जागरण पर बल देते हैं। पुस्तकीय ज्ञान की अपनी सीमा है अतः पाठ्यपुस्तकों के साथ प्रकृति द्वारा सीखना विद्यार्थियों में संवेदनशीलता का विकास करता है। कृष्णमूर्ति का मानना था कि शिक्षा व्यक्ति को मुक्त करेंय न कि उसे किसी विशिष्ट ढांचे में बांधे। पाठ्यक्रम विद्यार्थियों को केवल सूचनाओं के संग्रह और परीक्षा उत्तीर्ण करने योग्य ही नहीं बनाए वरन उन्हें जीवन की अखंड और गहन प्रक्रिया को समझने में भी उनकी सहायता करें। प्रचलित उद्देश्यपूर्ण पाठ्यक्रम से कृष्णमूर्ति सहमत थे। वे पाठ्यक्रम के एक निश्चित दृष्टिकोण के स्थान पर जीवन के समग्र विकास हेतु नैतिक और आध्यात्मिक शिक्षा की भी सिफारिश करते हैं। पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जो छात्र को सक्रिय रूप से गहन और वास्तविक जीवन मूल्यों की खोज में सहायक हो। अतः कृष्णमूर्ति और रवीन्द्रनाथ टैगोर के पाठ्यक्रम संबंधी विचारों में सामंजस्य है। दोनों ही संतुलित पाठ्यक्रम के माध्यम से व्यक्ति को स्वयं अपनी समग्र प्रक्रिया को समझ कर एक ऐसी नवीन व्यवस्था की हिमायत करते हैं जो विश्व शांति में सहायक हो। शिक्षक इन विधियों के सहारे शोषण के स्थान पर सह–अस्तित्व के भाव जागृत करें।

अनुशासनः

जिद्दू कृष्णमूर्ति अनुशासन के परंपरागत ढंग की कटु आलोचना करते हैं। उन्होंने अनुशासन को नियंत्रण और दमन की संज्ञा दी है। हमारा जीवन निरंतर अनुशासन, नियंत्रण और दमन की एक प्रक्रिया है। अनुशासन से स्वतंत्रता नहीं आती है। इससे अधिक से अधिक सिर्फ आत्म–परिवेष्टित मस्तिष्क का जन्म होता है और मस्तिष्क क्षुद्र और संकीर्ण हो जाता है, जहां स्वतरूस्फूर्त भावनाएं और समझ की व्यापकता नहीं होती। ऐसी स्थिति में धीरे–धीरे हम जो चाहते हैं वह खत्म होने लगता है और फिर शेष रहता है– जो हमें करना चाहिए वह आदर्श अर्थात जो दूसरे चाहते हैं कि हम करें। ऐसा मन एक मशीन की भांति यांत्रिक स्वचालित हो जाता है। ये सब निरर्थक है उन्हें एक और हटाना जरूरी है।

कृष्णमूर्ति अनुशासन शब्द के स्थान पर व्यवस्था शब्द का प्रयोग करते हैं। विचारशीलता से व्यवस्था आती है। यह स्वाभाविक सामंजस्य है। व्यवस्था के जाग्रत होने पर विद्यार्थी बगैर भय के जीवन की सभी समस्याओं को बुद्धिमानीपूर्ण तरीके से समझ सकता है। व्यवस्था एक दूसरे का ख्याल रखने, अपने कर्तव्यों के प्रति पूर्ण जिम्मेदार होने से आती है। कृष्णमूर्ति फाउंडेशन द्वारा संचालित शिक्षा केंद्रों में बच्चों पर बिना दबाव डालें या भय उत्पन्न किए इस प्रकार के अनुशासन (व्यवस्था) पर बेहद संवेदनशीलता से ध्यान दिया जाता है।

शिक्षक :

जिद्दू कृष्णमूर्ति शिक्षक को समाज का अत्यंत महत्वपूर्ण और जिम्मेदार सदस्य मानते हैं। शिक्षक का कार्य केवल ज्ञान देना, परीक्षा में सफल होने के लिए तैयार करना ही नहीं वरन विद्यार्थियों के मुक्त और सृजनशील होने में सहायता करना भी है। अतः कृष्णमूर्ति शिक्षक की व्यापक सार्थकता को स्वीकार करते हैं, न कि छात्र को किसी कृत्रिम आदर्श के अनुसार ढलने के लिए मजबूर करने वाला। शिक्षक की प्राथमिक जिम्मेदारी है कि वह छात्रों को भय और जो है उसे समझने में उसकी सहायता करें। छात्र को एक बेहतर और उदात्त जीवन की ओर मार्गदर्शित करें। छात्रों की इस रूप में मदद करे कि वे समझदारी से आंतरिक व बाह्य प्रतिबंधों, प्रतिमाओं और उनके प्रभावों से मुक्त हो

सके। शिक्षक एक प्रेरक की भूमिका में रहे। वह छात्रों को समझे न कि अपना ज्ञान, प्रतिमा और संस्कार उन पर थोपे। वह किसी सत्ता का भय दिखाकर बालक में सद्‌गुणों का विकास नहीं कर सकता है।

विद्यालयः

जिद्दू कृष्णमूर्ति के अनुसार–

विद्यालय एक ऐसा स्थान है जहां व्यक्ति संपूर्णता के बारे में सीखता है। शैक्षणिक उत्कृष्टता नितांत आवश्यक है, लेकिन एक विद्यालय उससे कहीं अधिक होता है। यह ऐसा स्थान हैय जहां शिक्षक और छात्र दोनों न केवल बाहरी दुनिया, ज्ञान की दुनिया का अन्वेषण करते हैं बल्कि अपनी खुद की सोच, अपने खुद के व्यवहार को भी समझने का प्रयास करते हैं। (शिक्षा के आयाम, पृष्ठ संख्या–5)

कृष्णमूर्ति विद्यालय के परंपरागत और संकुचित स्वरूप से संतुष्ट नहीं थे। उन्होंने स्वयं ऋषि वैली जैसे उत्कृष्ट शिक्षा–केंद्र की स्थापना की। वर्तमान में कृष्णमूर्ति फाउंडेशन द्वारा भारत इंग्लैंड एवं अमेरिका में कुल 11 विद्यालयों एवं दो उच्च शिक्षा के केंद्रों (वाराणसी) का संचालन हो रहा है। कृष्णमूर्ति छोटे विद्यालयों के समर्थक थे। उनके अनुसार बड़ी शिक्षण संस्थाओं में आधुनिकतम एवं श्रेष्ठतम शिक्षण पद्धतियों का प्रयोग करने की अपेक्षा सीमित संख्या में विद्यार्थियों वाले ऐसे विद्यालयों का होना अधिक महत्वपूर्ण है, जिनमें सही ढंग के शिक्षक अध्यापन करते हो। यही सही प्रकार के शिक्षा–केंद्र होते हैं। विद्यालय जहां सीखने की कला सिखाई जाती है, जीविका की शिक्षा के साथ–साथ संपूर्ण मानव जाति और जीवन के उत्तरदायित्व का बोध कराया जाता है।

शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया :

जिद्दू कृष्णमूर्ति के अनुसार शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में शिक्षक एवं शिक्षार्थी एक ही तल और एक ही प्रकार के अनुभव में परस्पर सहयोग करते हैं। इस प्रक्रिया को प्रभावी बनाने हेतु उन्होंने विचारवाद रहित शिक्षण विधियों का सुझाव दिया। आपने बालक को स्वयं अपना शिक्षक बनने हेतु प्रोत्साहित किया ताकि वह क्रियाशील मस्तिष्क के सहारे स्वतंत्र और प्राकृतिक वातावरण में नैसर्गिक रूप से स्वयं के लिए सत्य की खोज कर सके। कृष्णमूर्ति के अनुसार विशिष्ट विधियां विचारों द्वारा संचालित होती है, जो मस्तिष्क को मुक्त रखने में बाधक होती है।

मूल्यांकनः

जिद्दू कृष्णमूर्ति मानते थे कि मूल्यांकन का उद्देश्य न तो विद्यार्थियों को श्रेणीबद्ध करना होना चाहिए और न ही उन्हें समाज की अपेक्षाओं के अनुरूप ढालनाय वरन मूल्यांकन की एक ऐसी प्रक्रिया होनी चाहिए जो विद्यार्थी को स्वयं को जानने और जीवन को गहराई से समझने की ओर ले जाए। कृष्णमूर्ति तुलना आधारित मूल्यांकन पद्धति का समर्थन नहीं करते हैं, क्योंकि तुलना भय उत्पन्न करती है और एक भयभीत मन सम्यक और समग्र चिंतन में बाधक होता है। कृष्णमूर्ति परीक्षा से अधिक सीखने की स्वतंत्रता पर बल देते हैं। इस हेतु शिक्षक, छात्र और अभिभावकों के साझा प्रयास और जागरूकता शिक्षा संबंधी समस्याओं के समुचित समाधान की खोज कर सकते हैं। जहां नकल की प्रवृत्ति और प्रतिस्पर्धा होगी वहां प्रेम प्रस्फुटित नहीं हो सकता। वहां केवल दोयम दर्जे के व्यक्ति ही बन सकते हैं।

उपसंहार :

जिद्दू कृष्णमूर्ति अपने युग के महान चिंतक और दृष्टा थे। शिक्षा में उनकी गहरी रुची थी। उन्होंने कुछ शिक्षा–केंद्रों की स्थापना की, जहां उनके शिक्षा संबंधी विचारों के क्रियान्वयन के प्रयास हो रहे हैं। ये स्कूल किसी विशिष्ट स्तर की शिक्षा देने के प्रयास नहीं कर रहे हैं, बल्कि मानव को भय और द्वंद्व के मनोवैज्ञानिक ढांचे, सम्यक प्रबोधन, मस्तिष्क की समग्र संरचना और गतिविधि के स्वतंत्र अन्वेषण में सहायता कर रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ :

– "शिक्षा एवं जीवन का तात्पर्य" जे. कृष्णमूर्ति (2011) कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी
– "शिक्षा के आयाम" जे.कृष्णमूर्ति (2023) कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी
– "सीखने की कला" जे. कृष्णमूर्ति (2015) कृष्णमूर्ति फाउंडेशन इंडिया, वाराणसी
– "सीखने की चाह" जे. कृष्णमूर्ति (2023) राजपाल एंड संस,नई दिल्ली
– "जे. कृष्णमूर्ति एक जीवनी" मेरी लट्यन्स (2022) राजपाल एंड संस, नई दिल्ली
– "जे. कृष्णमूर्ति का शैक्षिक चिंतन" डॉ. पार्थ सारथी पाण्डेय (2017) ए.पी.एच पब्लिशिंग कॉरपोरेशन, नई दिल्ली।

"Island of Escape: Sita's Quest for Solace and Sanity" in "Where Shall We Go This Summer?"

Rajendar Prashad
Research Scholar, English
Tantia University (Sriganganagar)
Lecturer, English, Govt. Polytechnic College, Sri Ganganagar
Email: rajendra1577@gmail.com
Mob. 9610338417

Abstract

This paper delves into Anita Desai's "Where Shall We Go This Summer?", analysing the psychological and emotional journey of Sita, a woman caught between societal obligations and personal identity. Set against the backdrop of post-colonial India, the novel presents Sita's retreat to Manori Island as a symbolic and literal escape from her alienating domestic life in Bombay. Drawing upon Freudian psychoanalysis and Jungian individuation, the study explores Sita's internal conflict, her yearning for existential wholeness, and her ultimate reconciliation with reality. The island becomes a metaphor for the lost sanctuary of childhood, feminine identity, and the unfulfilled desire for emotional autonomy.

Keywords

Anita Desai, Psychological Realism, Sita, Manori Island, Feminine Identity, Escape, Freudian Regression, Jungian Individuation, Emotional Alienation, Post-colonial Indian Fiction.

Introduction

Anita Desai's fiction consistently navigates the labyrinthine interior world of her characters, particularly women. In "Where Shall We Go This Summer?", Desai presents Sita's psychological disintegration amidst domestic obligations and spiritual discontent. The island of Manori becomes a paradoxical haven-a place imbued with childhood magic yet incapable of fulfilling adult yearnings. The novel emerges not as a narrative of geographical escape but as one of psychological introspection and emotional survival.

Research Gap

While many studies discuss the thematic elements of isolation and gender roles in Desai's works, fewer delve into a detailed psychoanalytical reading that blends Freudian and Jungian theories. Moreover, Sita's symbolic connection with space-particularly the island-is often examined superficially. This paper aims to fill the gap by connecting these spatial metaphors with the psychological mechanisms of regression, individuation, and trauma.

Objectives of the Study

1. To examine the psychological and emotional transformation of Sita in "Where Shall We Go This Summer?"
2. To analyze the symbolic significance of Manori Island in relation to Sita's inner turmoil.
3. To apply Freudian and Jungian psychoanalysis in interpreting Sita's mental retreat and final reconciliation.
4. To evaluate the novel's contribution to feminist and post-colonial literature.

Methodology

This research adopts a qualitative approach, employing textual analysis of the primary text, "Where Shall We Go This Summer?", supported by secondary critical literature. The study also integrates psychoanalytic theory-particularly Freud's notions of regression and repetition compulsion and Jung's concept of individuation-to analyze character development. Critical commentary and literary

criticism are incorporated to frame the discussion within a broader academic discourse.

Expected Outcomes

- A deeper understanding of Sita's character as a representation of psychological rebellion and emotional alienation.
- Clarification of Manori Island's symbolic role as both refuge and illusion.
- Insight into how Desai's narrative technique encapsulates a modern woman's psychological crisis.
- A psychoanalytically enriched interpretation that bridges literary, feminist, and psychological readings.

Discussion

Anita Desai's "Where Shall We Go This Summer?" presents a profound exploration of Sita's character, whose journey is marked by intense solitude and emotional complexity. Sita, a middle-aged woman, is portrayed as physically unremarkable yet distinguished by a heightened sensitivity that shapes her demeanour and interactions. Shubha Tiwari aptly describes her as "a traditionally settled woman in every respect, …. psychologically outraged. She is a sleepless, unsteady, and worried soul. She is pregnant. She does not want to give birth to the child in the unreal world of Mumbai." 1 (Shubha Tiwari,2004) Her outward appearance, often dishevelled and indifferent, becomes a symbolic reflection of her inner turmoil. This state of unrest is vividly illustrated through Raman's exasperated remark: "Why can't you just be neat and tidy?"2 (Desai, 2021) a plea that underscores his frustration with her apparent disorderliness. Sita's response and subsequent behaviour reveal a deeper truth about her identity, as she instinctively adopts "the garb of the male and then the female peacock," highlighting the duality and complexity of her character.

Sita experiences a sense of dissatisfaction with her responsibilities as a wife and mother. Awaiting the birth of her fifth child, she feels trapped in the monotony of domestic life in a Bombay apartment, alienated from her husband, Raman, and her children. As Usha Bande observes - "Denying herself joy, enthusiasm, anger and fear- the whole range of sentiments that makes us human- Sita loses the urge to assert and affirm herself. Devoid of these natural feelings, she becomes melancholy, depressed woman, bored with life; nothing can instil zeal in her."3 (Bande,1988)

Raman is entirely absorbed in his professional commitments, leaving little room for the emotional needs of his wife, Sita. Although he routinely asks her, "Where shall we go this summer?" the question often remains a formality, as his hectic schedule seldom permits him to act on these plans. He is not fully blamed for it as he is too busy in his work that he has very little time to pay attention to the emotional upheavals within Sita, who struggles silently with feelings of neglect and dissatisfaction in their marriage. her responsibilities of being a wife and mother weigh heavily on her, and her longing for emotional intimacy remains unfulfilled. When she discovers she is pregnant with a fifth child, her response is far from joyful. Instead, she admits, "I'm not pleased. I am frightened." Her dread intensifies, culminating in her declaration: "It's harder-harder. It's unbearable."4 (Desai, 2021) These statements poignantly reflect Sita's profound dissatisfaction and the emotional burden she carries, which permeates her experience throughout the narrative.

The breaking point in their relationship is vividly captured when Raman attempts to comfort Sita by saying, "Sita, it soon will be over." At this moment, as Desai writes, "the storm broke." Throughout their marriage, they had avoided confrontation, a tendency that had only served to suppress their emotions. Raman, reflecting on the situation, realizes that perhaps there had been "incidents, thoughts during the day he had not known about" and that even if he had been aware, he might have chosen to ignore them. Sita, on the other hand, had spent months collecting her "resentments, her fears, her rages," until the moment when she "flung them outward, flung them from her." 5 (Desai, 2021)

This powerful scene encapsulates the intensity of Sita's pent-up emotions and the deep fissures within their marriage, laying bare the emotional chasm between them.

Through Sita, Desai delves into the inner struggles of a woman grappling with her fragmented psyche and her disconnection from the world around her. Her role as a wife and mother has become a source of persistent dissatisfaction, with her experiences accumulating into a series of painful realizations. Sita finds herself trapped in an environment that feels devoid of warmth and understanding, and the gap between her inner desires and her external reality grows unbearable. Her husband and children, though part of her daily life, seem emotionally distant and unresponsive to her deeper needs. It is also evident "when Menka coming from a visit to a friend, stopped on the balcony to stare at the odd figure of her mother standing by the rails firing Karan's pop-gun at the furious band of crows. She watched for a while, in astonishment, then pressed her lips together and went away without asking for an explanation- her mother had before arranged, created wilfully such act of drama purely, Menka maintained…"6 (Desai, 2021) This disconnects leaves Sita yearning for an escape to preserve her mental stability. Feeling suffocated by her mundane and unfulfilling life in a cramped Bombay apartment, Sita decides to flee to Manori, an island off the West Coast. This island holds significant personal meaning for her-it is the place where she spent her childhood, under the shadow of her father, a revered nationalist hero. Manori represents a stark contrast to her current reality, symbolizing simplicity, freedom, and a connection to a time when life felt meaningful and untainted. The decision to retreat to Manori is Sita's desperate attempt to find solace and clarity amidst the chaos of her emotions. It reflects her yearning for a sanctuary where she can reconnect with herself and temporarily escape the oppressive roles of wife and mother that society has imposed upon her. In Where Shall We Go This Summer? the island of Manori is not merely a geographical location but a symbolic refuge-a space imbued with the innocence and wonder of her childhood, offering a stark contrast to the alienation and dissatisfaction that characterize her present existence. Sita's longing for Manori is intricately tied to her past, a period she views as untainted by the burdens of adulthood. On the island, she hopes to rekindle a sense of wonder and simplicity, to find solace in the memories of her father's magical stories and the carefree moments that shaped her early years. In the words of Dr. M. Mani Meitei, "The past becomes a psychic residue in her 'personal unconscious,' the backdrop of her life, and her obsessive preoccupation with it gives her the strength to leave her home, husband, two children and the urbanized life of Bombay for Manori Island, where she thinks she would be able to live under a magic spell." 7 (Meitei, 2000) The island thus becomes a symbol of an idealized escape-a return to a time of purity and uncorrupted joy, far removed from the harsh realities of her current life. The novel's psychological depth is further elucidated in M.K. Naik's observations in A History of Indian English Literature. Naik remarks, "Where Shall We Go This Summer? marks a return to the autonomous world of inner reality." 8(Naik, 1982) Manori, as a setting, serves a dual purpose in the narrative. On one hand, it is a refuge-a space where Sita can retreat from the relentless demands of urban life and familial responsibilities. On the other hand, it becomes a mirror to her inner conflicts, symbolizing the dichotomy between the innocence of childhood and the complexities of adulthood. Desai captures this duality poignantly through Sita's perception of the island: "She was on the island, in order to achieve the miracle of not giving birth. Wasn't this Manori, the island of miracles? His father had made it an island of magic once, worked miracles of a kind." 9 (Desai, 2021) Her desire to keep her unborn child in limbo is not merely an act of rebellion against motherhood but also a psychological plea to halt the inexorable passage of time and responsibility.

This tension between the magical and the

real presents Sita's struggle to reconcile her feminine sensitivity, emotional conflicts, and the desire for autonomy. The island, steeped in her father's tales of miracles and a nostalgic longing for a more carefree existence, becomes both a sanctuary and a site of profound introspection. It represents her yearning for freedom and a desperate attempt to reclaim a sense of control over her life. Yet, as the narrative unfolds, the very isolation and idealization of Manori underscore the impossibility of such an escape. Sita's retreat to the island is a psychological journey toward self-discovery, where she confronts the fragility of her own hopes and the inescapable realities of her life.

Her retreat to the island is as much an act of rebellion against societal norms as it is an attempt to protect her unborn child from the same struggles she endures. This conflict reflects her feminine sensitivity and underscores Desai's nuanced portrayal of women's emotional landscapes. Desai constructs the narrative around Sita's psychological landscape, juxtaposing the physical isolation of the island with the emotional solitude she experiences in her marriage. Through Sita's actions and introspections, Desai illuminates the struggles of women who navigate the dual burdens of societal expectations and personal identity. The island, far removed from the materialism and chaos of Bombay, represents a metaphorical womb-a space where Sita hopes to nurture a new reality, free from the constraints of her present life. However, her expectations of the island as a sanctuary are layered with contradictions. While she seeks solace, the isolation also forces her to confront her own vulnerabilities and fears. She is trapped between the nostalgia of her past and the disillusionment of her present. The island, once a sanctuary imbued with her father's mystical aura, now feels alien and devoid of the magic she seeks. She feels- "Manori was not a romantic island" 10 (Desai, 2021)

Despite the complexities of Sita's solitude and emotional struggles, her journey is ultimately one of self-realization. Her decision to return to Bombay signifies her acceptance of life's inherent contradictions. This act of reconciliation reflects her growth as a character, as she integrates the fragmented aspects of her psyche and embraces the realities of her existence. Sita's decision to retreat to the mystical Manori Island is deeply rooted in her inability to reconcile the emotional and psychological dissonance she experiences in her marriage. Her journey from the reality of her mundane existence in Bombay to the fantastical world of Manori can also be understood through Freudian psychology. Her behaviour, when viewed through the lens of Freudian psychology, reflects a deep internal conflict driven by unresolved childhood trauma, unfulfilled desires, and an inability to reconcile societal expectations with personal needs. Sita's retreat to Manori serves as a poignant exploration of regression as a coping mechanism, illustrating both its temporary relief and its ultimate inability to resolve deeper emotional and psychological issues. Freud's theory of regression 11 (Freud ,1900) suggests that individuals revert to earlier states of being to cope with distress. For Sita, this retreat is not merely physical but also psychological, as she tries to reclaim a state of emotional and existential simplicity. By going back to the island, she seeks to shield herself from the overwhelming conflicts in her marriage and the pressure of societal norms. This reversion to a place tied to her childhood reflects her subconscious desire to avoid the responsibilities and emotional turmoil of adulthood. She seeks a place where her fragmented self can find coherence, away from the relentless demands of her roles as a wife and mother. Yet, her journey is not just an escape; it is also an introspective confrontation with her past, her identity, and the choices that have shaped her. The island becomes a canvas for her to explore whether the peace she craves can truly be found by revisiting the past or whether it requires a reconciliation with her present reality. Sita's retreat to the island of Manori symbolizes a desperate attempt to escape the chaos of urban life and her suffocating marital

environment. Her decision to leave Bombay with her children reflects her longing for solitude, healing, and a return to a simpler, more harmonious existence. Her choice to isolate herself further reflects her need to confront her inner turmoil. Her decision to return to the island during her pregnancy is an act of defiance against the mundane, oppressive rhythms of her life. She hopes that solitude will allow her to rediscover a sense of purpose and clarity. Her retreat to Manori serves as both a literal and symbolic attempt to regress to a simpler time, escape from the pressures of her superego, and reconnect with her id's longing for freedom and self-expression. However, her struggles also highlight the limitations of defence mechanisms in addressing the root causes of psychic distress, leaving her journey incomplete and fraught with unresolved tensions.

In Freudian psychoanalysis, the self emerges as a result of the development of the ego, which arises from interactions with the external world and internal drives. The ego acts as a mediator between the id (primitive instincts), the superego (moral conscience), and reality. The "self" is essentially seen as a mental structure or representation that evolves from this mediation. Sita's desires for freedom, emotional connection, and a meaningful existence align with the primal instincts of the id. Her impulsive decision to leave Bombay and her refusal to conform to societal norms reflect her id's dominance. The societal and familial expectations that demand Sita to be a dutiful wife and mother represent the superego. These pressures conflict with her deeper desires, leading to her feelings of entrapment and frustration. Sita's ego, which should mediate between the id and the superego, struggles to find a balance. This inability manifests in her erratic behaviour, emotional outbursts, and retreat to Manori. Her journey to the island can be seen as an attempt by the ego to reconcile these conflicting forces, though it ultimately highlights her psychic disarray.

Freud's concept of repetition compulsion, where individuals unconsciously repeat patterns of behaviour rooted in unresolved trauma, applies to Sita's relationship with Raman. Despite her dissatisfaction and the emotional distance between them, she remains in the marriage, repeating a cycle of hope and disappointment. Her yearning for Raman's understanding and affection mirrors a deeper need for emotional validation that she likely sought from her father during childhood.

As a "key component in Freud's understanding of mental life, 'repetition compulsion' ... describes the pattern whereby people endlessly repeat patterns of behaviour which were difficult or distressing in earlier life"12 (Jim, 2002)

Sita's journey can also be interpreted through C.G. Jung's concept of the "individuation process." This process represents an individual's effort to establish a distinct identity while remaining part of the broader social framework.

For Jung, the self is the foundational aspect of the psyche, pre-existing the ego. The ego develops from the self rather than the self being a product of the ego. The self is seen as the central, unifying force of the psyche, encompassing both the conscious and unconscious aspects of an individual. The individuation process, as defined by Jung, refers to the psychological growth of an individual as they integrate different aspects of the self, both conscious and unconscious, to achieve a sense of wholeness. This process involves navigating internal conflicts, acknowledging suppressed emotions, and ultimately reconciling with one's inner and outer worlds.

"Jung saw individuation as the process of self-realisation, the discovery and experience of meaning and purpose in life; the means by which one finds oneself and becomes who one really is. It depends upon the interplay and synthesis of opposites e.g. conscious and unconscious, personal and collective, psyche and soma, divine and human, life and death. Analysis can be seen as an individuation process. It not only fosters but accelerates individuation" 13 (Jung, 1935)

As Jung puts it:

"The aim of individuation is nothing less than

to divest the self of the false wrappings of the persona on the one hand and the suggestive power of primordial images on the other." 14 (Jung, 1935) Applying both theories offers a nuanced understanding of Sita. Freudian theory highlights her unconscious drives, defence mechanisms, and the influence of her childhood experiences, while Jungian theory provides a broader, symbolic framework for understanding her psychological growth and eventual reconciliation. Sita's character embodies both Freudian regression and Jungian individuation. While her retreat to Manori demonstrates a Freudian escape to an earlier stage of emotional comfort, her eventual realization and return to her family align with Jung's idea of integrating the self. Together, these theories reflect the multi-layered complexity of Sita's psychological and emotional journey. Her retreat to Manori Island symbolizes her attempt to separate herself from the oppressive structures of her domestic life in Bombay, a crucial step in her individuation. Feeling alienated from her husband, Raman, and disconnected from societal expectations, Sita seeks solace on the island where her childhood memories and her father's magical aura still linger. This retreat reflects her need to reconnect with her inner self, free from the constraints of her present reality. Her refusal to give birth to her fifth child on the island reflects her struggle against the creative-destructive forces she perceives in her environment. This act can be seen as an attempt to reclaim control over her life and redefine her identity. However, as the narrative unfolds, Sita's stay on Manori Island forces her to confront the limits of escapism. The island, once a symbol of magic and freedom, reveals itself as a place where her unresolved conflicts persist.

For Sita, her quest for freedom reflects the modern individual's relentless struggle to carve out a space for personal meaning and autonomy amidst societal constraints. Disillusioned and emotionally drained by her unfulfilling life in Bombay, Sita perceives her existence as a barren wasteland. She becomes determined to break free from the monotony and seeks refuge in Manori, a place imbued with the magical legacy of her father. Her father's presence and his nationalist ideals had once sanctified the island, making it a sanctuary of simplicity and hope in her memories. In her yearning for this enchanted space, Sita attempts to shield her unborn child from the destructive forces she sees pervading the world. Her resolve to not bring her child into a world she views as corrupt and violent underscores her rejection of the life she has come to detest.

Sita's journey to Manori represents a quest for transformation and healing. She wishes to recreate the magic her father embodied, hoping it will grant her child a charmed existence away from the chaos and cruelty of her current reality. However, her stay on the island becomes a confrontation with the futility of escapism. The utopia she seeks in Manori proves elusive, and she realizes that her retreat does not offer a permanent solution to her struggles.

Through her time on the island, Sita undergoes a transformation. She realizes that fleeing from her problems only deepens her sense of alienation. The resolution of the novel emphasizes the necessity of achieving a delicate balance between the inner self (unconscious) and the external world (conscious). Sita's return to Bombay, while seemingly a capitulation, signifies her gradual acceptance of life's complexities. It reflects her recognition that retreating into isolation, whether physical or emotional, cannot provide a lasting solution. Instead, she begins to understand that harmony lies in embracing both her internal struggles and the external demands of her life, transforming her disillusionment into a quiet strength. Sita's story, "Where Shall We Go This Summer?" becomes a powerful exploration of identity, individuality, and the human capacity for reconciliation. It is a testament to Anita Desai's mastery of psychological realism, offering a nuanced and compassionate depiction of a woman's journey toward self-acceptance and balance in a world fraught with expectations and

contradictions. Sita's story is a universal exploration of the modern individual's quest for meaning in an increasingly disconnected world. Through her solitude and emotional labyrinths, Anita Desai crafts a character who resonates deeply with readers, offering a profound reflection on the human condition and the pursuit of psychological wholeness.

References-

1. Critical Responses to Anita Desai. (2004). India: Atlantic. page no 1

2. Desai, Anita. (2021). Where Shall We Go This Summer. Orient Paperbacks, New Delhi, Page.133

3. Bande, Usha; The Novels of Anita Desai: A Character and Conflict, Prestige Books, New Delhi 1988 mentioned by Ramu Tiwari A THESIS on THE SOCIO-PSYCHOLOGICAL ISSUES IN VIRGINIA WOOLFAND ANITADESAI: A COMPARATIVE STUDY Submitted to Bundelkhand University Jhansi 2006

4. Ibid Page. 32

5. Ibid Page no 33

6. Ibid Page no 41

7. The Novels of Anita Desai: A Critical Study. (2000). India: Atlantic Publishers and Distributors. Page no 30

8. Naik, M K; A History of Indian English Literature, Sahitya Academy, New Delhi, 1982, page no 290

9. Ibid Page no 31

10. Ibid Page 106

11. Freud, Sigmund (1900). The Interpretation of Dreams. Allen and Unwin. p. 548.

12. Grant, Jan; Crawley, Jim (2002). Transference and Projection: Mirrors to the Self. New York City: McGraw-Hill Education. p. 38

13. Jung, C. G. (1935). The relations between the Ego and the Unconscious. In: Two Essays on Analytical Psychology. CW 7 mentioned by MARTIN SCHMIDT in INDIVIDUATION AND THE SELF link- https://www.thesap.org.uk/articles-on-jungian-psychology-2/about-analysis-and-therapy/individuation/

14. Jung, C. G (1942a). A psychological approach to the trinity. CW11, para 269 as mentioned by MARTIN SCHMIDT in INDIVIDUATION AND THE SELF link- https://www.thesap.org.uk/articles-on-jungian-psychology-2/about-analysis-and-therapy/individuation/

नंद चतुर्वेदी के संस्मरणों एवं साक्षात्कारों का विश्लेषण तथा औचित्य

मोनिका पालीवाल,
शोधार्थी,
सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी संकाय,
जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ
(डीम्ड–टू–बी विश्वविद्यालय),
उदयपुर (राज.)

डॉ. ममता पानेरी
असिस्टेंट प्रोफेसर, शोध निर्देशक,
सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी संकाय,
जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ
(डीम्ड–टू–बी विश्वविद्यालय),
उदयपुर (राज.)

पृष्ठभूमि :

मनुष्य के सर्वांगीण विकास में आंतरिक विकास का महत्वपूर्ण स्थान है। आंतरिक विकास साहित्य के द्वारा ही सम्पूर्ण हो सकता है। फिर साहित्य चाहे पद्य या गद्य मायने नहीं रखता है। हम मनुष्य के रूप में जन्म तो लेते हैं, परन्तु हमारी कई मूलभूत प्रवृत्तियाँ पषुवत होती है। इस जन्म को संस्कारित और पल्लवित करने का उत्तरदायित्व साहित्य पर है।

हिन्दी साहित्य में कई युगवाद आए और निःसंदेह आगे भी आते रहेंगे। हिन्दी साहित्य जगत में अनेक साहित्यकार हुए जो अपने–अपने साहित्य लेखन की प्रतिभा के धनी और निपुण थे। हिन्दी साहित्य संसार में नन्द चतुर्वेदी का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। नन्द चतुर्वेदी जितने बड़े कवि हैं और जो काव्य जगत में उनकी पहचान है, उतने ही श्रेष्ठ गद्यकार भी हैं। इन्हें आधुनिक युग के हिन्दी साहित्य समाजवाद का प्रमुख वाद्यकार कहा जाए तो कोई अतिष्योक्ति नहीं होगी। मेरा यह शोध इनके जीवन परिचय एवं रचना की विकास यात्रा से सम्बन्धित है। इसमें उनके जीवन के विशिष्ट पहलुओं पर प्रकाष डाला जा रहा है तत्पष्चात् उनके कृतित्व पर।

'प्रकाश आतुर'' ने उचित लिखा था ''नन्द चतुर्वेदी जितने समर्थ कवि हैं उतने ही समर्थ लेखक भी है। कविता के साथ–साथ गद्य लेखन की आवश्यकता अनुभव करते हुए समीक्षाओं के साथ–साथ शिक्षा, दर्शन, राजनीति, साहित्य आदि पर व्यापक मानवीय प्रतिबद्धता के साथ उन्होंने कलम चलाई है''।

नंद चतुर्वेदी ने निम्न–मध्यमवर्ग की पीड़ा, घुटन, संघर्ष, एकांकीपन एवं तनाव को अपनी रचनाओं में चित्रित किया है। अर्थात् वे वास्तविकता एवं यथार्थ का चित्रण करते थे। वे मानते थे कि गद्य समय का विचार–पक्ष है। उनका कृतित्व आम जन एवं निम्न वर्ग के इर्द–गिर्द घूमता हुआ प्रतीत होता है। गरीब, पीड़ित एवं दुःखी की संवेदनाएँ उनके कृतित्व के माध्यम से बाहर निकली हैं, ऐसा प्रतीत होता है। उनकी अनुभूतियों में प्रमाणित की महत्ता दिखाई पड़ती है। उन्होंने जो कुछ भी लिखा है वह सीधा समाज के अनुभव से जुड़ा हुआ है। असहाय, बेसहारा व्यक्ति की तिलमिलाहट भरी आकांक्षाओं की पीड़ा तथा नियति नही की उग्र विडम्बनाएँ उनकी आम जनता से सम्बन्ध लेखन में बखूबी चित्रित है। उन्होंने जन–जन की पीड़ा एवं दुःख का शब्द चित्रण किया है।

नंद जी ने पूर्णकालिक लेखक के तौर पर शिक्षा, संपादन, चिंतन–मनन, वाग्मिता, अनुवाद, अध्यापन, शिक्षक, राजनीति, कई क्षेत्रों में योगदान दिया है। अपने साहित्य को कभी अप्रचलित नहीं होने दिया। नंद जी के गद्य में सर्वत्र जो खरापन, तार्किकता और विश्लेषण दिखता है वह उनकी गहरी अविचल और दृढ़ समाजवादी–अंतर्दृष्टि से आया है उनके गद्य में किसी तरह आँसू–धकेल, संवेदना या राजनीतिक हटवादिता नहीं बल्कि सामाजिक औचित्य, वैज्ञानिक तर्क और मानवतावादी विवेक की दिव्य रोशनी है।

राजस्थान के हिन्दी लेखकों को वह सम्मान ओर प्रतिष्ठा नहीं मिली, जिसके वे हकदार थे। नन्दबाबू के संपूर्ण साहित्य के मामले में भी तो कहीं ऐसा अनिश्ट नहीं हुआ। राजस्थान विशेषकर उदयपुर में रहकर हिन्दी की सेवा करने वाले नंद बाबू के काव्य का प्रचार–प्रसार किया गया है एवं सभी तक पहुँचाया गया है परन्तु कथेतर गद्य के साथ ऐसा नहीं है मेरे शोध का विषय इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर

लिया गया है। नंद बाबू ने कथेतर गद्य सम्बन्धित जो भी शब्द चित्रण किया है उनके कई पहलू अभी तक अछूते रह गये हैं उनको उजागर इस अध्ययन का मुख्य उद्देष्य है। नंद जी ने 'यह हमारा समय'', 'आशा बलवती है राजन'', 'अक्सरा साहित्य की व्यापक चिंताएँ'', 'अतीत राग'', 'जो बचा रहा'', 'मीरा संचयन'', जैसी अनमोल निधियाँ हिन्दी साहित्य को दी है ।

'जय हिन्द' (समाजवादी साप्ताहिक) से लेकर 'जनमन' 'जनशिक्षण' 'मधुमति' तथा चिंतन–प्रधान साहित्यिक पत्रिका 'बिन्दु' का संपादन किया। माध्यमिक षिक्षा बोर्ड की उच्च कक्षाओं के लिए कहानी तथा गद्य की अन्य विधाओं के संग्रह का संपादन किया। राजस्थान साहित्य अकादमी के लिए प्रांत के प्रख्यात रचनाकारों पर मोनोग्राफ लेखन किया है।

प्रस्तावना :–

यह कहना जरूरी–सा लगता है कि ये वृतांत किसी भी व्यक्ति के जीवन का विषद ब्यौरा नहीं है, आदि से अंत तक उसे जानने का या उसके जीवन–आवेगों में रहस्यों को किसी मनोचिकित्सक की तरह देखने का। यह सिर्फ जिन्दगी के उस हिस्से को देखने की कोशिश है जो समाज से जुड़ी है और 'सामाजिकता' का बहुमूल्य हिस्सा है। मेरे खयाल से यही वह हिस्सा या पक्ष है जो जिन्दगी के ऊल–जलूल बियावानों में चमकता है और मृत्यु के बाद भी आभार के साथ याद किया जाता है। 'आहार, निद्रा, भय, मैथुन' की सार्वजनिक सामान्यताओं को याद करने की जरूरत शायद इसलिए नहीं होती क्योंकि उनकी कोई 'ऊर्जस्वित सामाजिकता' नहीं होती। अधिक–से–अधिक कहें तो वे सभी के जीवन में तेज आंधी की तरह आकर गुजर जाते हैं। उनके साथ हमारा संघर्श प्रायः अकेले–अकेले चलता रहता है।

नंद चतुर्वेदी जी ने से अपने संस्मरण में समाज से जुड़े उस जीवन के भाग को प्रस्तुत किया है जो 'सामाजिकता' का अहम एवं मूल्यपरक हिस्सा है। 'अतीत राग' में नंदजी ने उनके कुछ मित्रों जो साहित्य रचना एवं साहित्य मे रुचि रखते हैं एवं कुछ और ऐसे सर साथी एवं पड़ौसी का जो सुखद समाज रचना के लिए प्रतिबद्ध थे एवं जिन्होंने शोषण मुक्त समाज की कल्पना की।

नंद चतुर्वेदी ने अपने साक्षात्कारों में साहित्य के कुछ विषयों के प्रति गहरी चिंताएँ व्यक्त की है साथ–साथ साहित्य के प्रति अपने विचार अभिव्यक्त किए हैं।

अतीत राग का मुख्य प्रतिपाद्य :–

नंद चतुर्वेदी जी ने अपने संस्मरण 'अतीतराग' मे गाँधी एवं नेहरू से सम्बन्धित कुछ विचार व्यक्त किए है ''गाँधी और नेहरू के बुनियादी मतभेद मामुली नहीं है। दरअसल, इन दोनों के बीच हुई बहस और खतों–किताब उन सब स्वाधीनता कामी लोगों के लिए एक उत्साहप्रद घटना है, जो विचारों की असहमति को दर्ज कराना मौलिक अधिकार मानते हैं। गुरु और शिष्य 'गाँधी और नेहरू' एक तार्किक ऊंचाई तक पहुँचकर अपनी जीवन दृष्टि के पक्षों कों प्रकट होने देते हैं लेकिन दोनों के चित्त और मैत्री हीरे की तरह चमकते रहते हैं और शब्द तथा कर्म की सारी सम्भावनाएं खुली रहती हैं''।

नंदजी ने अपने इस संस्मरण में बताया कि नेहरू ने गाँधी के उन विचारों का विरोध किया है जिसमें गाँधी जी ने अपने पचास वर्षों के इतिहास को भूल जाने को कहा जिसमें उन्होंनें डॉक्टर वकील, तार, रेल, अस्पताल सभी को भूल कर किसान का जीवनयापन करने को कहा।

जबकि नेहरू जी चाहते थे कि किसान उनके कष्ट पूर्ण एवं असीम मेहनत से बाहर लाकर सुख–सुविधाएँ उपलब्ध कराना चाहते थे। नेहरु जी ने अपनी सोच आध ुनिकता के पक्ष में प्रस्तुत की है। वे समाजवाद के पक्षधर रहे। नेहरू जी ने बहुतसी चिंताएं सत्ता मे आने के बाद जाहिर की। वे सदैव विभाजित हुए भारत देश को फिर से हिम्मत एवं स्वाभिमान प्राप्त करने के प्रयासों में लगे रहे। परन्तु धीरे–धीरे कुछ कारणों से समाजवाद के पक्षधरों का विश्वास नेहरू जी से उठने लगा।

आधी सदी तक जयप्रकाश :–

नंद जी ने 'आधी सदी तक जयप्रकाश' नामक शीर्षक से अपने संस्मरणात्मक आलेख जयप्रकाश के प्रति अपने विचार अभित्यक्त किए। वे इस सवाल का जवाब खोजना चाहते थे कि नेहरू जयप्रकाश को अपने पक्ष में क्यों लेना चाहते थे? नंद चतुर्वेदी ने राजनीति एवं सत्ता में आकर किस प्रकार एक व्यक्ति सब कुछ भूलकर सिर्फ सत्ता में सुख देखना प्रारंभ कर देता है, इसका बखूबी वर्णन किया है नंद

चनुर्वेदी जी ने जयप्रकाश नारायण द्वारा सवा घंटे तक दिए गए भाषण पर अपने विचार व्यक्त किए और कहा यह मैंने पहली बार देखा जब श्रोताओं ने इतने लंबे समय तक किसी का भाषण शांतिपूर्ण तरीके एवं गंभीरता के साथ सुना।

नंद चतुर्वेदी जी ने उनके द्वारा कोटा के राजकीय कॉलेज में विद्यार्थियों एवं अन्य क्षेत्र के बुद्धिजीवियों की एक बड़ी सभा में जिसमें दिए गए भाषण के कुछ अंश प्रस्तुत किए। जिसमें उन्होंने अपनी चिंता व्यक्त की ''जे.पी. की पूरी जिंदगी लोक शक्ति की पक्षधरता को मजबूत करने का प्रयत्न थी, यही पक्षधरता दुनिया भर के समाजवादियों को नयी व्यवस्था बनाने का नैतिक–तर्क, सिद्धांत और साहस देती है। लोक और राज्य शक्ति के बीच की बहस किसी भी समाजवादी के लिए शाब्दिक छेड़खानी नहीं है बल्कि राज्य शक्ति के साथ संघर्ष है जिसके पास सैन्य शक्ति और प्रभुत्व। प्रभुत्य (ऑथोरिटी) है''।

अपने इस संस्मरण में उन्होंने लद्दड़पन जैसे शब्दों का प्रयोग भी किया है। जो उन्होने आर्थिक व्यवस्था को देखते हुए किया। इसमें उन्होंने प्रभावती के बारे में भी बताया जो जयप्रकाश के सहचर के रूप में रहती थीं। जयप्रकाश ने सदैव के शक्तिशाली समाज की कल्पना की और उसमें क्रांतिकारी बदलाव आवश्यकता महसूस की उन्होंने नैतिकता पर बल दिया।

जन–योद्धा डॉ. राममनोहर लोहिया :–

नंद चतुर्वेदी जी ने पहली बार जव राममनोहर लोहिया को प्रत्यक्ष देखा उस समय का वर्णन किया है। उनके व्यक्तित्व को देखकर वे उनसे प्रभावित भी हुए और आश्चर्यचकित थी।

लोहिया जी के व्यक्तित्व को नंदजी ने जितना पहचाना उनको अपने अपनी रचना में अभिव्यक्त किया। ''सत्य'' को पहचानने के लिए वे वर्तमान को मिथ्या नहीं मानते थे, उसकी अंगति को हिलाने के लिए वे जनांदोलनों की तैयारी में लगे रहे। पुरातन–रिश्तों, परंपरा और इतिहास का बोझ उठाने के बजाय उनके पुनर्रचना और व्याख्या का काम उन्होंने किया''।

लोहिया जी ने सदैव समानता पर बल दिया। सिर्फ काल्पनिक बातें ना कर यथार्थता पर बल दिया। उन्होंने शब्द एव कर्म में कोई भेद नहीं किया। नंदजी ने बताया कि लोहिया जी समानता एवं स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करते रहे। नंदजी ने अपने इस संस्मरण में भीड़ में चलो नामक शीर्षक में लोहिया के साथ हुई दूसरी मुलाकात का वर्णन किया है। लोहिया जी आमजन में एवं उनके सुख दुःख में साथ देने लगते एवं थोड़ी गहरी पहचान बना लेते थे। यह सब देखकर नंद जी मोहित हो गए थे। लोहिया जी आडंबर व दिखावे में विष्वास न कर सत्य रूपी रोषनी के साथ कदम–कदम मिलाकर चलते रहे और शायद इसी कारण कई लोग उनके मित्र बनते चले गए। लोहिया जी में देशभक्ति की भावना कूट–कूटकर भरी थी। गलत उन्होंनें सदैव विरोध किया। उनका तर्क था कि हिंदुस्तान के लोग अपनी कायरता के कारण दतर में डांटे–फटकारे खा कर घर पहुँचते हैं और पत्नी को पीटकर बहादुरी दिखाते जिस दिन वे अपनी औरतों को पीटना छोड़ देंगे। स्त्री निरादर का इतना गहरा मर्मांतक अहसास है। इसका यह इंकलाबी उपचार 'वचन बद्धता' लोहिया जी के लिए ही सोच पाना संभव था''।

लोहिया जी ने स्त्री के साथ हो रहे अन्याय का विरोध किया। साथ ही साथ उन्होंने हिन्दी भाषा के पक्ष में संघर्ष किया। उन्होंने अंग्रेजी हटाओ आंदोलन चलाया। हालांकि उसमें वे सफल न हो सके परंतु उन्होंने भारतीय भाषाओं के लिए बहुत कार्य व संघर्ष किया। लोहिया जी ने राम, .ष्ण और शिव का बखान किया। उन्होंने नई युवा–पीढी राम, कृष्ण एवं शिव की कल्पना की थी। रंगों में उन्होंने श्याम वर्ण को प्रमुख माना। गोरे रंग को उन्होंने कम महत्व दिया। देश में चल रही समस्याएं एवं तकलीफों को उन्होंने पहचाना एवं उनके लिए प्रतिबद्ध रहे। जब इंदिरा गाँधी देश की प्रधानमंत्री बनी थीं उस समय लोहिया जो को यह दुःख हुआ कि एक स्त्री प्रधान मंत्री होते हुए भी गरीब स्त्री के सुख के लिए कुछ नहीं कर पाई। हर वर्ग के लिए, उत्पीड़न, शोषण, असमानता सभी को उन्होंने गहराई से समझा एवं भरसक प्रयत्न भी किए। क्रांति एवं जेल जाने से भी वे नहीं घबराए। उन्होंनें नव भारत का निर्माण करना चाहा जिसमें सभी समान हो और नैतिकता का बोल–बाला हो।

गैर–बराबरी के विरूद्ध लड़ने वाले हीरालाल जैन :–

नंद जी ने 'हीरालाल जैन 'जो–बराबरी के विरुद्ध लड़े उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व का वर्णन किया है। हीरालाल

आडंबर रहित थे। के कई जगह भाषण देते परंतु शांतिपूर्ण तरीके से उनकी बातों में कोई आवेग या क्लिष्टता नहीं होती थी। उन्होंने समाजवाद की कल्पना की है एवं पीड़ा शोषण के विरुद्ध कार्य किया। वे सदैव आशावादी रहे।

''साथी हीरालाल जी जन आदोलनों और स्वाधीनता संघर्ष के कठिन अनुभवों से गुजर चुके थे और वैसे भी वे ठंडे मन–मस्तिष्क के थे। वे देख रहे थे कि आजादी के बाद संघर्ष का मिजाज बदल गया था। जिस वैराग्य, सेवा और राष्ट्रप्रेम के लिए आजादी के संघर्ष में प्रतिज्ञायें के गई थी उन्हें व्यवहार में लाना असंभव–सा नजर आनें लगा।

सबसे पेचीदा सवाल यह था कि राष्ट्रीय सरकारों की अलोकतंत्रीय नीतियों का असरदार विरोध कैसे हो? यह उपाय तो वयस्क मतदान द्वारा सरकार बदलना था परंतु 'पाँच वर्षों तक शोषण और उत्पीड़न सहना और अंत में लोक लुभावन प्रचार तंत्र का मुकाबला करने की कठिनाईयों को देखकर लोहिया जी ने नारा दिया था कि 'बहादुर कौमे पाँच वर्ष तक इंतजार नहीं करती। लेकिन बहादुर कौमे क्या करें? सरकार की सामर्थ्य, उसकी शक्ति, उसका तंत्र, संसद और विधानसभाओं की आडम्बरपूर्ण कार्यषैली का बहादुराना प्रतिरोध कैसे हो सकता हैं''।

उनके जीवन को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि वे हमेशा मजबूत एवं आशावाद एवं नैतिकता पर बल देने वाले रहे। परन्तु दुःख की बात यह है कि राजनीतिक दृष्टि से देखा तो मैं नाकामयाब रहे। नंद चतुर्वेदी जी ने अपने इस आलेख में हीरालाल जी के निवास स्थान का भी जिक्र किया है। नंद चतुर्वेदी की मुलाकात हीरालाल जी से होने के पश्चात उनका जीवन बदल गया। नंद जी ने हीरालाल जी के व्यक्तित्व की भी चर्चा की है। नंद जी अब पार्टी में जाने लगे। ''कांग्रेस का विकल्प समाजवादी पार्टी है लेकिन क्यों? गाँधी का हत्यारा गोडसे है उसकी सांप्रदायिक विचारधारा? पार्टी का स्वरूप कैसा हो, जनाधारित (मास बेस्ड) या कैडर बेस्ड इत्यादि।

''इन्हीं सब प्रसंगों को लेकर और पार्टी के प्रचार के लिए 'जय हिंद' साप्ताहिक निकलने लगा। उसके संपादन का जिम्मा साथी हीरालाल जैन को सौंपा गया''।

कुछ दिनों तक हीरालाल जी जेल में रहे। उन्होंने जेल के जीवन को भी खुश होकर गुजारा परन्तु जेल में रहना अपमानजनक तो होता ही है यह बात भी स्वीकार की। कुछ समय तक वे राजनीति में रहे परंतु बाद में वे राजनीति के दलदल से बाहर निकल गए। वे राजनीति से तो दूर होते चले गए परंतु समानवादी बने रहे और बारे में असमानता, हिंसा, उत्पीड़न आदि के लिए समय–समय पर पत्रिकाओं में लिखते रहे। उनके लेखन में स्पष्टता एवं सरलता होती थी। हीरालाल जी ने हर हाल में, हर परिस्थिति में खुश एवं आशावादी होने का संदेश दिया है।

मुक्ति संग्राम के सिपाही नरेंद्रपाल सिंह चौधरी :–

अतीत राग में नंद चतुर्वेदी ने 104 वर्ष तक जीवन जीने वाले समाजवादी एवं स्वतंत्रता के लिए लड़ने वाले व्यक्तित्व नरेन्द्रपाल सिंह चौधरी के जीवन से सम्बन्धित कई प्रेरणादायक तथ्य हमारे समक्ष रखे। वे गुँजोल जो नाथद्वारा में स्थित है के निवासी थे वे श्रीनाथ जी के लिए वृंदावन से जल लाया करते थे। उस जल को बैलगाड़ियों पर लाते–लाते 6–6 महीने का समय हो जाता था उनके पिता भी उनका यदा–कदा सहयोग करते थे। पच्चीस वर्ष के होते–होते वे राजनीति से जुड़ गए। आजादी के लिए कार्य करने लगे। उनके भाई राजेन्द्र सिंह चौधरी भी उनका स्वतंत्रता से सम्बन्धित कार्य में सहयोग देने लगे। नंद चतुर्वेदी के तांगा चलाते–चलाते ही उन्होंनें स्वतंत्रता के बारे में जाना था। प्रारंभ में वे दोनों भाई स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय रहे। परंतु धीरे–धीरे उनका लक्ष्य समाजवाद हो गया।

नरेन्द्र पाल सिंह, लोहिया, गाँधी जी, जयप्रकाश नारायण जैसे देशभक्तों से अत्यधिक प्रभावित थे। ''अपने द्वारा तैयार किए वृत्तांत में नरेन्द्र जी ने 1928 में साबरमती आश्रम जाने का उल्लेख किया है। दरअसल 1928 से 1948 तक के बीस वर्ष उनके अपने इलाके में सामंती जुल्मों के खिलाफ संघर्षों के वर्ष हैं। देखने की बात यह है कि यह टुकड़ों–तुकड़ों में या रूक–रूक कर हुआ संघर्ष नहीं है, मध्ययुगीन बर्बरता और साम्राज्यवादी कुटिलताओं के साथ चलने वाला लंबा और लगातार संघर्ष है''।

नरेन्द्र पाल सिंह कुछ उग्र स्वभाव वाले थे और इसी स्वभाव के कारण वे कई बार जेल जाने में भी रहे। वे लगभग दस वर्ष तक कांग्रेसी बनकर सक्रिय रहे। वे प्रजामण्डल के सदस्य रहे एवं दण्ड भुगतते रहे। उदयपुर में 11 अक्टूबर 2005 को उन्हे सम्मानित किया गया। वे युवाओं को हमेशा

प्रेरणा देते रहे एवं निडर होकर लक्ष्य प्राप्त करना सिखाते रहे।

इन्हीं के साथ उन्होंने नंद चतुर्वेदी जी ने अतीत राग में राजेन्द्रसिंह चौधरी की भी चर्चा की है जिसमें उन्होंने लाल टोपी वाले राजेन्द्र सिंह चौधरी कहा है। वे स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करते रहे। नंद चतुर्वेदी ने बताया कि राजेन्द्रसिंह चौधरी भी सदैव गैर बराबरी के लिए संघर्ष करते रहे।

हिंदी को समर्पित पिता, पुत्र और पुत्री :–

नंद चतुर्वेदी जी ने अपने कथेतर साहित्य में हिन्दी को समर्पित पिता, पुत्र और पुत्री नामक आलेख में झालरापाटन जो राजस्थान में है, के निवासी थे पं. गिरधर शर्मा 'नवरत्न' ईश्वर लाल एवं शंकुतला ''रेणु' का उल्लेख किया है।

पिता, पुत्र एवं पुत्री हिन्दी भाषा के वर्चस्व प्राप्त करवाने हेतु संघर्ष करते रहे। उनकी कठिन तपस्या का नतीजा हम इन पक्तियों मे दे सकते हैं– ''यह वृत्तांत राष्ट्र भाषा के वर्चस्व के लिए संघर्षरत परिवार का है। उन दिनों का जब अंग्रेजी राज था। देष के असंख्य परिवार हिन्दी के थे। हिन्दी के लिए लड़ते मरते थे। अब देशी सरकारों के समय हिन्दी विदेशी आषा की तरह देखी जा रही है। देशी और राष्ट्रीय सरकारों से अब भारतीय भाषाओं को सम्मानपूर्ण स्थान देने की मांग करने के लिए 14 सितंबर का दिन निश्चित है''।

दृश्य जगत की रंगत बदल देते हैं जैनेन्द्र

नंद जी चतुर्वेदी ने 'दृश्य जगत की रंगत बदल देते है जैनेन्द' में जैनेन्द्र जी से मिलने के लिए भी उन्हें डर लगता था। ''जैनेन्द्र जी अपने पूरे ज्ञान, अनुभव, कर्म, जिज्ञासा, प्रामाणिकता, पूरी जिंदगी और दुनिया दांव पर लगा देते है, जब वह कहते है कि ''मैं मानता हूं''। कोई बहस करना नहीं चाहता है वरना बहस करने वाला दुविधा में पड़ जाता है तब बहस करने वाला चाहता है बहस समाप्त हो जाएं।

''यह करते हैं जैनेंद्रजी , कि पहले वह हमें अपने ही विश्वासों से भिड़ाते है और फिर जैसे इन्हीं संशयों, प्रश्नों और दबावों में से चमत्कारिक लगभग चिढ़ा देने वाले उत्तर निकाल कर बता देते हैं। यह विचार की ताकत होती है, आदमी की नैतिक आंतरिक ताकत। सारे बाहर के घटनाचक्र को आत्मसात करना, उसे होते हुए देखते रहना और परिणाम तक आते–आते घटनाओं के क्रम, उनके स्वभाव, उनके आक्रमण को इस तरह बदल देना कि शब्दों की परिभाषा और दृश्य–संसार की रंगत ही बदल जाये।''

जैनेन्द्र जी की बातचीत से लगता है कि उनकी शास्त्रोक्त भाषा नहीं है। अपने विचारों तथा छोटे–छोटे वाक्यों का प्रवाह उनकी अपनी आविष्कृति भाषा है। इसी भाषा का आक्रण करते हैं। भाषा की रचनात्मकता के कारण अद्वितीय कहे जा सकते है।

''बहुत–सी बातें जैनेन्द जी में : वे आस्था भी है, तर्क भी, आधुनिक भी है, प्राचीन भी, शांति भी हैं, विचलिन भी, शब्द भी हैं, और मौन भी। लेकिन वे एकदम देशी है, अपने जाने–पहचाने और घर के। मनुष्य–चित्त की विविधताओं को तलाश करते हुए ही वे हमें निराशा और गहरे तमस के पार ले जाते हैं और निडर बनाते हैं।''

तरोताजा कमल

नंद चतुर्वेदी ने अतीत राग में तरोताजा कमल को काल माना है जो मनुष्य का मित्र है जिसे कोई नहीं जीतता। किन्तु जीतने वाले अपने प्रवाह की जहरों पर ताजा कमल की तरह तैराता–बहाता शताब्दियों के इस छोर से दबे पांव निकल जाता है। काल को जीत कर व्यक्ति दुनिया के लिए अपरिहार्य हो जाता है।

नंद चतुर्वेदी ने रांगेय राघव को फूल की तरह कोमल न होकर कठोर देखा। ''रांगेय राघव की पुस्तकों–पर–पुस्तकें, ख्याति–पर–ख्याति लेकिन साथ ही निंदा की फुसफुसाहट, तीखी आलोचनाएं। आलोचना का विशय? यही कि वे कागज तोल–तोल कर लिखते हैं, उनमें गहराई कम फैलाव ज्यादा है और ऐसा ही बहुत कुछ जो सामान्यता कहा जाता है लेकिन जो लेखक के व्याप्त होते हुए प्रभाव की साक्षी भी देता है।''

दादाभाई

नन्द चतुर्वेदी कहते है कि दादाभाई के लिए स्कूल प्रबन्धन आनन्दभरा काम था। उसी का परिणाम था कि अध्यापक और विद्यार्थी मिलजुल कर रहते थे। वे बेहतरीन जिन्दगी बनाने का प्रयास करते है। इसी से अध्यापक तथा विद्यार्थी हमें तरोताजा रहते थे और थकान महसूस नहीं करते थे।

नन्द चतुर्वेदी के अनुसार ''मैंने प्रार्थना–सभा पर विस्तार से इसीलिए चर्चा की है कि हमारे स्कूल और शिक्षक

नैतिक शिक्षा पर चाहे जितनी गम्भीरता से बाते करें किन्तु वे नसीहतों, नीतिवचनों और उपदेशों के पुलिंदे होती है। वे भयभत करते है और एक प्रकार के नाटकीय जीवन की ओर आकर्षित करती है। हमारा जीवन अधिक–से–अधिक नैतिकता के पारम्परिक खांचों में फंसा है इसलिए अंतरतम ओर निर्णय की ज्योति कमजोर होती जाती है। विद्याभवन की शिक्षा–नीतियों में नैतिकतापूर्ण आचरण के लिए जो कार्यक्रम तैयार किया था, प्रार्थना–सभा उसकी समझ विकसित करने का सबसे अच्छा उदाहरण थी। दादाभाई के मन में शिक्षा को सौन्दर्य और संवेदनामूलक बनाने का प्रबल आगह था। वे इसी अभिप्राय में विशिष्ट शिक्षाविदों में थे।''

नन्द चतुर्वेदी के दादाभाई के साथ रहने तथा काम करने का समय उत्साह और आनन्द का था। नयी संस्था का स्वरूप एवं रचना बेरोजगार युवकों की संख्या बढ़ाना न होकर शिक्षा को व्यवहार, अनुभव तथा आवश्यकता के साथ जोड़कर नेतृत्व देने वाली पीढ़ी तैयार करना था।

दादाभाई जैसे विनम्र अध्यापक तथा सजग नागरिक, सभ्य एवं विवेकपूर्ण समाज रचना के लिए काम करने वाले सज्जन व्यक्ति जैसे–जैसे दुर्लभ होते जायेंगे हमारे लिए अधिकाधिक सार्थक तथा प्रासंगिक भी होते जायेंगे।

गुणवंत डॉ. महेन्द्र भाणावत

नन्द चतुर्वेदी कहते है कि हम लेखक की जिन्दगी से लेखकीय जिंदगी को अलग नहीं कर सकते हैं। डॉ. महेन्द्र भाणावत पूरी तरह से लोक आदमी है। वह आम लोगों में पूरी तरह से मिले हुए है इसलिए देवी–देवताओं, भूत–प्रेत की कथाओं, जन्म–जन्मान्तर प्रसंगों को आस्थाओं का पक्ष बनाये रहते है।

''देखने की बात यह है कि लोक–साहित्य किसी ठहरे हुए ताल की तरह नहीं है। एक बीच में से जैसे कई अंकुर फूटते हैं। वैसे ही लोक–साहित्य के एक रचना रूप को, एक पद को, एक कथा को कोई भी अतिथि कवि, कथाकार, कीर्तनकार कोई पंक्ति कोई घटना, कोई सुर–ताल देकर आगे बढ़ा देता है। इस तरह एक सनातन सत्य फिर से नये कला–रूप में व्यक्ति होता है।''

लोक जीवन और साहित्य पर दुतरफे हमले जारी है। एक ओर अज्ञान तथा आत्मा–मुग्धता के और दूसरी ओर आधुनिकता। डॉ. भाणावत जैसे लेखक साहित्य को भारतीय–साहित्य का एक अविभाज्य अंग बनाने की कोषिष में लगे रहेंगे जिससे वह 'अजूबा' बन कर न रहे जाये, जिसका कुछ डर दिन–प्रति–दिन गहरा होता जा रहा है।

युवजनों की तरह सपने देखते कमर मेवाड़ी

कमर मेवाड़ी के साथ नंद चतुर्वेदी की पहचान कब हुई याद नहीं लेकिन उनके साथ की बातें, मनोभाव एवं स्मृतियां है। नंद बाबू, महेन्द्र भाणावत और कमर के बीच संवाद होता है। उनमें न राजनीति, न निंदा बल्कि बेहतर दोस्ती है जो ताकत तथा सौन्दर्य दे सके।

तीनों के बीच एक साझा एवं सम्मिलित प्रतिज्ञा ''सुन्दर दुनिया बनाने की जो हमें मिलाती है और एक जैसा रखती है, दिन दिनों की विभिशिकाओं के बीच जब जाति, धर्म, इतिहास, भाषा, संस्कृति और परम्पराओं के बहुत से दुःख देने वाले सवाल हो और लेखक–कवि भी प्रायः इनके बीच और उनके पार्श्व में खड़े हों, जब भोलापन और चतुराई पहचान में न आजे वाले कौशल के साथ आपस में लिपट गई हो और दिल तोड़ती हो।''

कमर की खास ताकत है जो नाम के साथ जुड़ी वह है 'मेवाड़ी'। यह जन्म स्थान का अविछिन्न बोध है। कमर ने पूरी जिंदगी शिक्षा, साहित्य तथा संस्कृति कर्म को दी है। पूरे मेवाड़ तथा राजस्थान ही नहीं बल्कि हिन्दी समाज में कमर का नाम उनमें जो कट्टरतावाद और मजहबी संकीर्णताओं का विरोध करते, में लिया जाता है।

कमर मेवाड़ी ने 'संबोधन' पत्रिका का संपादन–प्रकाशन शुरू किया। ''संबोधन इस देश की धर्मनिरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक विचार षक्ति को फैलाने और मजबूत करने की प्रतिज्ञा से बंधी है। यह कमर की जिद है। मैंने बार–बार उनके पूछा है कि 'सम्बोधन' के प्रकाशन पर कितना खर्च आता है? इसका उत्तर कम कभी नहीं देते। राहुल की प्रसिद्ध पंक्ति है–'भागो मत, दुनिया को बदलो'–पता नहीं दुनिया बदली या नहीं, उस तरह जैसी और जितनी कमर चाहते थे लेकिन वे भागे नहीं। 'सबोधन' के अच्छे–से–अच्छे अंक उन्होंने निकाले। यह बात दूसरी है कि हिंदी समाज के अनेक क्लेशों और चिंताओं से घिरे मन ने, निरक्षरता, दारिद्रय और साहित्य के प्रति उदासीनता से आक्रांत लोगों ने कम को इस पुरूषार्थ के लिए बहुत कम शाबासी दी।''

मां का गांव

नंद चतुर्वेदी जी 'मां का गांव' में गांव की बहुत ही सुन्दर मन मोहक व्याख्या की। मां का गांव जिसका कोई हुलिया नहीं, जहां कोई विद्वान, धनवान, भक्त या सन्त, कवि–कोविद, षूरवीर जिसकी कीर्ति स्वर्णाक्षरों में लिखि गयी हो।

ऐसा गांव जहां गाड़ी रूकते ही रवाना होती थी। स्टेषन से तीन किलोमीटर दूर जहां बैल गाड़ी से आना–जाना होता था। गांव बेड़च नदी के पास बसा है। गांव की जनंसख्या 100 के करीब व पच्चीस–तीस घर है। गांव में सेवाओं के बदले मक्की या गेहूं दिया जाता था।

''गांव में रहते हुए भी, वहां से 'बेदखल' हुए लोग कभी 'राधाबल्लभनाथ' के मंदि तक भी दर्षन के लिए नहीं आते। उनका देवरा, उनके देवता, उनकी आरती, आह्वान, वाद्य हमारे देवता से, मंदिर से, पूजा विधि से एकदम भिन्न थे। संधा आरती के समय मांदल की तेज–तेज आवाज आती और 'घुप्पाड़े' से तीखी गंध निकलती। उनके 'देवरा' का भोपा भभूत देता और मोर–पंखों से सिर पर दो–तीन हल्दे आनन्ददायक प्रहार करता। ये प्रहार देवता की तरफ से मिला आशीर्वाद होते। गांव के किसान दुःख और रोग–मुक्त होने के लिए 'देवरे' पर ही जाते। राधाबल्लभनाथ के मंदिर पर ब्राह्मण ही दर्शनार्थ आते–जाते थे।''

सन्दर्भ सूची :–

1. नन्द चतुर्वेदी, शब्द संसार की यायावरी, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण 1985
2. नन्द चतुर्वेदी, अतीत राग, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2009
3. नन्द चतुर्वेदी, यह हमारा समय, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2012
4. नन्द चतुर्वेदी, आशा बलवती है राजन, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2015
5. नन्द चतुर्वेदी, गा हमारी जिंदगी कुछ गा, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2011
6. नन्द चतुर्वेदी, साहित्य की व्यापक चिंताएँ, साक्षात्कार, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2017
7. नन्द चतुर्वेदी, उत्सव का निर्मम समय, ज्ञानपीठ प्रकाशन, जयपुर, 1994
8. नन्द चतुर्वेदी, मीरा संचयन आलोचना, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 2006
9. नन्द चतुर्वेदी, जो बचा रहा, संस्मरण, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, 2014
10. रामचंद्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संवत् 2015
11. डॉ. नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, न े श ा न ल पब्लिकेशन हाउस, दिल्ली 1971
12. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास, दिल्ली 2020
13. डॉ. शिवप्रसाद सिंह, षिखरों का सेतु, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, 1968
14. डॉ. रामदरश मिश्र, आधुनिक आयाम, वाणी प्रकाशन, दिल्ली 1978
15. डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, समकालीन हिन्दी साहित्य, विविध परिदृश्य, राधा प्रकाशन, दिल्ली 1967
16. डॉ. नवनीत प्रिया शर्मा, हिन्दी कविता का परिदृश्य एवं नंद चतुर्वेदी, अंकुर प्रकाशन, उदयपुर 2005
17. माधव हाड़ा, नंद चतुर्वेदी–साहित्य की व्यापक चिंताएं, संधी प्रकाशन, जयपुर 1987
18. नंद दुलारे वाजपेयी, जयशंकर प्रसाद, भारत, भारती प्रकाशन, इलाहबाद 1958
19. डॉ. नामवर सिंह, आधुनिक साहित्य की प्रवृतियॉ, लोक भारती प्रकाशन, इलाहबाद 1971
20. सुमित्रानंदन पंत, छायावाद पुनर्मूल्यांकन, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, 1958
21. अज्ञेय, तार सप्तक, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली 1942
22. अज्ञेय, दूसरा एवं तीसरा सप्तक, भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली, 1942 एवं, भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली 1970

A Complex Tapestry: The Relationship Between Raju and Rosie in R.K. Narayan's "The Guide"

Pawan Kumar
Assistant Professor
Shri Khushal Das University
Hanumangarh

Ms. Shakshi
Research scholar
Shri khushal das University ,
hanumangarh

Abstract

Rosie and Raju's Relationship in R.K.Narayan's. Rosie and Raju's relationship in R.K. Narayan's "The Guide" is a complex one, characterized by passion, manipulation, and ultimately, betrayal. The aim to showcase the uncertainty and suppression faces by Rosie resulted in a relationship of mutual benefit between Rosie and Raju in the Novel The Guide. Raju and Rosy are deeply engaged in a relationship out of wedlock for the fullfilment of their emotional physical and economical desires.

Keywords : Betrayal ,Live -in relationship, Materialistic

INTRODUCTION

Rasipuram krishnaswami Narayan Swami (R.k. Narayan) was born in Madras as now it's know as Chennai . He is one of the prominent Indian writer in English and the winner of sahitya academy award. He was one of the remarkable try of Indian English writing mulk Raj Anand and Raja Rao begin the other two who showcase their extraordinary talents in Indian English novel writing. R.K. Narayan is regarded as the most superior and influential Indian writer who ruled in the Indian English literary world for more than six decades . Is writing novels are appreciated not only in Indian level as well as it the international level. Is literally creations contains a series of short stories and novels among both common man and their relations as it is an imagine township in Indian named malgudi. He created many literally works during his life as Swami and friends 1935, the bachelor of arts 1937, the financial expert 1952, The English teacher 1945, waiting for the Mahatma 1955, the guide 1958 and many more .

RK Narayan won several awards during his literally career . He he was awarded by Satya academy award for his famous novel the guide and receive the Film fare award for the best story of the guide when a Hindi movie was made on the book directed by Vijay Anand. He was also honoured by the Padma Bhushan during the republic Day honours in 1964. In 1980 he was awarded the AC Benson medal by the British royal society of literature of which he was an honorary member. RK Narayan was also nominated to the Indian parliament for the period of 6 years in 1989 for his contribution to Indian literature. In 20014 is passing away he was awarded with the Padma vibhushan the second highest civil line honour in India.

R.K. Narayan's The Guide is a poignant exploration of human relationships, morality, and spiritual awakening. Central to the novel is the complex and often tumultuous relationship between Raju and Rosie. Their bond, a blend of passion, manipulation, and eventual redemption, offers a fascinating study of the complexities of human nature.

The initial stages of their relationship are marked by a mutual attraction. Raju, a charming but morally ambiguous character, is drawn to Rosie's beauty and artistic talent. He becomes her dance instructor, ostensibly to help her hone her skills. However, his intentions are far from altruistic. Raju, a man of limited means, sees Rosie as a potential source of financial gain and social status. He manipulates her into leaving her husband, Marco, and moving in with him. Initially, Raju is infatuated with Rosie and becomes her dance instructor, but their relationship evolves into a deeper connection as he becomes more involved in her life and the complexities of her marriage to Marco.

While Raju is drawn to Rosie's beauty and talent, he also becomes emotionally attached to her as he helps her navigate the difficulties of her marriage. Their relationship develops, and Raju begins to see Rosie as more than just a student, caring for her deeply. However, their relationship becomes strained as Raju becomes more involved in Rosie's life and begins to manipulate her marriage for his own gain.

This manipulation ultimately leads to a rupture in their relationship as Rosie realizes the extent of Raju's deceit. Their relationship is a significant theme in the novel, highlighting the complexities of human emotions and the consequences of selfish actions. It serves as a cautionary tale about the dangers of manipulation and the importance of honesty and integrity in relationships.

As their relationship progresses, the initial passion begins to wane. Raju's self-serving nature becomes increasingly apparent to Rosie. She realizes that he is more interested in exploiting her talent than in nurturing her as an artist. The once-promising relationship deteriorates, marked by disillusionment and resentment.

A significant turning point in their relationship occurs when Raju, facing a moral crisis, embarks on a spiritual journey. He becomes a revered saint, gaining the respect and admiration of the people. This transformation, however, is not without its irony. Raju, who once sought material gain and personal glory, now finds himself in a position of spiritual authority.

Rosie, initially skeptical, is eventually drawn to Raju's newfound spiritual power. She sees in him a man who has undergone a profound transformation. Their relationship, once fraught with tension and mistrust, now takes on a different dimension. It is a relationship based on mutual respect and understanding.

Initially Raju provides a new lease of life to Rosy by encourage her to pursue her present in eventually he gets romantically interested in Rosie. But later he becomes dependent on her emotionally as well as financially. 166 Rosy uppers a great dancer he indulges luxurious living. when money starts pouring in Raju's attitude and possessive instinct detaches Rosie from him .He could never manage to put anything ahead of his greed .When Rosie disapproved his constant demand for money ,Raju forges Rosie's signature on some documents sent by Macro and is jailed .Rosie releases him after three days imprisonment on a bail of ten thousand rupees. Now she asks Raju to forget her .she never comes back to Raju and settled neither Macro nor Raju for her fulfilment as a dancer ,and she eventually chose her independence.

Conclusion

The relationship between Raju and Rosie is a microcosm of the larger themes explored in The Guide. It is a tale of love, betrayal, redemption, and the human capacity for both good and evil. Through their complex and evolving relationship, Narayan offers a nuanced exploration of the human condition and the enduring power of spirituality. Hence , research scholar comes to the point that is also true to her lover. In spite of the forgery Rosy does not desert Raju. Do Rosy comes to know about every treacherous and fraud activity of Raju, see compromises with the situation. Instead of punishing Raju for his deceit , she is determined like a true be loved to spend every penny that she is arranging a capable defense for Raju she has earlier decided to give up dancing as a profession. She signs fresh dancing contracts to raise to money for this purpose. To conclude, we can see that Narayan humour does not result from distortion and exaggeration. It shows in observation of the common man weakness follies and fables.His humor is varied and all pervasive .The reminiscence of Raju make the Novel realistic as well as suspenseful .The flashback technique aroused the curiosity and the interest of the reader.

REFERENCES

1. M.k. Naik .New Delhi : Macmillan,1979.
2. Narasimiah ,C.D. "R.K. Narayan's The Guide" rpt in Aspects of Indian Writing in English .Ed.
3. A History of Indian English Literature.Delhi sahitya Academy ,1982.
4. Narayana ,R.k. The Guide ,1958.Mysore : Indian thought Publications,1987.
5. My Days : A Memoir .New Delhi : Orient paperback ,Hariprassana.A,
6. The world of Malgudi : A study of R.k.Narayana's Novels ,New Delhi : Prestige Books ,1994.

Legal Barriers and Ethical Dilemmas: A Study on Intellectual Property Challenges in E-Content Development

Yudhisthar
Research Scholar,
Department of Law,
Shri Khushal Das University,
Pillibanga, Hanumangarh

Dr. Navdeep Dadhich
Department of Law,
Shri Khushal Das University,
Pillibanga, Hanumangarh

Abstract

The digital revolution has greatly transformed how content is created, shared, and consumed. While this transformation has empowered creators, it has also given rise to significant legal and ethical challenges, particularly concerning Intellectual Property Rights (IPR) in the realm of e-content development. This paper explores the barriers to effective IPR enforcement in digital content, such as copyright violations, piracy, and the limitations of existing legal frameworks. Additionally, the paper discusses the ethical dilemmas creators face when balancing content protection with the desire for openness and accessibility. Through case studies, this paper provides insights into how various stakeholders in the digital ecosystem-such as educators, content creators, and consumers-navigate these issues. Recommendations for a balanced approach to IPR protection and innovation are proposed, including emerging technologies and policy improvements.

Introduction

The shift from traditional content formats to digital has revolutionized the way we create, share, and consume information, making e-content-such as multimedia, digital documents, software, e-books, and online resources-the primary medium for knowledge dissemination globally. This transition has opened up vast opportunities for creators to reach wider audiences and for consumers to access content at their fingertips. However, this increased ease of access has also led to significant challenges, particularly in the realm of intellectual property rights (IPR). Unlike traditional media, digital content can be copied, modified, and shared without degradation in quality, making it particularly vulnerable to unauthorized use and piracy. Intellectual Property Laws, which were originally designed to protect tangible works, often fall short in addressing the complexities of the digital space. The intangible nature of digital content complicates enforcement, as traditional copyright frameworks struggle to keep pace with the rapid evolution of technology. This paper examines the legal barriers that hinder the effective protection of digital content and explores the ethical dilemmas that arise for creators, consumers, and legal systems in the context of the digital landscape. By exploring these challenges, we seek to understand the tension between the protection of creators' rights and the desire for wider access to information and creativity.

Objectives of the Study:

1. To examine the existing intellectual property laws applicable to e-content development at national and international levels.
2. To identify common legal barriers faced by content creators, educators, and developers in the digital environment.
3. To analyze ethical dilemmas involved in the use, reuse, and adaptation of digital content.
4. To evaluate the effectiveness of copyright protection mechanisms in safeguarding digital educational resources.

5. To explore the impact of digital rights management (DRM) on accessibility and innovation in e-content.
6. To assess awareness and compliance levels among e-content developers regarding intellectual property rights (IPR).

Literature Review

Lessig (2004) in Free Culture critiques the traditional copyright system, which was designed to protect tangible media, but fails to address the challenges of digital content that can be copied infinitely without degradation. He argues that the existing system restricts access to knowledge and stifles creativity. Lessig advocates for a shift toward open access and fair use, enabling the free flow of information while still respecting creators' rights. He calls for a more flexible approach that allows creators to share their work freely, while ensuring they are fairly compensated and their rights are protected in the digital age.

Ghosh (2020) examines the significant challenges that emerging economies, particularly India, face in adapting their Intellectual Property Rights (IPR) laws to the rapidly evolving digital landscape. As digital content creation and consumption increase, traditional IPR laws, designed for physical media, are becoming increasingly ineffective in addressing the unique nature of digital content, such as its ease of duplication and global distribution. Ghosh highlights the knowledge gaps in IPR enforcement, especially in developing countries where many creators lack awareness of their rights and the tools available to protect their works. This leads to inadvertent infringements and weak enforcement. He argues that existing legal frameworks need significant reform to address the challenges posed by digital content, including issues related to cloud storage, streaming, and online platforms.

World Intellectual Property Organization (WIPO, 2022) highlights the growing need for international cooperation in protecting copyright and related rights in the digital space. With digital content easily shared across borders, WIPO emphasizes the importance of harmonizing IPR laws and enhancing enforcement to combat cross-border piracy. The organization advocates for a global approach to ensure creators' rights are protected while promoting access and innovation, stressing the role of international treaties like the Berne Convention in safeguarding creators worldwide.

The Digital Shift and E-Content

Defining E-Content

E-content encompasses all forms of material that are created, stored, and distributed in digital formats, including multimedia, text documents, software applications, e-books, and online educational resources. The growing use of digital platforms has made it easier for individuals and organizations to create, access, and share content on a global scale. While this shift has enhanced learning, communication, and innovation, it has also introduced complex challenges related to intellectual property rights (IPR). The ease of duplication and rapid distribution often makes digital content vulnerable to unauthorized use, piracy, and copyright infringement, raising critical concerns about how such content can be effectively protected.

The Rise of Digital Platforms

Platforms like Google Books, YouTube, and SWAYAM have revolutionized content distribution, enabling creators to reach global audiences effortlessly. However, this widespread accessibility also escalates the risk of digital piracy, as users can easily upload and share content without authorization. The borderless nature of the internet further complicates the enforcement of Intellectual Property Rights (IPR), as infringing content can quickly cross international boundaries, often beyond the reach of national laws. Additionally, the anonymity provided by the internet allows infringers to mask their identities, making it challenging for authorities to trace and prosecute violations effectively. These factors underscore the need for

international cooperation and harmonized legal frameworks to address the complexities of IPR enforcement in the digital era.

Legal Barriers in E-Content Protection

Ineffective Legal Frameworks

One of the primary challenges in digital content protection is that traditional IPR laws are often not equipped to deal with the complexity and speed of the digital world. Copyright infringement and piracy can occur rapidly across digital platforms, and legal systems often lag behind technological advancements. Moreover, the vague provisions in existing copyright laws, such as fair use, create uncertainty about how digital content can be used, shared, and distributed legally.

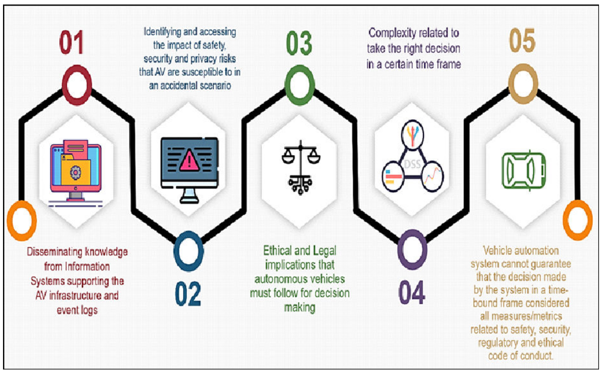

Figure: Legal Barriers in E-Content Protection

Enforcement Challenges

Enforcing IPR in a digital environment is particularly challenging due to the borderless nature of the internet. Online piracy can occur from any location worldwide, making it difficult for copyright holders to pursue legal action across jurisdictions. The inability of many legal systems to keep up with these issues results in significant gaps in protection for creators, which leaves valuable content vulnerable to misuse.

Ethical Dilemmas in E-Content Creation

Balancing Protection with Accessibility

One of the ethical challenges faced by creators, especially in the education sector, is finding a balance between protecting their intellectual property and making content accessible to a wider audience. For instance, educational platforms like SWAYAM use open licenses to provide free access to learning resources, which helps democratize education. However, this model often faces tensions between ensuring access for learners and protecting the rights of content creators.

The Ethics of Digital Piracy

Digital piracy raises significant ethical questions. On one hand, the unauthorized distribution of content is an infringement of creators' rights. On the other, pirated content may serve as a means of accessing knowledge in regions or communities where original content is inaccessible due to high costs or geographic limitations. This creates a moral dilemma between respecting creators' rights and addressing global inequalities in access to education and information.

Emerging Solutions and Technologies

Digital Rights Management (DRM) and Watermarking

Digital Rights Management (DRM) and watermarking are commonly used technologies to safeguard digital content from unauthorized access and distribution. DRM restricts how digital files can be used, copied, or shared, while watermarking embeds visible or invisible marks to track content ownership. Although these tools provide a level of protection for creators, they are often criticized for being overly restrictive. In educational and collaborative environments, DRM can limit fair use, impede accessibility, and interfere with legitimate sharing of content. Additionally, both DRM and watermarking can be bypassed or removed by skilled users, highlighting the need for more balanced and user-friendly approaches to digital content protection.

Blockchain for IPR Protection

Blockchain technology offers a promising solution for protecting Intellectual Property Rights (IPR) by creating immutable and transparent records of ownership. By registering works on a decentralized ledger, creators can prove authorship

and prevent unauthorized usage. Blockchain also enables smart contracts to automate licensing agreements and ensure royalty payments. While challenges remain, such as adoption and integration with existing systems, blockchain provides a secure, transparent way to manage and protect digital content in the global marketplace.

Case Studies

Google Books vs. Authors Guild (U.S.)

The Google Books case (Authors Guild v. Google Inc.) centered on Google's digitization of millions of books and whether it violated copyright law. The Authors Guild argued that Google's actions infringed on authors' rights, but the court ruled in favor of Google. The court emphasized that the digitization and indexing of books provided significant research and educational value by making content searchable and accessible, thus justifying the use under fair use provisions. The decision highlighted the role of fair use in promoting public access to knowledge in the digital age.

Indian E-Learning Platforms: SWAYAM

SWAYAM (Study Webs of Active-Learning for Young Aspiring Minds) is India's flagship government initiative to provide free online education across all levels-from school to postgraduate studies. Launched by the Ministry of Education, SWAYAM offers over 2,000 courses developed by esteemed Indian universities and faculty, making quality education accessible to learners across the country to ensure the quality of courses, SWAYAM collaborates with various institutions and experts to develop and offer these courses. The platform has seen significant engagement, with over 2.5 crore (25 million) registered users, demonstrating its widespread adoption and impact on democratizing education in India.While SWAYAM has made significant strides in providing accessible education, it faces challenges such as the digital divide, quality control, and student engagement. Addressing these issues is crucial to ensure that the platform continues to serve its purpose of providing quality education to all learners, regardless of their geographical location or socio-economic background

Conclusion

The digital age presents both significant opportunities and challenges for intellectual property protection in e-content development. While digital technologies empower creators and educators by expanding their reach, they also introduce complex legal and ethical issues. To protect digital content while fostering innovation and collaboration, there is a need for updated legal frameworks, increased awareness, and the adoption of emerging technologies like blockchain and AI. As digital content continues to evolve, so too must the systems that protect it, ensuring that creators can benefit from their works while maintaining the openness necessary for global knowledge sharing.

References

1. Lessig, L. (2004). Free Culture. Penguin Press.
2. Ghosh, A. (2020). IPR Challenges in India's Digital Ecosystem. NALSAR Law Review.
3. World Intellectual Property Organization. (2022). Copyright and related rights. Retrieved from https://www.wipo.int/copyright/en/
4. Goldstein, P. (2017). International copyright: Principles, law, and practice (4th ed.). Oxford University Press.
5. Koller, D. (2019). The digital content dilemma: Balancing access and protection. Journal of Digital Rights, 15(2), 45-58.
6. Samuelson, P. (2006). Digital copyright in the information economy. Berkeley Technology Law Journal, 21(3), 1041-1072.
7. Hall, M. (2018). Copyright in the age of digitization: A global perspective. International Journal of Digital Law, 12(1), 88-104.
8. Sood, A. (2021). Intellectual property rights in India: Challenges and opportunities in the digital space. Indian Journal of Law and Technology, 9(2), 123-139.

हिन्दी व गणित विषय में कक्षा पाँच तक न्यूनतम अधिगम स्तर के अन्तर्गत निर्धारित दक्षताओं का जोधपुर शहर के सरकारी व निजी विद्यालयों के कक्षा-6 के विद्यार्थियों के सन्दर्भ में तुलनात्मक अध्ययन

सुनीता व्यास
शोधार्थी,
मौलाना आजाद विश्वविद्यालय,
जोधपुर

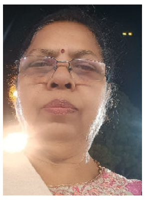

डॉ. माधुरी दत्ता
पर्यवेक्षक
मौलाना आजाद विश्वविद्यालय,
जोधपुर

मनुष्य के जीवन में जितना महत्त्व भोजन, कपड़े, हवा और पानी का है, उससे कहीं अधिक महत्त्व शिक्षा का है इसीलिए हमेशा यह कहा जाता है कि शिक्षा का मानव जीवन में बहुत महत्त्व है। शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम है जिससे मनुष्य में ज्ञान का प्रसार होता है। मनुष्य की बुद्धि का विकास शिक्षा अर्जित करने से ही होता है। शिक्षा मानव जीवन की एक महत्त्वपूर्ण इकाई है।

शिक्षा हम सभी के उज्ज्वल भविष्य के लिए एक बहुत ही आवश्यक साधन है। हम अपने जीवन में शिक्षा के इस साधन का उपयोग करके कुछ भी अच्छा प्राप्त कर सकते हैं। शिक्षा का उच्च स्तर लोगों को सामाजिक और पारिवारिक सम्मान तथा एक अलग पहचान बनाने में मदद करता है। शिक्षा के द्वारा बालक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास होता है। व्यक्ति के विकास से परिवार, समाज और राष्ट्र का विकास होता है।

शिक्षा का प्रभाव समस्त संसार में स्पष्ट परिलक्षित है। अनंत काल से मनुष्य कुछ न कुछ सीखता रहा है और उसी परिवर्तन के परिणामस्वरूप आज सभ्यता के इस उच्च शिखर पर पहुंच पाया है। शिक्षण द्वारा ही मनुष्य के आचार विचार परिवर्तित होते हैं। परिवर्तन ही जीवन है, इसलिए शिक्षा जीवन तथा उसके उन्नति का आधार है।

प्रत्येक बालक इस संसार में जन्म के समय असहाय अवस्था में होते हुए भी शिक्षा का आधार पाकर धीरे–धीरे पूर्ण विकसित सामाजिक प्राणी बन जाता है तथा अपनी अर्जित योग्यता से प्रकृति तक पर विजय प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील होता है। केवल मनुष्य ही नहीं समस्त प्राणी समाज शिक्षा के बल पर अपना अस्तित्व बनाए हुए हैं। बिल्ली जब अपने बच्चों को चूहे पकड़ने की सीख देती है और चिड़िया जब अपने नन्हे–मुन्नो को घौसले से बाहर निकल कर दाना चुगने के लिए प्रेरित करती है तो शिक्षा का महत्व और उसकी व्यापकता समस्त पशु–पक्षी समाज पर स्थापित हो जाती है।

रूसो ने शिक्षा की परिभाषा देते हुए लिखा है कि– 'बालक की स्वाभाविक शक्तियाँ तथा योग्यताओं का आंतरिक विकास करना ही शिक्षा है।'

रुसो के अनुसार शिक्षा का अर्थ केवल सूचना देना नहीं वरन् बालक का मनुष्य के रूप में निर्माण करना है। शिक्षा से आशय विभिन्न अंशों व शक्तियों के स्वाभाविक विकास से है। यह स्वाभाविक विकास तब तक नहीं हो सकता जब तक कि शिक्षा शिक्षार्थी की प्रवृत्तियों तथा आवश्यकताओं को नहीं समझती। इसके लिए बालक के स्वभाव का अध्ययन आवश्यक है।

मनुष्य की क्षमता और गुणों का विकास शिक्षा पर निर्भर करता है। अतः मानव समाज का भूत, वर्तमान और भविष्य जितना शिक्षा से जुड़ा है उतना और किसी से नहीं। परंतु बढ़ती हुई जनसंख्या ने प्रत्येक क्षेत्र में समस्याएं बढ़ाई हैं। यह समस्या शिक्षा के क्षेत्र में बहुत अधिक मात्रा में है। आज शिक्षा के क्षेत्र में जो समस्याएं हैं वह 50 वर्ष पूर्व नहीं थी। आज कक्षा में छात्रों की संख्या में वृद्धि हुई है। कक्षा आकार में वृद्धि होने से अध्यापक के लिए भी संभव नहीं है कि वह हर छात्र पर बराबर ध्यान दें सके।

प्राचीन काल में गुरुकुलों में छात्रों की संख्या कम हुआ करती थी जिससे गुरुओं का सम्पूर्ण ध्यान सभी शिष्यों पर समान रहता था तथा सभी शिक्षार्थी न्यूनतम अधिगम स्तर को प्राप्त करते थे। छात्रों पर बराबर ध्यान देने न देने का छात्रों की अधिगम उपलब्धि पर प्रभाव पड़ता है। इसके

अतिरिक्त अध्यापक चाहता है कि छात्र कम से कम इतना ज्ञान उपलब्ध कर लें कि उसमें और छात्रों द्वारा वस्तुस्थिति में प्राप्त ज्ञान में भी अंतर हो द्य कक्षा में छात्रों की संख्या अधिक होने के कारण अध्यापक के प्रयास भी सफल नहीं हो पाते हैं।

आज प्रत्येक शिक्षक यह अनुभव करता है कि छात्र को एक स्तर पर उतना ज्ञान अवश्य ही प्राप्त कर लेना चाहिए जितना उस स्तर तक के लिए आवश्यक है। लेकिन शिक्षकों के अथक प्रयासों के बाद भी छात्र एक निश्चित स्तर पर उतना ज्ञान प्राप्त करने में असमर्थ रहते हैं जितना उस निश्चित स्तर के लिए आवश्यक है। प्रत्येक स्तर के अध्यापक चाहे वह प्राथमिक स्तर का हो, उच्च प्राथमिक का हो या माध्यमिक स्तर का हो एक दूसरे पर दोषारोपण करते हैं कि अमुख स्तर के अध्यापक ने छात्रों को कुछ सीखाया ही नहीं।

कई अध्ययनों और अनुसंधानों की रिपोर्ट देखने से यह ज्ञात होता है कि प्राथमिक स्तर पर छात्रों का उपलब्धि स्तर काफी निम्न होता है। उदाहरण के लिए इस स्तर के कई छात्र न केवल वर्णमाला से अनभिज्ञ होते हैं, बल्कि बोलने और पढ़ने में भी कमजोर होते हैं। यही समस्या गणित विषय में भी है। गिनती, जोड़, घटाना आदि भी छात्रों को अच्छी तरह से नहीं आता है द्य ऐसा भी देखा गया है कि कक्षा द्वितीय तक के कई छात्र ऐसे होते हैं जो 1 से 100 तक की कई संख्या को नहीं पहचानते हैं। गुणा, भाग, जोड़, बाकी आदि तो कक्षा चतुर्थ तक के कई छात्र सही नहीं कर सकते हैं। यही कारण है कि गणित और भाषा जैसे महत्वपूर्ण विषयों में छात्रों की नींव कमजोर होने के कारण यह समस्या उच्च स्तर पर और अधिक बढ़ जाती है।

दैनिक जीवन की समस्याओं के समाधान में गणित विषय का विशेष स्थान है। गणित शिक्षण का प्राथमिक स्तर का प्रमुख उद्देश्य बालकों को दैनिक जीवन से संबंधित समस्याओं को शुद्धता और शीघ्रता के साथ हल करने योग्य बनाना है। भाषा शिक्षण में प्राथमिक स्तर का प्रमुख उद्देश्य सुनना, बोलना, पढ़ना व लिखना इन कौशलों का विकास करना है।

प्राथमिक स्तर का निम्न उपलब्धि स्तर शिक्षकों, अभिभावकों, शिक्षा शास्त्रियों आदि के लिए चिंता का विषय है द्य प्राथमिक स्तर का निम्न उपलब्धि स्तर प्राथमिक स्तर की शैक्षिक व्यवस्था के लिए चुनौती है द्य प्राथमिक स्तर के उपलब्धि स्तर को सामान्य करने के लिए शिक्षाशास्त्री काफी प्रयत्नशील है। गणित शिक्षण का प्राथमिक स्तर पर एक प्रमुख उद्देश्य बच्चों को अंकीय एवं स्थानिक समस्याओं को शुद्धता एवं शीघ्रता के साथ हल करने योग्य बनाना है जिसका सामना वे अपने घर, समुदाय एवं विद्यालय में करते हैं। इस स्तर पर प्राथमिक गणित ऐसा होना चाहिए जो बच्चों में अपने भौतिक एवं तात्कालिक पर्यावरण से प्राप्त अनुभवों के आधारभूत गणितीय प्रतियों की समझ के विकास में सहायक हो सके और स्थूल से सूक्ष्म एवं सामान्य से विशिष्ट की ओर ले जाकर बच्चों में समझ विकसित कर सके।

अतः प्राथमिक स्तर पर गणित का पाठ्यक्रम निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए होना चाहिएरू— शीघ्रता एवं शुद्धता से गणना करने की योग्यता, सही मापों का अनुमान लगाने एवं आंकलन करने की योग्यता, तार्किक ढंग से सोचने की योग्यता तथा क्रम एवं आकार पहचानने की योग्यता।

इसी तरह हिंदी भाषा का प्राथमिक स्तर पर एक मुख्य उद्देश्य यह होना चाहिए कि बच्चों में श्रवण व उच्चारण कौशल के साथ पठन व लेखन कौशल का भी विकास हो सके। जिससे वह दूसरों की कही बात सही प्रकार सुने, अपनी बात भली प्रकार कहे तथा लिखित सामग्री को पढ़कर अपने विचार मौखिक व लिखित दोनों रूप में प्रकट कर सकें।

सीखने के स्तर को ऊंचा उठाने की दिशा में राष्ट्रीय स्तर पर चिंतन के साथ—साथ कुछ कार्यक्रम भी चलते रहे हैं। शिक्षा आयोग (1964— 66) ने इस बात पर बल दिया है कि सभी स्कूलों के शिक्षार्थियों का सीखने का एक निर्धारित स्तर अवश्य होना चाहिए।

1986 की राष्ट्रीय नीति आजादी के बाद शिक्षा के इतिहास में एक अहम् कदम थी। उसका उद्देश्य राष्ट्र की

प्रगति को बढ़ाना तथा सामान्य नागरिकता व संस्कृति और राष्ट्रीय एकता की भावनाओं को सुदृढ़ करना है। उसमें शिक्षा को ऊंचा उठाने पर जोर दिया गया था।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) में प्राथमिक शिक्षा पाठ्यक्रम नवीकरण के अंतर्गत 1978 में एक परियोजना आरंभ की गई थी जिसमें विभिन्न राज्यों ने भी भाग लिया था। उस परियोजना में न्यूनतम अधिगम स्तर का निर्धारण करके शिक्षार्थियों में सीखने के स्तर में सुधार के लिए विस्तार से कार्य किया गया।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में स्पष्ट शब्दों में इस बात पर जोर दिया गया है कि सीखने का न्यूनतम स्तर (न्यूनतम अधिगम स्तर) जल्दी ही तय किया जाए और उसे प्राप्त करने के लिए व्यवस्थित रूप से प्रयास किए जाएं। शिक्षा नीति 1986 को लागू करने के लिए जो कार्यक्रम बनाए गए उनमें से एक कार्यक्रम न्यूनतम अधिगम स्तर का है। इस नीति का अनुसरण करते हुए एनसीईआरटी ने 'प्राथमिक स्तर पर न्यूनतम अधिगम स्तर' शीर्षक से एक दस्तावेज भी तैयार किया।

भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय के शिक्षा विभाग ने प्राथमिक स्तर पर न्यूनतम अधिगम स्तर के निर्धारण के लिए 5 जनवरी 1990 के आदेश संख्या 74/3/89 डस्क (टी ई) द्वारा एक समिति का गठन किया जिसमें अपनी रिपोर्ट 1991 के आरंभ में प्रस्तुत की।

अब तक हुए अनेक शोधों के निष्कर्ष से यह सामने आता है कि प्राथमिक स्तर पर ज्ञान ऐसा हो जिसकी जानकारी सभी छात्रों को होनी चाहिए। उसमें शत प्रतिशत अंक आने आवश्यक हो। फिर ऐसा ना हो कि 36% वाला पास 45% वाला द्वितीय और 60% वाला प्रथम हो। जो छात्र को कम से कम सीखना है, उसमें छात्र के 100% अंक ही आने चाहिए। उदाहरण स्वरूप भाषा विषय के लिए यदि पूरी वर्णमाला की जानकारी छात्रों को होनी चाहिए तो उसमें छात्रों के शत प्रतिशत अंक आने ही चाहिए। इसी प्रकार गणित विषय में 1 से 100 तक गिनती या संख्याओं को पहचानना आना चाहिए तो छात्रों को इसकी पूरी जानकारी होनी चाहिए। यही निम्नतम सीखने का स्तर है और जो भी निम्नतम स्तर निर्धारित किया जाए उसकी जानकारी होने पर ही उसे अगली कक्षा में प्रवेश दिया जाए।

इसी को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.)द्वारा प्राथमिक स्तर पर न्यूनतम अधिगम स्तर कार्यक्रम के तहत् निम्नतम स्तर का निर्धारण किया है। शोधकर्ता के इस समस्या को चुनने का यही कारण है कि निर्धारित न्यूनतम अधिगम स्तर में छात्र कहाँ तक अधिगम करता है। सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों में इसकी प्राप्ति कहाँ तक हो पाई है उसका अध्ययन करने के लिए इस समस्या को चुना गया है।

शोध के उद्देश्य

प्रस्तुत शोध के निम्न उद्देश्य हैः–

1.सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के हिंदी विषय में न्यूनतम अधिगम स्तर का पता लगाना।

2.सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के गणित विषय में न्यूनतम अधिगम स्तर का पता लगाना।

3.निजी विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों के हिंदी विषय में न्यूनतम अधिगम स्तर का पता लगाना।

4.निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के गणित विषय में न्यूनतम अधिगम स्तर का पता लगाना।

5.सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र–छात्राओं के हिन्दी विषय में न्यूनतम अधिगम स्तर की तुलना करना।

6.निजी विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र–छात्राओं के गणित विषय में न्यूनतम अधिगम स्तर की तुलना करना।

परिकल्पना :–

प्रस्तुत शोध में शोधकर्ता ने निम्न परिकल्पनाएं निर्मित की हैं:–

– सरकारी व निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के हिन्दी विषय में न्यूनतम अधिगम स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं होगा।

– सरकारी व निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के गणित विषय में न्यूनतम अधिगम स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं होगा।

– सरकारी व निजी विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र–छात्राओं के न्यूनतम अधिगम स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं होगा।

शोध की सीमा

– समस्या को जोधपुर शहर के विद्यालय तक सीमित रखा गया है।

– जिसमें 4 सरकारी और 4 निजी विद्यालयों को सम्मिलित किया गया है।

जिला	जोधपुर
विद्यालय का प्रकार	राजकीय और निजी

न्यादर्श

राजकीय व अराजकीय विद्यालय संख्या संबंधी न्यादर्श

क्र.सं.	प्रकार (कक्षा–6के विद्यार्थी)	संख्या
1.	सरकारी	300
2.	निजी	300
	कुल	**500**

शोध विधि

शोध में शोधकर्ता ने प्राथमिक स्तर पर हिंदी व गणित में न्यूनतम अधिगम स्तर का अध्ययन करने के लिए सर्वेक्षण विधि का चयन किया है क्योंकि शोध समस्या के लिए यह पूर्णतः उपयुक्त विधि है।

शोध में प्रयुक्त उपकरणः–

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य कक्षा 6 में अध्ययनरत विद्यार्थियों के हिंदी व गणित विषय में न्यूनतम अधिगम स्तर का पता लगाना है। इस हेतु हिंदी व गणित विषय पर स्वनिर्मित प्रश्न पत्र तैयार किया गया।

प्रदतों का विश्लेषण

प्रस्तुत अध्ययन के निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुएः–

परिकल्पना नंबर 1– सरकारी व निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्याथियों के गणित विषय में न्यूनतम अधिगम स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं होगा।

प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि दोनों प्रकार के विद्यालयों के छात्रों के गणित अधिगम स्तर में 'सांख्यिकीय रूप से महत्त्वपूर्ण अंतर पाया गया है। अतः अध्ययन में निर्मित परिकल्पना संख्या–1 अस्वीकृत है ।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि सरकारी और निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों के गणित अधिगम स्तर में निजी विद्यालय के विद्यार्थी आगे है।

परिकल्पना नंबर 2– सरकारी व निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्याथियों के गणित विषय में न्यूनतम अधिगम स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं होगा।

टी–परीक्षण के अनुसार, 17 कौशलों में सरकारी और निजी विद्यालयों के बीच अधिगम स्तर में ''सार्थक अंतर'' पाया गया।

काई– परीक्षण के अनुसार, 15 कौशलों में ''सार्थक अंतर'' था।

उपरोक्त परिणामों से यह स्पष्ट होता है कि :

– अधिकांश कौशलों में शून्य परिकल्पना स्वीकार होती है, अर्थात् सरकारी व निजी विद्यालयों के बीच हिन्दी विषय में न्यूनतम अधिगम स्तर में कोई सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण अंतर नहीं है।

– कुछ विशिष्ट कौशलों में अंतर ''सार्थक'' है, जो संकेत करता है कि उन क्षेत्रों में सरकारी विद्यालयों को अतिरिक्त सहयोग या रणनीति परिवर्तन की आवश्यकता हो सकती है। अतः अध्ययन में निर्मित परिकल्पना संख्या–2 अस्वीकृत है ।

परिकल्पना नंबर 3– सरकारी व निजी विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र–छात्राओं के न्यूनतम अधिगम स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं होगा।

प्राप्त निष्कर्षों के अनुसार X^2 मान 0.05 है, जो कि 5% स्तर पर स्वीकृत X^2 मान (3.84) से काफी कम है। अतः परिकल्पना नम्बर– 3 को स्वीकृत है ।

निष्कर्षतः 'सरकारी और निजी विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र–छात्राओं के न्यूनतम अधिगम स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया है।' यह परिणाम दर्शाता है कि विद्यालय के प्रकार (सरकारी अथवा निजी) से छात्रों के न्यूनतम अधिगम स्तर में कोई महत्वपूर्ण भिन्नता उत्पन्न नहीं होती है। दोनों प्रकार के विद्यालयों के छात्र–छात्राएँ न्यूनतम अधिगम स्तर पर तुलनीय प्रदर्शन कर रहे हैं।

Price Fluctuations and Consumer Behavior: A Microeconomic Study of India's Domestic Trad

Dr. Reena
Assistant Professor,
Dept. of Economics,
Shri Khushal Das University,
Pillibanga, Hanumangarh

Arnika Bishnoi
Research Scholar,
Dept. of Economics,
Shri Khushal Das University,
Pillibanga, Hanumangarh

Abstract

This paper explores the relationship between price fluctuations and consumer behavior in India's domestic trade, focusing on how microeconomic factors influence price movements and shape consumption patterns across different sectors. We analyze the effects of supply-side factors (like production costs and market structure) and demand-side factors (such as income levels, preferences, and regional disparities) on domestic prices. The paper also investigates the role of government policies, infrastructural inefficiencies, and regional market conditions in shaping price dynamics. Through a combination of theoretical models and empirical data analysis, this study contributes to understanding the microeconomic underpinnings of price fluctuations and their impact on consumer choices in India's domestic trade.

Introduction

India's domestic trade plays a critical role in the country's economy, driven by a complex interplay of supply and demand forces. Price fluctuations are an inherent feature of market economies, and in India, these fluctuations have significant effects on both producers and consumers. This paper investigates the key microeconomic factors behind price changes in India's domestic markets and examines how these fluctuations influence consumer behavior.

The study takes into account the impact of market structure, infrastructure, government policies, and regional disparities in shaping both price movements and consumption patterns.

Given the diversity of India's economy, regional variations are also a focal point of this analysis.

Objectives of the Study

The primary objectives of this study, titled "Price Fluctuations and Consumer Behavior: A Microeconomic Study of India's Domestic Trade," are as follows:

1. To analyze the factors contributing to price fluctuations in India's domestic trade: This objective aims to identify and examine both supply-side and demand-side factors that cause price changes in various sectors of the Indian economy, particularly focusing on agricultural products, fuel, and essential commodities.
2. To assess the impact of price fluctuations on consumer behavior: The study will explore how Indian consumers respond to price changes in different sectors, considering factors like income, regional disparities, and consumption preferences. It will also investigate how price volatility affects consumer purchasing power and decision-making.
3. To evaluate the role of government policies in mitigating or exacerbating price fluctuations: This objective seeks to assess the effectiveness of government interventions such as price controls, subsidies, minimum support prices (MSP), and taxation policies (e.g., GST) in stabilizing or influencing price movements in India's domestic markets.

4. To explore the regional variations in price fluctuations and consumer behavior: The study will examine how regional factors—such as infrastructure quality, market structure, and local economic conditions—affect price fluctuations and influence consumer behavior in different parts of India.

5. To investigate the relationship between infrastructure development and price stability: The objective here is to explore how infrastructure improvements, such as better transportation networks and storage facilities, contribute to reducing price volatility and enhancing market efficiency.

Limitations of the Study

o The study relies on secondary data from various sources such as government reports and market surveys.

o There may be discrepancies or gaps in the data, particularly in rural areas, where reliable information is harder to obtain.

o Limited availability of high-quality, real-time price data across different regions could affect the generalizability of results.

o India's vast diversity in terms of geography, economic development, and infrastructure could lead to significant regional variations in consumer behavior and price fluctuations.

o The study may not capture every region's unique characteristics, especially in underrepresented or less-studied areas.

o The study focuses on microeconomic factors but does not fully account for external factors like international trade, global commodity prices, and global economic crises that also influence domestic price fluctuations and consumer behavior.

o The data and analysis are limited to a specific time frame, potentially missing out on long-term trends or seasonal changes in price fluctuations.

Literature Review

Agarwal (2019) explored how market structures, such as monopolistic and oligopolistic markets, influence price formation and competition in India's domestic markets. In his study, Agarwal analyzed the varying degrees of competition present in different sectors of the Indian economy and how these structures affect both the behavior of producers and consumers. In monopolistic markets, where a single firm holds significant control over the supply of a particular good or service, Agarwal observed that the firm has substantial power in determining prices. This price-setting ability often leads to higher prices for consumers due to the lack of competition, as the monopolist can produce at a level that maximizes profits rather than at the point of consumer welfare optimization. For instance, industries like public utilities (electricity, water supply) and some sectors in the pharmaceutical industry often exhibit monopolistic characteristics, where competition is limited or nonexistent.

Kumar and Rao (2020) In their study, examined the crucial role that infrastructure plays in mitigating price fluctuations within India's domestic trade. They emphasized that infrastructure development—specifically transportation networks, storage facilities, and communication systems—has a direct influence on the efficiency of domestic trade. According to the study, the cost of transportation is a significant factor contributing to price volatility, especially for perishable goods like fruits and vegetables. Poor road conditions, inadequate logistics networks, and inefficient supply chains often result in delayed deliveries and spoilage, thus driving up prices.

Patel and Iyer (2020) focused their research on the supply and demand dynamics within India's agricultural sector and their pivotal role in determining price fluctuations for essential commodities like grains, vegetables, and pulses. The study delves into how shifts in agricultural supply, driven by factors like weather conditions, crop yields, and farming practices, impact prices across India's markets. Similarly, fluctuations in demand, whether due to seasonal consumption patterns or

shifts in consumer preferences, play a vital role in shaping price trends for these basic commodities.

Mehta's (2019) study, the focus shifted to the psychological and behavioral factors that influence consumer purchasing decisions during periods of price instability. While much of the economic literature emphasizes the role of market forces in determining prices, Mehta (2019) delves into the subjective factors—such as perceptions of scarcity, loss aversion, and the anchoring effect—that can drive consumer behavior when prices are volatile. Mehta argued that consumers often do not react solely to objective price changes but also to their psychological interpretations of those price changes. For example, during periods of price instability, consumers tend to exhibit fear-based purchasing behavior, stockpiling goods when they perceive that prices might increase further. This panic buying behavior exacerbates price fluctuations by creating artificial demand spikes. Similarly, consumers' expectations of future prices can significantly influence their current purchasing decisions. If consumers expect prices to rise in the near future, they may purchase more of a commodity at present, thus pushing current prices even higher.

Theoretical Framework

The theoretical framework of this study is grounded in microeconomic principles, focusing on market structures, price determination, and consumer behavior within the context of India's domestic trade. The study draws on classical and modern economic theories to explore how market forces, infrastructure, and government interventions influence price fluctuations and consumer decision-making.

At the core of the framework is the theory of supply and demand, which forms the basis for understanding how price changes occur in response to shifts in the availability of goods (supply) and consumer preferences (demand). The study integrates the Law of Demand and Supply, emphasizing how variations in both sides of the market, such as poor harvests or changes in consumer behavior, impact the prices of essential commodities.

Additionally, the framework incorporates the theory of market structures, particularly focusing on monopolistic and oligopolistic markets. In monopolistic markets, where one firm dominates, prices are often determined by the firm's pricing strategies, which can lead to higher prices and reduced consumer welfare. In contrast, in oligopolistic markets, where a few large firms control the market, strategic pricing and competition can influence price stability. These market structures interact with consumer behavior theories, such as prospect theory, which explains how consumers make decisions under risk and uncertainty, particularly when prices fluctuate.

Price Determination in Microeconomics

Price fluctuations are primarily influenced by the interaction of supply and demand forces in a competitive market. In a perfectly competitive market, the price is determined by the equilibrium point where quantity demanded equals quantity supplied. However, real-world markets, especially in India, often deviate from this ideal due to factors such as:

• Market Imperfections: Monopolistic and oligopolistic markets where a few firms have price-setting power.

• Government Interventions: Price floors, subsidies, and tariffs designed to protect domestic producers or control inflation.

Consumer Behavior

Consumer behavior, as defined by microeconomic theory, involves understanding how individuals make decisions about the allocation of their limited resources to purchase goods and services. In the context of price fluctuations, key theories include:

• Income Effect: A change in the price of a good can affect consumers' purchasing power, influencing their demand for that good.

• Substitution Effect: When the price of a good rises, consumers may substitute it with a cheaper

alternative.

• Elasticity of Demand: The responsiveness of consumer demand to changes in price, which varies depending on the good's necessity and the availability of substitutes.

Methodology

The methodology of this study employs a mixed-methods approach combining both quantitative and qualitative research techniques to comprehensively analyze the dynamics of price fluctuations and consumer behavior in India's domestic trade. The study primarily relies on secondary data sourced from government reports, industry publications, market surveys, and databases that provide insights into price trends, supply and demand dynamics, and infrastructural developments within various sectors of the Indian economy. These datasets include information on agricultural output, transportation costs, and consumer price indices, which will be analyzed through statistical tools such as regression analysis to identify the relationship between infrastructure, market structures, and price fluctuations.

Additionally, the study integrates qualitative methods, including case studies and interviews with industry experts, policymakers, and market participants (e.g., farmers, traders, and consumers). These qualitative insights help contextualize the quantitative data by providing a deeper understanding of the psychological and behavioral factors influencing consumer purchasing decisions, as well as the real-world challenges faced in managing price volatility.

Data Collection

The paper employs a combination of secondary data sources, including:

• Government Reports: From organizations like the Ministry of Commerce and Industry, Reserve Bank of India, and agricultural departments.

• Market Surveys: Conducted across multiple Indian states, focusing on rural and urban consumers in sectors such as agriculture, retail, and manufacturing.

• Price Data: Collected from major wholesale markets across India, focusing on essential commodities like grains, vegetables, and fuel.

Analytical Approach

To analyze the relationship between price fluctuations and consumer behavior, we apply:

• Econometric Models: To estimate the elasticity of demand and assess how price changes affect consumption patterns.

• Regression Analysis: To examine how factors like income, regional variations, and government policies impact price dynamics.

Supply-Side Factors

• Production Costs: Fluctuations in production costs, including labor, raw materials, and transportation, directly affect prices. For instance, during a drought, the price of agricultural goods often rises due to lower supply.

• Market Structure: In sectors dominated by a few firms (oligopoly), price fluctuations tend to be more volatile and less predictable, whereas competitive markets see smaller price changes.

Demand-Side Factors

• Consumer Preferences: Changes in consumer preferences, often influenced by trends or income levels, can lead to price volatility in certain sectors. For example, increasing demand for organic produce has led to price spikes in some urban markets.

• Income Distribution: As income levels fluctuate, so does the purchasing power of consumers, leading to changes in the demand for various goods and services.

Government Policies

Government policies such as price controls, subsidies, and minimum support prices (MSP) significantly affect price dynamics. For example, MSP in agriculture ensures farmers receive a minimum price for crops, thus reducing price volatility in the agricultural sector.

Infrastructure and Logistics

Infrastructure inefficiencies, such as poor road networks, unreliable supply chains, and inadequate

storage facilities, increase the cost of transportation and storage, leading to higher prices. Regional disparities in infrastructure further exacerbate price differences between urban and rural markets.

Behavioral Responses to Price Changes

Consumers in India exhibit diverse responses to price changes based on their income levels and regional disparities. Lower-income consumers are particularly sensitive to price fluctuations, often shifting to cheaper substitutes or reducing consumption during price hikes.

Impact of Inflation

Inflation, a common feature in India's economy, affects consumers' purchasing power. When inflation leads to widespread price increases, particularly in food and essential goods, consumers may shift consumption patterns to reflect changes in affordability.

Regional Variations in Consumer Behavior

Consumer behavior is not uniform across India. Urban consumers in cities like Delhi or Mumbai may have more flexibility in their purchasing decisions due to higher incomes, while rural consumers in states like Uttar Pradesh or Bihar are more price-sensitive and may exhibit different purchasing patterns during periods of price instability.

Agricultural Markets

Agricultural prices in India are highly volatile due to supply-side factors such as weather conditions, crop yields, and government intervention policies like MSP. For instance, the price of onions in India has fluctuated dramatically in the past decade due to supply shortages and price manipulation.

Fuel Prices

Fuel prices are another significant driver of price fluctuations in India. As a net importer of crude oil, India's domestic fuel prices are highly sensitive to global oil price changes. These fluctuations impact transportation costs, which, in turn, affect the prices of a wide range of goods.

Improving Price Stabilization

The paper suggests that government interventions, such as strategic reserves and more effective MSP implementation, can help stabilize prices in critical sectors like agriculture.

Infrastructure Development

Enhancing infrastructure, particularly in rural areas, can reduce the cost of transportation and logistics, helping to mitigate price volatility.

Conclusion

Price fluctuations and consumer behavior are central to understanding domestic trade patterns in India. By examining both supply-side and demand-side factors, as well as the role of government policies and infrastructure, this paper sheds light on the complex dynamics at play.

The findings underscore the importance of developing policies that address price instability and promote consumer welfare, particularly in vulnerable sectors like agriculture and essential goods.

References

1. Agarwal, R. (2019). Market structures and domestic trade: A case study of India. Journal of Indian Economics, 45(2), 23-34. https://doi.org/10.1080/0023612X.2019.1585021

2. Kumar, A., & Rao, S. (2020). The role of infrastructure in shaping trade dynamics in India. Journal of South Asian Economics, 28(3), 49-67. https://doi.org/10.1080/07355071.2020.1749912

3. Mehta, P. (2019). Consumer behavior and trade: A microeconomic perspective. Indian Journal of Consumer Research, 19(2), 95-108.

4. Patel, R., & Iyer, M. (2020). Price formation in Indian agricultural markets: The role of supply and demand. Agricultural Economics Review, 47(1), 54-69.

5. Rao, S. K., & Nair, K. (2021). The GST impact on domestic trade in India: A microeconomic approach. Indian Business Review, 6(2), 34-42. https://doi.org/10.1155/2021/2921726

6. Sharma, R., & Singh, J. (2018). Trade liberalization and domestic market changes in India. Indian Journal of International Economics, 14(3), 63-77.

CHHAVI National Journal of Higher Education (ISSN : 2319-9679) PEER REVIEWED

OUR ADVISORY BOARD

DR. CHANCHAL B.
Texas U S A

PROF. SHAD AHMAD KHAN
Sultanate of Oman

DR. BIMLA RAI
Thimphu Bhutan

SANDEEP JOSHI
N.C.T.E.,New Delhi

PROF. (DR.) SAROJ GARG
Educationist, Udaipur

DR. SANTOSH SHARMA
Educationist, Jodhpur

DR. DINESH CHAND
U.G.C., New Delhi

DR. REKHA LALWANI
Educationist, Jhalawar

OUR EDITORIAL BOARD

DR. OM PRAKASH MEHRARA
Educationist, Hanumangarh

PROF (DR.) BABITA JAIN
Educationist, Bikaner

PROF. (DR.) BHAGIRATH BISHNOI
Educationist, Jalore

DR. NIRANJAN K. BOHRA
Educationist, Jodhpur

DR. PAWAN K. GUPTA
Director & Educationist, Jaipur

DR. MAHESH C. GURJAR
Educationist, Kotputli

DR. SAMINA
Educationist, Jodhpur

PROF. (DR.) SUNITA
Educationist, Jalore

DR. SUBHASH CHANDRA SAINI
Principal & Educationist, Dundlod, Jhunjhunu

DR. RITU BAIRAGI
Educationist, Udaipur

DR. DEEPIKA SHARMA
Educationist, Jaipur

DR. ASHA SHARMA
Educationist, Jodhpur

DR. GAYATRI BAIRWA
Educationist, Jaipur

Dr. Kashmir Singh Khunda
Educationist, Amritsar, Punjab

DR. JAKIR HUSAIN ANSARI
Educationist, Hindoli, Bundi

DR. PRATIMA GUPTA
Educationist, Jaipur

DR. BHARTI SANKHLA
Educationist, Bikaner

DR. ALPANA SHARMA
Educationist, Bikaner

DR. VIMLA KHATRI
Educationist, Bikaner

DR. SHWETA GUPTA
Educationist, Jaipur

ACADEMIC EDITOR

PROF. SHREESH PAL SINGH
Chief Academic Editor

PROF. (DR.) RAJENDRA K. SHRIMALI
Chief Editor

DR. PRIYANKA SHRIMALI
Associate Editor

ABOUT THE JOURNAL

CHHAVI National Journal of Higher Education is a reviewed periodical published in January, April, July and October in every year by the Shubham Education, Research & Information Centre, Bikaner, Raj.

Journal registered by National Institute of Science Communication and Information resources, New Delhi's Letter NSL/ISSN/INF/2012/2816 Dated December 04, 2012 and assigned ISSN (Print) 2319-9679. Bilingual journal's broad subject is Psychology, Philosophy and Sociology is the special reference of focus subject is Education.

Journal Title	:	CHHAVI : National Journal of Higher Education
Publication Language	:	Bilingual Hindi & English both.
Publication Frequency	:	Quarterly
Publication Nature	:	Print & Online
ISSN	:	2319-9679
Broad Subject	:	Psychology, Philosophy, Sociology
Focus Subject	:	Education
Published by	:	Shubham Educational, Research and Information Centre
E-mail	:	shrimalidrrajendra@gmail.com
website	:	www.chhavinjhe.in
Contact No.	:	9414742973, 9413471252, 8209618803

GUIDELINES FOR CONTRIBUTORS

Membership registration fees can be sent in the shape of at per cheque / cash or online transfer. Cheque shall be prepared in favour of Shubham Shrimali and Online Deposit Phone-Pay Number. - 9352628093.

Name of Bank	:	State Bank of India
Branch	:	Dauji Road, Bikaner
Account Name	:	Shubham Shrimali
Account No.	:	37051542804
IFSC Code	:	SBIN0031447
MICR Code	:	334002039
PIN	:	31447

Youth Publisher

Youth Editor

The subscription rates are as under :

Single Copy	₹ 350
Annual Subscription	₹ 1000

Communication Address : PROF. (DR.) RAJENDRA KUMAR SHRIMALI
Behind Karni Mata Temple, Outside Jassusar Gate, Bikaner-334004 (Raj.)
Mobile: 9414742973, 9413471252, 8209618803
Google Scholar Profile : https://scholar.google.com/citations?user=kNxjU_8AAAAJ&hl=en
Social Science Research Network ID : 4556183

Print at : Rajasthan Computger & Printers, Bikaner M. : 9352999951